विश्व कथा-साहित्य
• चीन

लू शुन

पागल की डायरी



विश्व कथा साहित्य

लू शुन

पागल की डायरी

इस संकलन में चीनी साहित्य का विश्व-भर में चर्चित लघु-उपन्यास और पांच अमर कथाएं दी गई हैं

हिन्द पॉकेट बुक्स

विश्व कथा साहित्य

पागल की डायरी	:	लू शुन
सम्पादन	:	डॉ. नफ़ीस आफ़रीदी
कला-पक्ष	:	धर्मवीर

प्रथम संस्करण : 1998
प्रकाशक : हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड
दिलशाद गार्डन, जी.टी. रोड, दिल्ली-110 095
लेज़र टाइपसेटिंग : विकास कम्प्यूटर, शाहदरा, दिल्ली-110 032
मुद्रक : विकास ऑफसेट, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110 032

PAGAL KI DIARY (Fiction) LU SUN

ISBN 81-216-0783-3



लू शुन

थाओ य्वान-छिङ का रेखांकन

परिचय

लू शुन दुनिया के कथाकारों में गोर्की और प्रेमचंद जैसा ही जाना-माना और प्रतिष्ठित नाम है। भारत में भी हिन्दी तथा सभी भारतीय भाषाओं के साहित्य के पाठकों में लू शुन समान रूप से चर्चित हैं।

चीन में आधुनिक सांस्कृतिक क्रांति हुई। उस क्रांति के महानायक लू शुन ही थे। वह बहुत बड़े विचारक भी थे। उनके चिंतन पक्ष का सभी लोहा मानते थे। राजनीति में भी उनका अच्छा ख़ासा दख़ल था। राजनीति की समीक्षा में उन जैसा माहिर दूसरा नहीं था। आधुनिक चीनी साहित्य के तो जन्मदाता ही वही थे। इससे बढ़ कर सम्मानजनक बात और क्या होगी?

सन् 1881 में जन्मे लू शुन बहुत ग़रीब घर से थे। बड़े कठिन दिन गुज़रे। बचपन से ही परेशानियां पीछा नहीं छोड़ती थीं। इसलिए पढ़ भी पाए, तो अपने ही बूते पर, लेकिन पढ़े तो ख़ूब ही पढ़े। सन् 1917 में अपने क़स्बे के स्कूल में प्रिंसिपल बन गए। आगे जाकर बीजिंग की नेशनल यूनीवर्सिटी में चीनी के प्रोफ़ेसर भी बने। सन् 1926 में अमय यूनीवर्सिटी में डीन की कुर्सी संभाली। वह साहित्य और समाज के लिए एक अनिवार्य नाम थे।

शुरू के जीवन-काल में वह जन समर्थक थे, इसीलिए जनवादी-क्रांतिकारी के रूप में उभरे। बाद में इसी धुन ने उन्हें

साम्यवादी बना दिया। चीन की एक बड़ी नामी संस्था 'आल चाइना लीग ऑफ़ लेफ़्टविंग राइटर्स' के वह सर्वेसर्वा रहे। अंधविश्वास, रूढ़िवाद, भ्रष्टाचार और ग़ैरबराबरी को उन्होंने कभी पसंद नहीं किया। उसके ख़िलाफ़ हमेशा लड़ते रहे। साहित्य में भी लड़ाई जारी रही। उन्होंने साहित्य को संघर्ष का हथियार बनाया। उनकी रचनाओं ने व्यापक चेतना पैदा की।

सन् 1918 में 'नया नौजवान' में लू शुन की अमर कथा कृति 'पागल की डायरी' छपी। इस कहानी ने उनका शुरू में ही नाम प्रतिष्ठित करवा दिया। यह एक तरह से राजतंत्र के ख़िलाफ़ जंग का ऐलान था। चीनी साहित्य में यह सबसे पहली छोटी कहानी थी। उसके बाद लिखा लघु-उपन्यास 'आ Q की सच्ची कहानी' और फिर 'नए साल की बलि' जैसी कहानी। ये रचनाएं पुराने सड़े-गले समाज को चुनौतियां थीं। इनमें लोगों के लिए अंधेरे से बाहर आने की प्रेरणा थी। उन्होंने नंगी सच्चाई को सामने लाकर शोषकों का पर्दाफ़ाश कर दिया था।

उनके तीन कहानी संग्रह 'ललकार', 'विचरण' और 'पुरानी कहानियां नए रूप में' आए। 'ललकार' कहानी संग्रह की भूमिका उनके अपने और चीनी के शेष मौलिक कथा-साहित्य को समझने की क्षमता प्रदान करती है।

चीन का चेकियांग प्रांत है, जहां सन् 1936 में इस क्रांतिचेता साहित्यकार ने सदा के लिए अपनी आंखें बंद कर लीं।

—डॉ. नफ़ीस आफ़रीदी

कथा-क्रम

पागल की डायरी

दो भाई थे। उनके नाम नहीं बताऊंगा। वे मेरे स्कूल के दिनों के साथी थे। दोनों से अच्छा मेल-मिलाप था, लेकिन कई बरस तक मुलाक़ात न हो सकी और सिलसिला टूट गया। कुछ महीने पहले सुना था कि उनमें से एक बहुत बीमार है। मैं अपने गांव लौट रहा था, सोचा, रास्ते में उनके यहां भी होता चलूं। उनके घर गया, तो एक ही भाई से मुलाक़ात हुई। उसने बताया कि छोटा भाई बीमार था।

मित्र ने कहा, "तुम्हारे दिल में कितना प्यार है। हमारा ख्याल कर इतनी दूर से मिलने आए हो। अब छोटे भाई की तबीयत ठीक है। उसे सरकारी नौकरी मिल गई है, वहीं गया है।" बड़े भाई ने हंसते-हंसते दो मोटी-मोटी जिल्दों में लिखी डायरी मुझे दिखाई और बोला कि यदि कोई इस डायरी को पढ़ ले, तो भाई की बीमारी का राज़ समझ जाएगा और अपने पुराने दोस्त को दिखा देने में हर्ज भी क्या है? मैं डायरी ले आया और उसे पढ़ डाला। समझ गया कि बेचारा युवक विचित्र आतंक और मानसिक यातना से पीड़ित था। लिखावट बहुत उलझी-उलझी और कटी-फटी थी। जगह-जगह स्याही और लिखावट के अंतर से अनुमान लग सकता था कि ये जब-तब आगे-पीछे लिखी गई बातें होंगी। कुछ बातें संबद्ध भी लगती थीं और समझ में आ जाती थीं। चिकित्सा-विज्ञान में खोज की दृष्टि से उपयोगी होने वाले कुछ पृष्ठों को मैंने नकल कर लिया। डायरी की एक भी बेकार की बात को मैंने बदला नहीं। बस, नाम बदल दिए, जबकि दूर देहात के उन लोगों को जानता भी कौन है। शीर्षक लेखक का ही दिया हुआ है। यह दिमाग़ ठिकाने होने पर ही दिया होगा। मैंने उसे नहीं बदला।

एक

आज रात चांद खूब उजला है।

तीस बरस हो गए, चांद को नहीं देख पाया। इसलिए आज चांदनी में मन में उत्साह उमड़ रहा है। आज महसूस कर रहा हूं कि बीते तीस बरस अंधकार में ही बिता दिए; परंतु अब बहुत चौकन्ना रहना होगा। अवश्य कोई बात है। वरना चाओ परिवार का कुत्ता भला दो बार मेरी ओर क्यों घूरता? हां, समझता हूं, मेरा संदेह बेवजह नहीं है।

दो

आज अंधेरी रात है। चांद का कहीं पता नहीं। लक्षण अच्छे नहीं हैं। आज सुबह बाहर गया, तो बहुत होशियार था। चाओ साहब ने मेरी ओर ऐसे देखा, जैसे मुझे देखकर डर गए हों, मानो मेरी हत्या करना चाहते हों। सात-आठ दूसरे लोग भी थे। एक-दूसरे से फुसफुसाकर मेरी बातें कर रहे थे और मेरी नज़र से बचने की कोशिश कर रहे थे। जितने लोग मिले सबका यही हाल था। उनमें जो सबसे डरावना था, मुझे देखते ही दांत निकालकर हंसने लगा। मैं सिर से पैर तक कांप गया। समझ गया, इन लोगों ने सारी तैयारी कर ली है।

मैं डरा नहीं, अपनी राह चलता रहा। कुछ बच्चे आगे-आगे चल रहे थे। वे भी मेरी ही बातें कर रहे थे। उनकी नज़रें भी चाओ साहब की ही तरह थीं और चेहरे डर से पीले पड़ गए थे। सोच रहा था, मैंने इन लड़कों का क्या बिगाड़ा है? ये क्यों मुझसे नाराज़ हैं? रहा नहीं गया, तो मैं पूछ बैठा, "क्यों, क्या बात है?" लेकिन तब वे सब भाग गए।

कुछ समझ नहीं आता कि चाओ साहब से मेरा क्या झगड़ा है? राह चलते लोगों का मैंने कब क्या बिगाड़ा है? बस, इतना याद है कि बीस बरस पहले कू च्यू[1] साहब की बरसों पुरानी डायरी पर मेरा पांव पड़ गया था और

1. कू च्यू का अर्थ है 'प्राचीन काल।' यहां चीन में सामंती उत्पीड़न के दीर्घकालीन इतिहास की ओर संकेत है।

कू साहब बहुत नाराज हो गए थे, पर कू का चाओ से क्या मतलब? एक-दूसरे को जानते भी नहीं। हो सकता है, चाओ ने इसके बारे में किसी से सुन लिया हो और मुझसे उसका बदला लेने की ठान ली हो। वह राह चलते लोगों को मेरे खिलाफ़ भड़काते रहते हैं; लेकिन इन बच्चों को इससे क्या मतलब? ये लोग तो तब पैदा भी नहीं हुए थे। ये मुझे ऐसे घूर-घूर कर क्यों देख रहे हैं? मानो डरे हुए हों मेरा खून कर देने की ताक में हों। बहुत घबराहट होती है। क्या करूं? अजीब परेशानी है। मैं समझता हूं। इन लोगों ने यह सब ज़रूर अपने मां-बाप से सीखा होगा!

तीन

रात में नींद नहीं आती। बिना ठीक तरह सोचे कोई भी बात समझ में नहीं आ सकती। इन लोगों को देखो, कई लोगों को मजिस्ट्रेट कठघरे में बंद करवा चुका है; बहुतों की बीवियों को सरकारी अमले के लोग छीन ले गए हैं; कई के मां-बाप साहूकारों से परेशान होकर गले में फांसी लगाकर आत्महत्या कर चुके, पर सब बातों को याद करके भी इन लोगों की आंखों में कभी इतना खून नहीं उतरा होगा, इन्हें कभी इतना गुस्सा नहीं आया होगा, जितना कल देखने को मिला।

उस औरत को क्या कहूं? कल गली में अपने लड़के को पीट कर चीख रही थी, "बदमाश कहीं का! तेरी खाल उधेड़ दूंगी। तेरी बोटी-बोटी कर डालूंगी। तूने मेरा कलेजा जला रखा है!" वह बार-बार मेरी ओर देखने लगती। मैं कांप उठा। बड़ी घबराहट हुई। क्रूर चेहरे, लंबे-लंबे दांतों वाले लोग हंसने लगे। बुजुर्ग छन फौरन आगे बढ़ आया और मुझे पकड़कर घर ले आया।

छन मुझे घर ले आया। सब लोग ऐसे बन गए, जैसे पहचानते ही न हों। मैंने उनकी आंखें पहचानीं। उनकी नज़रों में भी गली के लोगों वाली बात थी। मैं अध्ययन-कक्ष में आ गया, तो उन्होंने झट दरवाज़ा बंद कर दिया और सांकल लगा दी, जैसे मुर्ग़ी या बत्तख को दरबे में बंद कर दिया गया हो। मैं और परेशान हो गया।

कुछ दिन पहले की बात है। शिशु-भेड़िया गांव से हमारा एक असामी फसल के चौपट होने की खबर देने आया था। उसने मेरे बड़े भाई को बताया कि गांव के लोगों ने मिलकर गांव के एक बदनाम बहादुर गुंडे को घेर लिया और पीट-पीट कर उसका काम तमाम कर दिया। कुछ लोगों ने उसका सीना फाड़कर दिल और कलेजा निकाल लिया, फिर तेल में तला और बांटकर खा गए कि उनकी भी हिम्मत बढ़ जाए। मुझसे रहा नहीं गया और मैं बोल पड़ा। भैया और असामी दोनों मुझे घूरने लगे। बिल्कुल ऐसे ही घूर रहे थे, जैसे आज सड़क पर लोगों की नज़रें।

सब सोचकर सिर से पैर तक सारा शरीर सिहर उठता है।

ये आदमख़ोर हैं, ये मुझे भी खा सकते हैं।

याद आया, वह औरत कह रही थी, "तेरी बोटी-बोटी कर डालूंगी!" क्रूर चेहरों पर लंबे दांत निकाले लोग हंस रहे थे, और उस असामी ने जो कहानी सुनाई,··· ये सब गोपनीय संकेत हैं। इन लोगों की बातों में कितना ज़हर भरा है। इनकी हंसी खंजर की धार की तरह काटती है। इनके ये लंबे-लंबे सफेद दांत आदमियों के हाड़-मांस चबा-चबा कर चमक गए हैं। ये सब आदमखोर हैं।

मैं जानता हूं, यद्यपि मैं कोई बुरा आदमी नहीं, पर जब से कू साहब की डायरी पर मेरा पैर पड़ा है, लोग मेरे पीछे लग गए हैं। इन लोगों के मन में ऐसी गांठ पड़ गई है कि मैं कुछ कर ही नहीं सकता। ये किसी से एक बार बिगड़ जाते हैं, तो उसे बदमाश समझ लेते हैं। अच्छी तरह याद है, बड़े भाई मुझे निबंध लिखना सिखाया करते थे। कोई आदमी कितना ही भला रहा हो, यदि मैं उसकी बुराई दिखा देता, तो उन्हें बहुत पसंद आता था। साथ ही अगर मैं किसी के दोषों पर पर्दा डाल देता, तो कह बैठते, "बहुत अच्छे! यह तुम्हारी नई सूझ है।" इन लोगों के मन की थाह कैसे पा सकता हूं, विशेषकर जब ये किसी को खा जाने की बात सोच रहे हों।

बहुत गहराई से विचार किए बिना कुछ समझ पाना मुश्किल है। याद पड़ता है कि आदिम जाति के लोग अक्सर नर-मांस खाते थे, पर बिल्कुल ठीक याद नहीं पड़ रहा। इस बारे में इतिहास की पुस्तकों में भी खोज करने का प्रयत्न किया, लेकिन कहीं क्रमबद्ध इतिहास नहीं मिला। 'सद्‌गुण और सदाचार' यही शब्द सभी पृष्ठों पर मिलते हैं। नींद नहीं आ रही थी, इसलिए

बहुत ध्यान लगाकर आधी रात तक पढ़ता रहा। यहां-वहां वास्तविक अभिप्राय समझ में आने लगा। सारी किताब में सब जगह एक ही बात थी, "मनुष्य को खा जाओ।"

पुस्तक में लिखी ये तमाम बातें, उस असामी की तमाम बातें, मेरी ओर कैसे घूर रही हैं, गूढ़ मुस्कराहट के साथ। मैं भी तो मनुष्य हूं और ये मुझे खा जाना चाहते हैं।

चार

सु बह कुछ देर से चुपचाप बैठा था। छन खाना लेकर कमरे में आया। एक कटोरे में सब्ज़ी थी, दूसरे में भाप से पकाई हुई मछली। मछली की आंखें पथराई-सी सफेद थीं, मुंह खुला था, जैसे कोई भूखा आदमख़ोर मुंह खोले हुए हो। मैं खाने लगा। निवाला निगलता जा रहा था। नहीं मालूम मछली खा रहा था, या नर-मांस। आखिर सब उगल डाला।

मैंने छन से कहा, "छन दा, भैया से कहो, इस कोठरी में मेरा दम घुटा जा रहा है, ज़रा आंगन में टहलूंगा।" छन चुपचाप चला गया। फौरन लौटकर आया और उसने दरवाज़ा खोल दिया।

मैं कोठरी में ही बैठा रहा, उठा नहीं। सोच रहा था, ये अब क्या करेंगे? यह तो जानता था कि मुझे हाथ से निकलने नहीं देंगे। इतना तो तय था। भैया आहिस्ता-आहिस्ता क़दम रखते एक बुज़ुर्ग को साथ लिए आ पहुंचे। बुड्ढे की खून की प्यासी आंखों में छुरी की सी चमक थी। वह मुझसे आंखें नहीं मिलाना चाहता था। कहीं मैं ताड़ न लूं, इसलिए गर्दन झुकाए था। चश्मे के भीतर कनखियों से मेरी ओर देख लेता था।

"आज तुम्हारी तबीयत बहुत अच्छी लग रही है!" भैया बोले।

मैंने हामी में सिर हिलाया।

"तुम्हें दिखाने के लिए हो साहब को बुलाया है।" भैया ने कहा।

"बहुत अच्छा," मैंने कहा, पर समझ गया कि यह बुड्ढा वास्तव में एक जल्लाद है, जो हकीम बनकर आया है। मेरी नब्ज़ देखने के बहाने वह मुझे टटोलकर मेरे मांस का अंदाज़ा लगा रहा था। इस सेवा के बदले उसे भी मेरे मांस का हिस्सा पाने की आशा थी। इस पर भी मैं डरा नहीं। मैं

आदमख़ोर नहीं हूं, पर उन लोगों से अधिक मुझमें कुछ है। मैंने अपनी दोनों कलाइयां आगे कर दीं, यह सोचकर कि देखूं, क्या करता है। बुड्ढा चौकी पर बैठ गया, आंखें मूंदे मेरी नब्ज़ देखता रहा। कुछ देर सोच में डूबा रहा, फिर अपनी धूर्त आंखें खोलकर बोला, "अपने विचारों को भटकने मत दो, चिंता बिल्कुल मत करो। कुछ दिन पूरा आराम करो। चैन से रहो, तुम्हारी सेहत बिल्कुल ठीक हो जाएगी।"

अपने विचारों को भटकने मत दो! बिल्कुल चिंता मत करो! कुछ दिन पूरा आराम करो! चैन से रहो! हां, जब मैं खूब मोटा हो जाऊंगा, तो उन्हें खूब मांस मिलेगा, पर मुझे इससे क्या मिलेगा? यह क्या सेहत का ठीक होना है? यह इन सब आदमखोरों का नरमांस के लिए लोभ और साथ ही अच्छेपन का दिखावा है। कायरता के कारण ये तुरंत कार्यवाही का साहस नहीं कर पाते। यह देखकर हंसी के मारे पेट में बल पड़ने लगते हैं। मेरी हंसी रुक न सकी और मैं ठहाका लगाकर हंस पड़ा। बहुत मज़ा आया। मैं जानता था इस हंसी में निडरता और सच्चाई छिपी है। भैया और बूढ़े हकीम के चेहरे पीले पड़ गए। वे लोग मेरी निडरता और सच्चाई देखकर डर गए थे।

मैं निडर हूं, साहसी हूं, इसीलिए तो वे मुझे खा जाने के लिए और अधिक व्याकुल हैं, ताकि मेरा मज़बूत कलेजा खाकर उनका हौसला और बढ़ सके। बूढ़ा हकीम उठकर चल दिया। जाते-जाते भैया के कान में कहता गया, "इसे अभी खाना है।" भैया ने सिर झुकाकर 'हां' कहा। अब समझ में आया। मांस रहस्य खुल गया। मन को धक्का तो लगा, पर यह तो होना ही था। मुझे मालूम ही था—मेरा अपना ही भाई मुझे खाने की साज़िश में शामिल है।

यह आदमख़ोर मेरा अपना ही बड़ा भाई है। मैं एक आदमख़ोर का छोटा भाई हूं। मुझे दूसरे लोग खा जाएंगे, पर फिर भी मैं एक आदमख़ोर का छोटा भाई हूं।

पांच

कुछ दिनों से दूसरी ही बात मन में आ रही है, हो सकता है हकीम के भेस में वह बूढ़ा जल्लाद न हो, हकीम ही हो, अगर ऐसा है, तो भी वह आदमखोर तो है। वैद्यों के पुरखे ली शीचन[1] की जड़ी-बूटियों की किताब में स्पष्ट लिखा है कि नर-मांस को उबालकर खाया जा सकता है, अतः वह वैद्य आदमखोर नहीं तो और क्या है?

बड़े भाई का क्या कहना, वे तो आदमख़ोर हैं ही। जब मुझे पढ़ाते थे, तो अपने मुंह से कहते थे, "लोग अपने बेटों को एक-दूसरे से बदलकर उन्हें खा जाते हैं।" एक बार एक बदमाश के लिए उन्होंने कहा था कि उसे मार डालने से क्या होगा, "उसका गोश्त खा लें और उसकी खाल का बिछौना बना लें!"[2] तब मेरी कच्ची उम्र थी। सुनकर दिल देर तक धड़कता रहा। जब शिशु-भेड़िया गांव के असामी ने एक बदमाश का कलेजा निकालकर खा जाने की बात कही, तब भी भैया को कुछ भी बुरा नहीं लगा था। सुनकर चुपचाप सिर हिलाते रहे, जैसे ठीक हुआ हो। मुझसे छिपा क्या है, वे पहले की ही तरह खूंख्वार हैं। क्योंकि "बेटों को एक-दूसरे से बदलकर उन्हें खा जाना" संभव है, तो फिर हर चीज़ को बदला जा सकता है, हर किसी को खाया जा सकता है। उन दिनों भैया जब ऐसी बातें समझाते थे, तो मैं सुन लेता था, सोचता नहीं था, पर अब खूब समझ में आता है कि ऐसी बातें कहते समय उनके मुंह में नर-मांस का स्वाद भर आता होगा और उनका मन मनुष्य को खाने के लिए बेचैन हो उठता होगा।

छः

घना अंधेरा। पता नहीं चलता रात है या दिन। चाओ परिवार का कुत्ता फिर भौंक रहा है। शेर की तरह खूंख्वार, खरगोश की तरह कातर, लोमड़ी की तरह चालाक···

सात

मैं उन लोगों को अच्छी तरह जानता हूं। किसी को एकदम मार डालने को ये तैयार नहीं हैं। ऐसा करने का साहस इन लोगों में नहीं है।

1. **एक प्रसिद्ध चीनी औषधि-वैज्ञानिक (1518-1593) जिन्होंने 'पनछाओकाङ्मू' नामक औषधि-ग्रंथ की रचना की थी।**
2. **एक प्राचीन चीनी ग्रंथ 'च्वोच्वान' से उद्धृत।**

नतीजे के डर से इनकी जान निकलती है, इसलिए ये लोग साजिश करके जाल बिछा रहे हैं, मुझे आत्महत्या कर लेने के लिए मजबूर कर रहे हैं। कुछ दिनों से गली के पुरुषों और स्त्रियों का व्यवहार देख रहा हूं और बड़े भाई का रंग-ढंग भी। मैं सब समझता हूं। ये लोग तो चाहते हैं कि कोई घर की छत से फंदा लटकाकर इनके लिए मर जाए। ख़ून के लिए कोई इन पर उंगली न उठा सके और ये लोग जी भरकर खाएं। ये इसी बात की कल्पना करके ख़ुशी से फूले नहीं समा रहे हैं। चाहे कोई आदमी चिंता और संकट के डर से सूख-सूख कर आत्महत्या कर ले और उसके शरीर में रक्त-मांस कुछ भी न रहे, ये उसे भी खाने के लिए लालायित रहते हैं।

ये केवल मुर्दा मांस खाते हैं। याद आता है, एक घिनौने जानवर के बारे में पढ़ा था। उसकी आंखें बड़ी डरावनी होती हैं। हां, उसे लकड़बग्घा कहते हैं। लकड़बग्घा प्रायः मुरदा मांस खाता है। मोटी से मोटी हड्डी दांतों से चबाकर निगल जाता है। ख्याल आते ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं। लकड़बग्घे की जाति भेड़िये से मिलती है और भेड़िया कुत्ते की जाति का होता है। उस दिन चाओ परिवार का कुत्ता बार-बार मेरी ओर देख रहा था। मालूम होता था वह कुत्ता भी साज़िश में शामिल है। बूढ़ा हकीम नज़रें झुकाए था, पर मैं ताड़ गया।

सबसे अधिक दुख मुझे अपने भाई के लिए था। वह भी तो आदमी है, उसे डर क्यों नहीं लगता? मुझे खा डालने के लिए वह भी दूसरों के साथ क्यों मिल गया है? शायद जो होता चला आया है, उसे करते जाने में लोग अपराध और दोष नहीं समझते, या मेरा भाई जानता है कि यह अपराध है, पाप है, पर उसने पाप करने के लिए अपना दिल पत्थर-जैसा बना लिया है? सबसे पहले मैं इसी आदमख़ोर का पर्दाफ़ाश करूंगा। सबसे पहले इसी को पाप से रोकूंगा।

आठ

वास्तव में यह तर्क बहुत पहले मान लिया जाना चाहिए था। अचानक कोई भीतर आ गया। यही कोई बीस बरस का युवक होगा। उसका चेहरा ठीक-ठाक नहीं देख सका, उस पर मुस्कराहट खेल रही

थी, लेकिन जब गर्दन झुकाकर मेरा उसने अभिवादन किया, तो उसकी मुस्कराहट बनावटी लगी। मैंने पूछ ही लिया, "बताओ, नर-मांस खाना सही है?"

वह मुस्कराता रहा और बोला, "क्या कहीं अकाल पड़ा है, नर-मांस कोई क्यों खाएगा?"

मैं समझ गया, यह भी उन्हीं के दल का था। मैंने साहस किया और फिर कहा, "मेरी बात का उत्तर दो।"

"आखिर इस प्रश्न का मतलब क्या है?··· क्या मज़ाक कर रहे हो?··· कितना सुहाना मौसम है!"

"हां, मौसम अच्छा है, चांदनी बहुत उजली है, पर तुम मेरी बात का जवाब दो, क्या यह सही है?"

वह कुछ परेशान हो गया और बोला, "नहीं।"

"नहीं···? तो फिर लोग ऐसा क्यों करते हैं?"

"तुम्हारा मतलब क्या है?"

"मेरा मतलब···? शिशु-भेड़िया गांव में लोग नर-मांस खा रहे हैं। तुम ग्रंथ उठाकर देख लो। सब जगह यही लिखा है, ताज़ा लाल-लाल अक्षरों में।"

वह चुप रह गया। उसका चेहरा पीला पड़ गया। मेरी ओर घूरकर बोला, "होगा, हमेशा से ही होता आया है।"

"हमेशा से होता आया है, क्या इसीलिए उचित है?"

"मैं इस बहस में नहीं पड़ना चाहता। तुम्हें भी इन बेकार के झगड़ों में नहीं पड़ना चाहिए और ऐसी बातें नहीं करनी चाहिए।"

मैं फौरन उछल पड़ा और आंखें फाड़कर इधर-उधर देखने लगा। वह आदमी ग़ायब हो गया था। मैं पसीना-पसीना हो रहा था। युवक की उम्र मेरे भाई से बहुत कम थी, लेकिन वह भी उन लोगों के साथ था। उसने अपने मां-बाप से सब सीख लिया है, ईश्वर जाने, अपने बेटे को भी सिखा दिया होगा! तभी तो ये ज़रा-ज़रा से छोकरे मुझे यूं घूर-घूर कर देखते हैं।

नौ

दूसरों को खा लेने का लालच, लेकिन स्वयं भोजन बन जाने का भय। सबको दूसरों पर शक है, सब दूसरों से आशंकित हैं...

यदि इस परस्पर डर से लोगों को मुक्ति मिल सके, तो वे बिना शंका के काम कर सकते हैं, घूम-फिर सकते हैं, खा-पी सकते हैं, चैन की नींद सो सकते हैं। बस, मन से वही एक विचार निकाल देने की जरूरत है, परंतु लोग यह कर नहीं पाते और बाप-बेटे, पति-पत्नी, भाई-भाई, मित्र, गुरु-शिष्य, एक-दूसरे के जानी दुश्मन और यहां तक कि अजनबी भी एक-दूसरे को खा जाने की साज़िश में शामिल हैं, दूसरों को भी इसमें खींच रहे हैं। इस चक्कर से निकल जाने को कोई तैयार नहीं।

दस

आज प्रातः बड़े भैया से मिलने गया। वह ड्योढ़ी के सामने खड़े आसमान की ओर ताक रहे थे। मैं उनके पीछे दरवाज़े और उनके बीच खड़ा हो गया। बहुत ही नर्मी से बोला, "भैया, कुछ कहना चाहता हूं।"

"हां, कहो क्या है?" उन्होंने तुरंत मेरी ओर घूमकर सिर हिलाते हुए आज्ञा दी।

"बात कोई ख़ास नहीं है, पर कह नहीं पा रहा हूं। भैया, आदिम अवस्था में तो शायद सभी लोग थोड़ा-बहुत नर-मांस खा लेते होंगे। जब लोगों का जीवन बदला, उनके विचार बदले, तो उन्होंने नर-मांस त्याग दिया। वे लोग अपना जीवन सुधारना चाहते थे। इसलिए सभ्य बन गए, उनमें मानवता आ गई, परंतु कुछ लोग अब भी खाए जा रहे हैं, मगरमच्छों की तरह। कहते हैं जीवों का विकास होता है, एक जीव से दूसरा जीव बन जाता है। कुछ जीव विकास करके मछली बन गए हैं, पक्षी बन गए हैं, बंदर बन गए हैं। ऐसे ही मनुष्य भी बन गया है, परंतु कुछ जीवों में विकास की इच्छा नहीं होती। उनका विकास नहीं होता, वे सुधरते ही नहीं, रेंगने वाले पशु ही बने रहते हैं। नर-मांस खाने वाले असभ्य लोग नर-मांस न खाने वाले

लोगों की तुलना में कितना नीचा और लज्जित महसूस करते होंगे! बंदर की तुलना में रेंगने वाले जानवर नीचे हैं, परंतु नर-मांस न खाने वाले सभ्य लोगों की तुलना में नर-मांस खाने वाले उनसे भी नीचे हैं।

"अतीत में ई या के अपने बेटे को उबालकर च्ये और चओ के सामने परोस दिया था। यह एक पुरानी कथा है।[1] इससे पहले भी जिस दिन से फ़ान कू ने आकाश और पृथ्वी बनाए हैं, ई या के बेटे के काल से श्वी शी-लिन के काल तक[2] मनुष्य एक-दूसरे को खाते रहे हैं। श्वी शी-लिन के काल से शिशु-भेड़िया गांव में पकड़े गए आदमी के काल तक यही होता रहा है। पिछले साल शहर में एक अपराधी की गर्दन काट दी गई थी। खून बहता देख टी.बी. के एक मरीज़ ने उसके खून में रोटी डुबोकर खा ली।

"ये लोग मुझे खा जाना चाहते हैं। इन लोगों को अकेले रोक पाना तुम्हारे बस का नहीं, पर तुम उनमें क्यों मिल गए? ये आदमखोर ठहरे, जो न कर डालें, वह कम है। ये मुझे खा डालेंगे, उसके बाद तुम्हारी बारी आएगी। फिर ये लोग आपस में भी एक-दूसरे को नहीं छोड़ेंगे। भैया, अगर तुम लोग आज ही यह रास्ता छोड़ दो, तो सबको शान्ति मिल जाएगी। ठीक है, बहुत पुराने समय से ऐसा ही होता चला आया है कि आदमी आदमी को खाता आया है, पर अब, ख़ासकर इस समय तो हम आपस में एक-दूसरे पर रहम कर सकते हैं और कह सकते हैं कि ऐसा नहीं होगा। भैया, मुझे विश्वास है कि तुम ऐसा करोगे। अभी उस दिन वह असामी लगान कम कर देने के लिए कह रहा था। तब भी तुमने कह दिया था, ऐसा नहीं हो सकता!"

भैया पहले तो लापरवाही दिखाने के लिए मुस्कराते रहे, फिर उनकी आंखों में खून उतर आया और जब मैंने उनका पर्दाफ़ाश कर दिया, तो उनका चेहरा पीला पड़ गया। ड्योढ़ी के बाहर कई लोग एकत्र थे। चाओ

---

1. प्राचीन अभिलेखों के अनुसार ई या ने अपने बेटे का मांस छी राज्य के राजा ह्वान को, जिसने ईसा पूर्व 685 से 643 तक शासन किया, परोस दिया था। च्ये और चओ इससे पहले के काल के निरंकुश शासक थे। यहां पागल आदमी ने ग़लती से उनका उल्लेख कर दिया है।

2 छिङ राजवंश (1644-1911) के अंतिम काल के एक क्रांतिकारी श्वी शी-लिन को 1907 में एक छिङ अफसर की हत्या के आरोप में मृत्यु की सज़ा दी गई थी। उनके दिल और जिगर का मांस खाया गया था।

साहब भी अपना कुत्ता लिए खड़े थे। सब गर्दनें बढ़ा-बढ़ा कर बड़ी उत्सुकता से अंदर झांक रहे थे। मैं उनके चेहरे नहीं देख पा रहा था। लगता था, कई लोग कपड़े से चेहरे छिपाए हैं। कुछ के चेहरे पीले और डरावने लग रहे थे, कुछ अपनी हंसी दबाए थे। मैं जानता था, वे सब आदमखोर हैं और आपस में मिले हुए हैं, पर उनमें आपस में भी एका कहां था! कुछ का विचार था कि आदमखोरी हमेशा से होती आई है और यह कोई बुरी बात नहीं है। कुछ मानते थे कि यह ज़ुल्म है, पर अपना लालच दबा नहीं पाते थे। चाहते थे कि उनका राज न खुले। इसलिए मेरी बात सुनी, तो उन्हें गुस्सा आ गया, पर अपने गुस्से को काबू कर वे होंठ दबाकर मुस्कराते रहे।

भैया एकदम ताव में आ गए और जोर से चिल्लाए, "चलो यहां से, भाग जाओ सब! किसी का दिमाग़ खराब हो गया है। तुम उसका तमाशा देखने आए हो।"

मैं उन लोगों की चाल समझने लगा था। ये अपनी राह से टलने वाले नहीं, इन लोगों ने पूरी साज़िश रच रखी है। सबने मिलकर मुझे पागल समझ लिया है। ये मुझे खत्म कर देंगे, तो कोई कुछ कहेगा भी नहीं। सब यही समझेंगे कि पागल था, उसे निबटा दिया। ठीक किया। जब शिशु-भेड़िया गांव के असामी ने एक बदमाश को मारकर खा जाने की बात कही थी, तब भी किसी ने कुछ नहीं कहा था। तब भी इन लोगों ने यही चाल चली थी। यह इन लोगों की पुरानी तरकीब है।

छन भी भीतर चला आया। वह भी बहुत गर्म हो रहा था, पर वे मेरा मुंह बंद नहीं कर सके। मैं बोले बिना नहीं रहा, "यह ठीक नहीं है, ऐसा मत करो। तुम्हें अपना दिल बदलना होगा," मैंने कहा, "समझ लो, यह अन्याय नहीं चल सकेगा। भविष्य में दुनिया में आदमखोरी नहीं चल सकेगी।

"अगर आदमख़ोरी नहीं छोड़ोगे, तो तुम सब समाप्त हो जाओगे, एक-दूसरे को खा जाओगे। तुम्हारे घरों में चाहे जितनी संतानें पैदा हों, सभ्य लोग तुम्हें समाप्त कर देंगे। जैसे शिकारी जंगल में भेड़ियों को समाप्त कर देते हैं, जैसे लोग सांपों को समाप्त कर देते हैं।"

छन दा ने सबको भगा दिया। भैया चले गए थे। छन ने मुझे कमरे में जाने को कहा। कमरे में अंधेरा घुप्प था। सिर के ऊपर की कड़ियां

थिरकती जान पड़ रही थीं। उनका आकार बढ़ता जा रहा था। कुछ पल ऐसे ही खड़खड़ाहट होती रही। फिर छत मेरे ऊपर आ गिरी।

छत के बोझ के नीचे हिल सकना संभव नहीं था। वे लोग तो चाहते ही थे कि मैं मर जाऊं। मैं जानता था कि यह बोझ बस ख्याली है। इसलिए हिम्मत बांधी, कंधा लगाया और बाहर निकल आया। मैं पसीना-पसीना हो रहा था, पर फिर भी बोले बिना न रह सका, "तुम्हें फ़ौरन बदलना होगा! अपना दिल बदलना होगा। याद रखो, भविष्य में दुनिया में आदमख़ोरी नहीं चल सकेगी..."

ग्यारह

कोठरी का दरवाज़ा बंद रहता है। कभी धूप दिखाई नहीं देती। रोज़ाना दो बार खाना मिल जाता है। मैंने खाना खाने को चापस्टिकें उठाईं, तो भैया का ख्याल आ गया, अपनी छोटी बहन की मौत की घटना याद आ गई। वह भैया की कारस्तानी थी। तब मेरी बहन केवल पांच बरस की थी। वह कितनी प्यारी और मासूम थी! याद आती है तो चेहरा आंखों के सामने घूम जाता है। मां रो-रो कर बेहाल हो रही थीं। भैया मां को तसल्ली देकर समझा रहे थे। कारण शायद यह था कि ख़ुद ही बेचारी को खा गए थे, इसलिए मां को इस तरह रोते देखकर उन्हें शर्म आ रही थी। अगर उनमें शर्म होती तो...

भैया मेरी बहन को खा गए थे, पता नहीं मां यह भेद जान सकी थीं या नहीं। मेरा ख्याल है कि मां सब जानती थीं, पर जब मां रो रही थीं, तो उन्होंने साफ़-साफ़ कुछ भी नहीं कहा। शायद यह सोचकर चुप रहीं कि कहने की बात नहीं थी। एक घटना और याद है। तब मेरी आयु चार या पांच बरस रही होगी। मैं आंगन में छांव में बैठा था। भैया ने कहा था, एक अच्छे बेटे का कर्तव्य है कि माता-पिता के बीमार होने पर उनकी दवाई के लिए यदि ज़रूरत हो, तो अपने शरीर का मांस भी काटकर और उबालकर सामने रख दे। मां उनकी बात सुनकर समर्थन में चुप रह गई थीं, उन्होंने कोई विरोध नहीं किया था। अगर नर-मांस का एक टुकड़ा खाया जा सकता

है, तो पूरे आदमी को भी खाया जा सकता है; और जब मां के ग़म और विलाप की याद आती है, तो कलेजा टुकड़े-टुकड़े होने लगता है। कितने अनोखे तरीक़े हैं इन लोगों के!

बारह

उ से याद करते ही, सोचते ही, रोंगटे खड़े हो जाते हैं। सिर चकराने लगता है। आखिर यह बात समझ में आई कि सारी उम्र ऐसे लोगों के बीच रह रहा हूं, जो चार हज़ार बरस से नर-मांस का भोजन करते आ रहे हैं। बड़े भैया ने अभी घर संभाला ही था कि कुछ दिन बाद छोटी बहन की मौत हो गई। इन्होंने उसके मांस का इस्तेमाल किया ही होगा, पुलाव में या दूसरी तरह। और अनजाने में हम लोग भी खा गए होंगे।

संभव है, अनजाने में मैंने अपनी बहन के मांस के कई टुकड़े खा लिए हों; और अब मेरी बारी है…

मैं भले ही अनजान हूं, मेरे पुरखे चार हजार बरस से आदमख़ोर रहे हैं। मेरे जैसा आदमी किसी सभ्य, वास्तविक मनुष्य को अपना मुंह कैसे दिखा सकता है?

तेरह

सं भव है, नई पीढ़ी के छोटे बच्चों ने अभी नर-मांस न खाया हो। उन बच्चों को तो बचा ही लें!

आ Q की सच्ची कहानी

अध्याय एक

भूमिका

क ई बरस से आ Q की सच्ची कहानी लिखने की सोच रहा था, किन्तु उसे लिख डालने की इच्छा होते हुए भी मन में दुविधा बनी थी। इससे स्पष्ट हो जाता है कि मैं उन लोगों में नहीं, जो लेखन से गौरव अर्जित करते हैं, कारण यह कि सदा एक अमर व्यक्ति के कारनामों का चित्रण करने के लिए सदा एक अमर लेखनी की जरूरत होती है, व्यक्ति लेखनी के कारण भावी पीढ़ी में ख्याति प्राप्त करता है और लेखनी व्यक्ति के कारण। अंत में यह पता नहीं चल पाता कि कौन किसके कारण ख्याति अर्जित करता है। आखिर आ Q की कहानी लिखने का विचार प्रेत की तरह मेरे मस्तिष्क पर हावी हो गया।

लेकिन जैसे ही लेखनी उठाई अमरत्व से कोसों दूर इसके सृजन में आने वाली कठिनाइयों का एहसास होने लगा। पहला प्रश्न यह खड़ा हुआ—आख़िर इसे नाम क्या दिया जाए। कनफ्यूशियस ने कहा है, "अगर नाम सही नहीं, तो शब्द भी सही नहीं दिख पड़ेंगे।" इस कहावत पर बड़ी ईमानदारी से अमल किया जाना चाहिए। जीवन-कथाएं कई तरह की होती हैं—अधिकृत जीवन-कथा, आत्मकथा, अनधिकृत जीवन-कथा, दंतकथा, पूरक जीवन-कथा, परिवार-कथा, रेखाचित्र… लेकिन दुर्भाग्य से इनमें एक भी नाम ऐसा नहीं, जिससे मेरा काम चल जाए। "अधिकृत जीवन-कथा"? स्पष्ट है कि इस ब्यौरे को किसी अधिकृत इतिहास में कई विख्यात

व्यक्तियों के विवरण के साथ शामिल नहीं किया जाएगा। 'आत्मकथा'? लेकिन मैं आ Q तो हूं नहीं, इसलिए यह भी ठीक नहीं। यदि इसे 'अनधिकृत जीवन-कथा' का नाम दिया जाए, तो उसकी 'अधिकृत जीवन-कथा' कहां है? 'दंतकथा' कहना भी संभव नहीं, क्योंकि आ Q किसी दंतकथा का चरित्र तो है नहीं। 'पूरक जीवन-कथा'? लेकिन किसी भी राष्ट्रपति ने राष्ट्रीय ऐतिहासिक प्रतिष्ठान को अभी तक आ Q की 'प्रतिमानित जीवन-कथा' लिखने का आदेश नहीं दिया। यह सच है कि इंगलैंड के अधिकृत इतिहास में 'जुआरियों के जीवन' का कोई उल्लेख नहीं है, फिर भी प्रसिद्ध लेखक अर्थर कानन डायल ने 'रोडनी स्टोन'[1] उपन्यास की रचना की, पर जहां तक प्रसिद्ध लेखक को यह सब करने की अनुमति है, वहां मुझ जैसे व्यक्ति को इसकी अनुमति कहां! फिर क्या उसे 'परिवार-कथा' कहा जाए? लेकिन मुझे तो यह भी नहीं मालूम कि मैं आ Q के परिवार का सदस्य हूं या नहीं, फिर उसके बेटे-बेटियों या पोते-पोतियों ने तो मुझे यह काम सौंपा नहीं। यदि इसे 'रेखाचित्र' कहा जाए, तो शायद इस पर भी एतराज किया जाएगा, क्योंकि आ Q का 'पूरा विवरण' तो कहीं उपलब्ध है नहीं। संक्षेप में कहा जा सकता है कि यह एक 'जीवनी' है, परन्तु मेरी लेखन शैली जरा परिष्कृत नहीं है और इसमें खोंमचे व फेरी वालों की भाषा का प्रयोग है, इसलिए मैं इसे इतना ऊंचा नाम नहीं दे सकता। अतः उपन्यासकारों की, जिनकी गिनती तीन मतों और नौ संप्रदायों[2] में नहीं होती, प्रचलित शब्दावली (विषयान्तर बहुत हो चुका, अब सच्ची कहानी पर लौट आना चाहिए) से। 'सच्ची कहानी,' इन दो शब्दों को अपने शीर्षक के लिए चुन लेता हूं, और अगर इससे प्राचीन काल की 'लिपिकला की सच्ची कहानी'[3] की याद ताज़ा हो जाए, तो इसमें कोई क्या कर सकता है?

---

1. इस उपन्यास के चीनी रूपान्तर का नाम था 'जुआरियों की पूरक जीवन-कथाएं'।
2. तीन मत इस प्रकार थे—कनफ्यूशियसवादी मत, बौद्धमत और ताओमत। नौ संप्रदायों में कनफ्यूशियसवादी, ताओवादी, विधानवादी, मोवादी इत्यादि संप्रदाय सम्मिलित थे। उपन्यासकारों को, जो इनमें से किसी एक मत या संप्रदाय से संबद्ध नहीं होते थे, प्रतिष्ठित नहीं माना जाता था।
3. छिङ राजवंश (1644-1911) के जमाने के फ्रङ ऊ द्वारा रचित एक पुस्तक।

दूसरी कठिनाई मेरे सामने यह थी कि ऐसी जीवन-कथा कुछ इस प्रकार आरंभ होनी चाहिए—"फलां नाम का व्यक्ति, जिसका कुलनाम फलां था, फलां जगह में रहता था।" लेकिन सच बात तो यह है कि आ Q का कुलनाम मुझे मालूम ही नहीं था। एक बार पता लगा था कि उसका कुलनाम शायद चाओ है, परन्तु अगले ही दिन इसके बारे में फिर एक बार बड़ा घपला हो गया। बात यह हुई कि चाओ साहब के बेटे ने काउंटी की सरकारी परीक्षा पास कर ली। उसकी सफलता की घोषणा ढोल-नगाड़ों के साथ सारे गांव में की जा रही थी। आ Q, जो अभी दो प्याले शराब पीकर आया था, इतराता हुआ कहता फिर रहा था कि यह उसके अपने लिए भी बड़े गौरव की बात है, क्योंकि वह भी चाओ साहब के ही कुल का आदमी है और ठीक-ठाक हिसाब लगाया जाए, तो उसकी वरिष्ठता सफल प्रत्याशी से तीन पीढ़ी ज्यादा बैठती है। उस समय आसपास खड़े कुछ लोग तो आ Q से आतंकित होने लगे थे। लेकिन दूसरे ही दिन बेलिफ़ उसे चाओ साहब के घर बुला ले गया। जब बूढ़े चाओ साहब ने उसकी ओर देखा, तो उनका चेहरा गुस्से से तमतमा उठा और वे गरजकर बोल पड़े थे, "ओ आ Q के बच्चे! तू कहता फिर रहा है कि तू भी हमारे ही कुल का है?"

आ Q ने कोई उत्तर नहीं दिया था। जैसे-जैसे चाओ साहब उसकी ओर देखते जाते, उनका पारा लगातार चढ़ता जाता था। दो-चार कदम आगे बढ़कर उसे धमकाते हुए उन्होंने कहा, "तुझे ऐसी बेकार बात कहने की हिम्मत कैसे हुई? भला मैं तेरे जैसे लोगों का संबंधी कैसे हो सकता हूं? क्या तेरा कुलनाम चाओ है?"

आ Q ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह वहां से भागने ही वाला था कि चाओ साहब ने आगे बढ़कर उसके मुंह पर एक तमाचा जड़ दिया था।

"तेरा कुलनाम चाओ कैसे हो सकता है? क्या तू समझता है कि तेरी जैसी हैसियत का आदमी भी चाओ ख़ानदान का हो सकता है?"

आ Q ने चाओ कहलाने के अपने अधिकार की वकालत करने की बिल्कुल कोशिश नहीं की और अपना बायां गाल सहलाते हुए बेलिफ़ के साथ बाहर चला गया। बाहर निकलते ही बेलिफ़ ने उस पर गालियों की बौछार शुरू कर दी। दो सौ तांबे के सिक्कों से उसकी हथेली गर्म करने के बाद ही आ Q उससे अपना पिंड छुड़ा पाया। जिस किसी ने भी यह घटना

सुनी उसने यही कहा कि आ Q को उसकी मूर्खता की वजह से ही मार पड़ी। अगर उसका कुलनाम चाओ ही था (जिसकी संभावना कम थी) तो भी गांव में चाओ साहब के रहते उसका इस तरह डींग मारते फिरना उचित नहीं था। इस घटना के बाद आ Q की वंश परंपरा की कहीं कोई चर्चा नहीं हुई। अतः मुझे अब भी ठीक-ठीक पता नहीं कि उसका कुलनाम सचमुच क्या था।

तीसरी कठिनाई, जिसका सामना मुझे इस रचना के बीच करना पड़ा, यह थी कि आ Q का व्यक्तिगत नाम कैसे लिखा जाए। जब तक वह ज़िन्दा रहा, सभी लोग उसे आ Quei के नाम से पुकारते रहे, परन्तु जब वह नहीं रहा, तो किसी ने आ Quei की चर्चा तक न की। कारण स्पष्ट है, वह उन व्यक्तियों में नहीं था, जिनका नाम "बांस की तख्तियों और रेशम के कपड़े पर सुरक्षित"[1] रखा जाता है। अगर नाम सुरक्षित रखने की ही बात है, तो निश्चय ही यह रचना इस दिशा में पहला प्रयास कहलाएगी। अतः मेरे सामने शुरू में ही यह कठिनाई आ खड़ी हुई। मैंने इस सवाल पर बड़ी बारीकी से विचार किया। आ Quei, क्या यहां 'Quei' का अर्थ पारिजात तो नहीं लगाया जाएगा, या 'Quei' का अर्थ कुलीन वर्ग तो नहीं समझा जाएगा? यदि उसका दूसरा नाम चंद्र-मंडप होता, या उसका जन्म-दिवस चंद्रोत्सव वाले महीने में मनाया जाता, तो निश्चय ही 'Quei' का अर्थ पारिजात लगाया जा सकता था।[2] लेकिन उसका कोई दूसरा नाम नहीं था, अगर था भी तो कोई जानता नहीं था, और उसने अपने जन्म-दिवस पर निमंत्रण-पत्र भेजकर अपने सम्मान में प्रशंसात्मक कविताएं कभी प्राप्त नहीं की थीं, इसलिए उसका नाम आ Quei (पारिजात) लिखना मनमर्ज़ी कहलाएगा। साथ ही अगर उसका आफ़ू (खुशहाली) नाम का कोई बड़ा या छोटा भाई होता, तो उसे अवश्य ही आ Quei (कुलीन वर्ग) नाम दिया जा सकता था, परन्तु उसे आ Quei (कुलीन वर्ग) नाम देने का कोई औचित्य नहीं। शेष सारे असामान्य अक्षर, जिनकी ध्वनि Quei से मिलती है, इससे

1. यह कथन ईसापूर्व तीसरी शताब्दी का है। बांस की तख्तियों और रेशम के कपड़े को चीन के लोग प्राचीन काल में लेखन-सामग्री के रूप में इस्तेमाल करते थे।
2. पारिजात के फूल चंद्रोत्सव वाले महीने में खिलते हैं। चीनी लोककथाओं के अनुसार चंद्रमा पर दिखाई देने वाला धब्बा वास्तव में पारिजात का वृक्ष है।

भी कम औचित्य रखते हैं। मैंने एक बार यह सवाल चाओ साहब के लड़के से पूछा था, जो काउंटी की सरकारी परीक्षा पास कर चुका था, परन्तु उस जैसा विद्वान भी चक्कर में पड़ गया था। उसका कहना था कि इस नाम का पता इसलिए नहीं चल पा रहा है, क्योंकि छन तूश्यू[1] ने 'नया नौजवान' नामक पत्रिका निकालनी शुरू कर दी है, जिसमें पश्चिमी वर्णमाला के प्रयोग की वकालत की गई है, इससे राष्ट्रीय संस्कृति बिल्कुल तहस-नहस हो रही है। अंत में मैंने अपने इलाक़े के किसी व्यक्ति से अनुरोध किया कि वह खुद जाकर आ Q के मामले से संबंधित क़ानूनी दस्तावेजों की जांच करे, पर आठ महीने बाद उसने मुझे चिट्ठी लिखी कि उन दस्तावेजों में आ Quei नाम के किसी आदमी का उल्लेख नहीं है। जबकि मैं विश्वास के साथ यह नहीं बता सकता था कि मेरे दोस्त की बात सच भी थी या नहीं या उसने इस बारे में कोई कोशिश भी की थी या नहीं, फिर भी जब मैं इस तरह उसके नाम का पता नहीं लगा पाया, तो मेरे सामने और कोई चारा नहीं रहा। मुझे डर है कि नई ध्वनि-प्रणाली अभी आम लोगों में प्रचलित नहीं है, इसलिए पश्चिमी वर्णमाला का इस्तेमाल करने में अंग्रेज़ी आचरणों के अनुसार आ Quei नाम लिखने में और उसका संक्षिप्त रूप आ Q लिखने में मुझे कोई दिक़्क़त नहीं जान पड़ती। निश्चय ही यह 'नया नौजवान' पत्रिका का लगभग अंधानुकरण कहलाएगा और इसके लिए मैं बहुत शर्मिंदा हूं, पर चाओ साहब के लड़के जैसा धुरंधर विद्वान भी मेरी समस्या हल नहीं कर पाया, तो ऐसी हालत में भला मैं और कर भी क्या सकता था?

मेरी चौथी कठिनाई आ Q के जन्म-स्थान के बारे में थी। अगर उसका कुलनाम चाओ होता, तो इलाके के अनुसार वर्गीकरण करने के पुराने चलन के अनुसार, जो आज भी प्रचलित है, 'सौ कुलनाम'[2] की टीका देखी जा सकती थी और मालूम हो सकता था कि वह 'कानसू प्रान्त के थ्येनश्वेइ नामक स्थान का निवासी' है, पर दुर्भाग्य से उसका कुलनाम ही विवादास्पद था, इसलिए जन्म-स्थान भी अनिश्चित हो गया। हालांकि उसकी अधिकतर

1. छन तू-श्यू (1880-1942) उस समय पेकिंग विश्वविद्यालय का एक प्रोफेसर और 'नया नौजवान' नामक मासिक पत्रिका का संपादक था। बाद में उसने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के साथ गद्दारी की।
2. एक पुरानी प्रवेशिका जिसमें सारे कुलनाम पद्य में लिखे होते थे।

ज़िंदगी वेइच्वाङ में ही बीती, वह प्रायः दूसरे स्थानों में भी रह चुका था। इसलिए उसे वेइच्वाङ का निवासी कहना भी सही मालूम नहीं होता। यह वास्तव में इतिहास को तोड़ना-मरोड़ना कहलाएगा।

सिर्फ़ एक बात, जिससे मुझे तसल्ली हुई, वह है कि 'आ' अक्षर बिल्कुल सही है। यह निश्चित रूप से किसी झूठी तुलना का परिणाम नहीं है और विद्वत्तापूर्ण आलोचना की कसौटी पर खरा उतरता है। जहां तक दूसरी समस्याओं का संबंध है, उन्हें हल करना मेरे जैसे विद्वत्ताहीन व्यक्ति के बूते का नहीं और मैं उम्मीद करता हूं कि डॉ. हू श, जो 'इतिहास और पुरातत्त्व में गहरी रुचि'[1] रखते हैं, उनके शिष्य भविष्य में इस पर नई रोशनी डाल सकेंगे। मैं सोचता हूं तब तक मेरी 'आ Q की सच्ची कहानी' विस्मृति के गढ़े में खो चुकी होगी। उपरोक्त पंक्तियों को इस रचना की भूमिका माना जा सकता है।

अध्याय दो

आ Q की जीतों का संक्षिप्त ब्यौरा

आ Q के कुलनाम, व्यक्तिगत नाम और जन्म-स्थान से संबंधित अनिश्चितता के अतिरिक्त उसके 'अतीत' के बारे में भी कुछ अनिश्चितता बनी हुई है। कारण यह है कि वेइच्वाङ के लोगों ने उसके 'अतीत' पर ज़रा भी ध्यान दिए बिना उसकी सेवाओं का उपयोग किया या उसका मज़ाक़ उड़ाया। आ Q खुद भी इस विषय में मौन रहता, सिर्फ़ ऐसे अवसर को छोड़कर, जबकि उसका किसी से झगड़ा हो जाता, तो उसकी ओर देखता हुआ वह बोल पड़ता, "किसी समय हमारी दशा तुमसे अधिक अच्छी थी। तुम अपने को आख़िर समझते क्या हो?"

आ Q का अपना कोई परिवार नहीं। वह वेइच्वाङ गांव में कुल-देवता के मंदिर में रहता था। उसके पास कोई नियमित रोजगार भी नहीं था। जो

1. यह वाक्यांश नामी प्रतिक्रियावादी राजनीतिक व लेखक हू श अक्सर प्रशंसा में कहा करता था।

भी छोटा-मोटा काम मिल जाता, कर लेता—गेहूं काटना होता, तो गेहूं काट देता, चावल पीसना होता तो चावल पीस देता, नाव चलाना होता, तो नाव चला देता। अधिक दिनों का काम होता, तो अपने अस्थायी स्वामी के घर में ही रह जाता। पर जैसे ही काम ख़त्म होता, वहां से चल देता। इसलिए जब भी लोगों के पास काम होता, वे आ Q को याद करते, पर वे सिर्फ़ उसकी सेवाओं को याद करते थे, यह नहीं कि उसके अतीत को, और जब काम खत्म हो जाता, तो वे आ Q को भूल जाते, उसके अतीत की बात तो दूर रही। एक बार एक बुज़ुर्ग ने कहा था, "कितना अच्छा काम करता है आ Q !" उस समय सामने खड़े आ Q का शरीर कमर तक बिल्कुल नंगा था, उसका शरीर मरघिल्ला व दुबला-पतला था, चेहरे पर बेचारगी थी। बहुत लोग यह नहीं समझ पाए कि ये शब्द उसने सचमुच आ Q की प्रशंसा में कहे थे या उसका मज़ाक़ उड़ाने के लिए। जो हो, आ Q यह सुनकर बहुत खुश हुआ।

आ Q वास्तव में अपने बारे में बहुत ऊंची राय रखता था। वेइच्वाङ के सभी निवासियों को वह अपने से छोटा समझता था। यहां तक कि उन दो युवा विद्वानों को भी किसी योग्य नहीं समझता था, जबकि अधिकतर युवा विद्वानों के सरकारी परीक्षा पास करने की संभावना थी। चाओ साहब और छ्येन साहब की गांव के लोग बड़ी इज़्ज़त करते थे, क्योंकि वे अमीर होने के साथ-साथ युवा विद्वानों के पिता भी थे। केवल आ Q ही ऐसा था, जो उनकी खास इज़्ज़त नहीं करता था और सोचता था, "मेरे बेटे शायद इनसे भी ज्यादा महान् बनें।"

इसके अतिरिक्त, जब आ Q को कई बार शहर जाने का अवसर मिला, तो शायद उसका दिमाग़ पहले से ज्यादा चढ़ गया, जबकि इसके बाद वह शहर के लोगों को भी बिल्कुल छोटा समझने लगा। उदाहरण के लिए, तीन फीट लंबे और तीन इंच चौड़े तख्ते से बने बेंच को वेइच्वाङ गांव के लोग लंबी बेंच कहते थे। आ Q भी उसे लंबी बेंच ही कहता था। पर, शहर के लोग उसे सीधी बेंच कहते थे। आ Q सोचता, 'यह कितना ग़लत है! कितना हास्यापद है!' इसके अतिरिक्त वेइच्वाङ गांव वाले जब बड़े सिर वाली मछली को तेल में तलते, तो सभी हरी प्याज की पत्तियों के आधे इंच लंबे टुकड़े काटकर उसके साथ छौंकते थे, जबकि शहर वाले उन्हें बारीक

काटकर उसके साथ छौंकते थे। आ Q सोचता, 'यह भी कितना गलत है! कितना हास्यापद है!' लेकिन वेइच्वाङ गांव वाले सचमुच बिल्कुल अनपढ़ और गंवार थे और उन्होंने यह कभी नहीं देखा था कि शहर में मछली कैसे तली जाती है!

आ Q, जो किसी समय काफी खुशहाल था और दुनियादारी में कुशल एक अच्छा कमेरा था, एक बिल्कुल संपूर्ण इंसान होता अगर बदक़िस्मती से उसके शरीर में कुछ विकृतियां न होतीं। सबसे ज्यादा दुखदायी उसकी खोपड़ी पर वे चमकीले निशान थे, जो अतीत में किसी समय दाद से पीड़ित होने के कारण बन गए थे। जबकि ये निशान उसके अपने ही सिर पर थे, आ Q इन्हें ज़रा भी सम्मानजनक नहीं समझता था। यही वजह थी कि वह दाद या इससे मिलते-जुलते किसी भी अन्य शब्द का प्रयोग नहीं करता था। बाद में इससे एक क़दम और आगे बढ़कर उसने चमकदार और रोशनी शब्दों का प्रयोग भी बंद कर दिया और इसके बाद चिराग और मोमबत्ती शब्दों का प्रयोग भी छोड़ दिया। जब भी कोई जानबूझकर या अनजाने में इन वर्जित शब्दों का प्रयोग करता, तो आ Q गुस्से से तमतमा उठता, उसके दाद के निशान लाल हो उठते। वह गुस्ताख़ी करने वाले की ओर देखता अगर वह कोई ऐसा आदमी होता तो जवाब देने में उससे कमज़ोर साबित होता, तो उसे खूब जली-कटी सुनाता, अगर कोई ऐसा आदमी होता, जो लड़ने में उससे कमज़ोर होता, तो फौरन उस पर हाथ छोड़ देता। फिर भी यह विचित्र बात थी कि इन मुठभेड़ों में प्रायः आ Q को ही मात खानी पड़ती। अंत में वह नए दांव-पेंच अपना लेता और अपने प्रतिद्वंद्वी को गुस्से से लाल आंखों से घूरकर ही मन को तसल्ली दे लेता।

बात यह हुई कि जबसे आ Q ने लोगों को गुस्से से लाल आंखों से घूरना शुरू किया, वेइच्वाङ के बेकार लोगों को उसका मज़ाक उड़ाने या उसे छेड़ने में और ज़्यादा मज़ा आने लगा। वे जैसे ही उसे देखते, उकसाने के लिए कह देते, "देखो तो सदा रोशनी हो रही है।"

आ Q की तरह उत्तेजित हो उठता और गुस्से से लाल आंखों से उन्हें घूरने लगता।

"अच्छा, तो यहां पैराफ़ीन का चिराग़ रखा है।" वे उससे ज़रा भी डरे बिना अपनी बात जारी रखते।

आ Q कुछ नहीं कर पाता। सही जवाब ढूंढ पाने के लिए दिमाग़ पर जोर डालकर कहता, "तुम इस योग्य भी नहीं हो कि···" ऐसे मौक़े पर उसे लगता, मानो उसकी खोपड़ी पर अंकित निशान, उसके उदात्त व गौरवमय चरित्र के द्योतक हों, दाद के मामूली निशान न हों। फिर भी जैसा कि पहले कहा जा चुका है, आ Q दुनियादारी में कुशल था। वह फ़ौरन समझ जाता कि उसके मुंह से वर्जित शब्द निकलने जा रहे हैं, इसलिए बात वहीं समाप्त कर देता।

अगर बेकार लोगों को इतने से भी तसल्ली न होती और वे उसे उकसाना जारी रखते, तो हाथापाई की नौबत आ जाती। आ Q जब बिल्कुल परास्त हो जाता और बेकार लोग उसकी भूरी चोटी खींचकर उसका सिर चार-पांच बार दीवार से टकरा देते, तभी वे अपनी विजय पर संतुष्ट होकर वहां से जाते। आ Q एक क्षण के लिए वहीं रुक जाता और मन-ही-मन सोचने लगता, "मालूम होता है, मुझे मेरे बेटे ने पीटा है। आजकल कैसा जमाना आ गया है!" इसके बाद वह भी अपनी विजय पर संतुष्ट होकर वहां से चला जाता।

आ Q अपने मन में जो कुछ भी सोचता, बाद में दूसरे लोगों को अवश्य बताता। इस तरह वे सभी, जो उसकी खिल्ली उड़ाते थे, मनोवैज्ञानिक विजय प्राप्त करने के उसके तरीक़े को अच्छी तरह जान गए थे। इसलिए बाद में जो कोई भी उसकी भूरे रंग की चोटी खींचता या मरोड़ता था, उससे वह पहले ही कह देता, "आ Q, बेटा बाप की पिटाई नहीं कर रहा, बल्कि इंसान जानवर की पिटाई कर रहा है। थोड़ा कहा, तो इंसान जानवर की पिटाई कर रहा है।"

आ Q अपनी चोटी की जड़ मज़बूती से पकड़ लेता और सिर टेढ़ा करके कहता, "यह क्यों नहीं कहते कि इंसान कीड़े की पिटाई कर रहा है? मैं एक कीड़ा हूं। अब मुझे छोड़ोगे या नहीं?"

हालांकि उसका अस्तित्व कीड़े के बराबर ही था, फिर भी बेकार लोग जब तक अपनी आदत के अनुसार आसपास की किसी चीज़ से पांच-छः बार उसका सिर न टकरा देते, तब तक अपनी विजय पर संतुष्ट होकर वहां से नहीं जाते और तब तक उन्हें इस बात का विश्वास हो पाता कि आ Q इस बार हार गया है, पर दस सेकंड बीतने से पहले ही आ Q भी अपनी

विजय पर संतुष्ट होकर वहां से चल देता, यह सोचता हुआ कि वह "सर्वप्रथम आत्म-तुच्छ व्यक्ति" है, और अगर "आत्म-तुच्छ व्यक्ति" शब्द निकाल दिए जाएं, तो केवल सर्वप्रथम रह जाता है। क्या सर्वाधिक अंक लेकर सरकारी परीक्षा पास करने वाला प्रत्याशी भी सर्वप्रथम नहीं है? "आखिर तुम लोग अपने को समझते क्या हो?"

अपने शत्रुओं से लोहा लेने के लिए ऐसी चालाकी भरा चालें चलने के बाद आ Q खुशी-खुशी शराबखाने में जा पहुंचता और दो-चार पेग चढ़ाकर दूसरों से फिर हंसी-मज़ाक़ करता, फिर झगड़ा करता, फिर विजयी होकर कुल-देवता के मंदिर में खुशी-खुशी लौट जाता। वह तकिए पर सिर रखते ही गहरी नींद सो जाता। जब कभी उसकी जेब में पैसा होता, तो जुआ खेलने पहुंच जाता। जुआरियों की टोली ज़मीन पर बैठी होती। उनके बीच आ Q भी जा बैठता। उसके चेहरे से पसीना चू रहा होता। वह सबसे ज़्यादा ज़ोर से चिल्ला उठता, "हरे नाग पर चार सौ।"

"बस, अब खुल रही है बाज़ी।" पसीने से तर चेहरे वाला जुआ-संचालक संदूकची खोल देता और ज़ोर से बोल पड़ता, "'स्वर्ग का दरवाज़ा'··· 'कोण' को कुछ नहीं मिला··· 'लोकप्रियता मार्ग' का दांव ख़ाली गया। आ Q के पैसे मेरे हवाले कर दो।"

"'मार्ग'···एक सौ···एक सौ पचास।"

इन शब्दों के साथ धीरे-धीरे आ Q का सारा पैसा पसीने से तर अन्य जुआरियों की जेब में पहुंच जाता। अंत में वह मजबूर होकर उनके बीच से बाहर निकल जाता और पीछे बैठकर दूसरों की हार-जीत की चिंता करता खेल देखता रहता। जब खेल खत्म हो जाता, तो बड़े बेमन से कुल-देवता के मंदिर में लौट जाता। अगले दिन जब काम पर जाता, तो उसकी आंखें रात भर जागने के कारण सूजी हुई होतीं।

लेकिन एक बार जब आ Q जीतने के बाद भी बदक़िस्मती से अंत में हार गया, तो "सौभाग्य के भेस में दुर्भाग्य भी आ सकता है" वाली कहावत सच साबित हो गई।

उस दिन वेइच्वाङ में देवताओं का त्यौहार मनाया जा रहा था। शाम का समय था। प्रथा के अनुसार एक नाटक खेला जा रहा था, और प्रथा के ही अनुसार, रंगमंच के निकट जुआ खेलने के लिए बहुत सी मेज़ें लगी

हुई थीं। नाटक के ढोल-नगाड़ों की आवाज़ आ Q को ऐसी लग रही थी, मानो तीन मील दूर से आ रही हो। उसके कान केवल जुआ-संचालक की आवाज़ की ओर लगे थे। बाज़ी बार-बार आ Q के हाथ रही। उसके तांबे के सिक्के चांदी के सिक्कों में और चांदी के सिक्के डालरों में बदलते गए, डालरों की ढेरी बढ़ती गई। वह खुशी से उछल पड़ा और ज़ोर से चिल्लाया, "स्वर्ग के दरवाजे पर दो डालर।"

आ Q को यह कभी मालूम न हो सका कि झगड़ा किसने और क्यों शुरू किया। गाली-गलौच, लात-घूंसों की मार और भगदड़ के शोर से उसका सिर चकरा गया और जब वह होश में आया, तब तक सभी जुए की मेज़ें और जुआरियों की टोलियां ग़ायब हो चुकी थीं। उसके शरीर का पोर-पोर दुख रहा था, लगता था कि उसे भी लात-घूंसे लगे हैं। आसपास जमा बहुत से लोग आश्चर्य से उसकी ओर देख रहे थे। यह महसूस करता हुआ कि उसकी कोई चीज़ खो गई है, वह कुल-देवता के मंदिर लौट गया और जब पूरी तरह होश में आया, तब कहीं उसे महसूस हुआ कि उसकी डालरों की ढेरी ग़ायब हो चुकी है। त्यौहार में जुए की मेज़ें लगाने वाले ज़्यादातर वास्तव में वेइच्वाङ के निवासी नहीं थे, इसलिए अपराधियों का पता कैसे लगाया जा सकता था?

चांदी के सिक्के की कितनी उजली, कितनी चमकदार ढेरी थी वह! सारी की सारी रकम उसकी हो चुकी थी···पर अब ग़ायब हो गई है। यह सोचकर भी कि इसे उसके अपने ही बेटे ने चुरा लिया है, उसके मन को तसल्ली नहीं हो पाई। अपने आपको कीड़ा समझकर भी उसे चैन नहीं मिला। यह पहला अवसर था, जब उसे सचमुच पराजय की कड़वाहट का मज़ा चखने को मिला।

लेकिन अगले ही क्षण उसने अपनी पराजय को विजय में बदल डाला। दायां हाथ ऊपर उठाकर उसने कसकर अपने मुंह पर दो थप्पड़ मारे, इतनी ज़ोर से कि चेहरा दर्द से झनझना उठा। थप्पड़ खाने के बाद उसका दिल कुछ हलका हो गया, क्योंकि उसे लगा, थप्पड़ मारने वाला तो वह खुद है और थप्पड़ खाने वाला कोई और है। जल्दी ही उसे ऐसा लगा जैसे उसने किसी दूसरे व्यक्ति की पिटाई की हो, जबकि उसका चेहरा अब भी दर्द से झनझना रहा था। अपनी विजय पर संतुष्ट होकर वह लेट गया। शीघ्र ही उसकी आंख लग गई।

अध्याय तीन

आ Q की अन्य विजयों का विवरण

हालांकि आ Q सदा विजय प्राप्त करता जाता था, फिर भी प्रसिद्धि सिर्फ़ तभी हासिल हुई, जब चाओ साहब ने उसके मुंह पर थप्पड़ मारने की तकलीफ उठाई।

बेलिफ़ के हाथ में दो सौ तांबे के सिक्के रखने के बाद वह गुस्से में ज़मीन पर लेट गया। बाद में अपने आपसे कहने लगा, "आजकल दुनिया न मालूम कैसी हो गई है, बेटे अपने बाप को पीटने लगे हैं···" तब वह चाओ साहब की प्रतिष्ठा के बारे में सोचने लगा, जिन्हें अब वह अपना बेटा समझने लगा था। धीरे-धीरे उसका जोश ऊंचा उठता गया। वह उठा और "युवक विधवा अपने पति की कब्र पर" गीत की पंक्तियां गुनगुनाता हुआ शराबख़ाने में जा पहुंचा। उस समय अवश्य उसे यह महसूस हुआ कि चाओ साहब का रुतबा ज्यादातर लोगों से थोड़ा ऊपर है।

यह कहते हैरानी होती है कि इस घटना के बाद सभी आ Q की असाधारण तौर पर इज़्ज़त करने लगे। वह शायद यह सोचता रहा कि लोग ऐसा इसलिए करते हैं, क्योंकि वे उसे चाओ साहब का पिता समझते हैं, पर वास्तविकता यह नहीं थी। वेइच्वाङ में दरअसल यह प्रथा थी कि यदि सातवां बेटा आठवें बेटे को पीट दे या फलां ली फलां चाङ को पीट दे, तो कोई ख़ास बात नहीं समझी जाती थी पर जब पिटाई की घटना का संबंध चाओ साहब जैसे किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति से होता, तो गांववाले इसे चर्चा का विषय समझते थे। जहां एक बार उन्होंने इसे चर्चा का विषय समझ लिया, तो पिटाई करने वाले के एक मशहूर व्यक्ति होने के कारण, जिसकी पिटाई की जाती थी, उसे भी पिटाई करने वाले की प्रसिद्धि का कुछ-न-कुछ प्रतिफल अवश्य प्राप्त हो जाता था। पूरी तरह पर प्रतिफल हमेशा आ Q का ही माना जाता था, क्योंकि लोग समझते थे कि चाओ साहब कभी गलती नहीं कर सकते, पर अगर आ Q ही दोषी था, तो सभी लोग असाधारण रूप से उसकी इज़्ज़त करते क्यों महसूस होते थे? इसका कारण बताना कठिन है। इसका कारण शायद आ Q का यह कहना था, वह भी

चाओ परिवार का ही सदस्य है। जबकि उसकी पिटाई की जा चुकी थी, फिर भी लोग शायद यह समझते थे कि उसकी बात में कुछ सच्चाई है, इसलिए उसके प्रति आदरपूर्ण व्यवहार करना ज्यादा सुरक्षित होगा। यह भी कहा जा सकता था कि यह मामला कनफ़्यूशियस के किसी मंदिर में बलि के रूप में चढ़ाए गए गाय के मांस की तरह है, जबकि गाय का मांस भी सुअर या भेड़-बकरी के मांस की ही तरह जानवर का मांस होता है, फिर भी बाद में कनफ़्यूशियस संप्रदाय के अनुयायियों ने उसे छूने का साहस भी नहीं किया, क्योंकि कनफ़्यूशियस स्वयं इसका सेवन कर चुके थे।

इसके बाद आ Q अनेक बरस तक सुख और चैन से रहा। एक दिन वसंत के मौसम में वह खुशी से झूमता हुआ जा रहा था कि उसने देखा कमर तक नंगे मुछंदर वाङ दीवार के सहारे बैठा जूं बीन रहा है। यह देखकर आ Q को भी खुजली महसूस होने लगी। मुछंदर वाङ का शरीर दाद से पीड़ित था, उसके चेहरे पर लंबी-लंबी मूंछें थीं, इसलिए सभी उसे 'दाद वाला मुछंदर वाङ' पुकारते थे। आ Q 'दाद वाला' शब्द का इस्तेमाल नहीं करता था, फिर भी वह मुछंदर वाङ को बिल्कुल तुच्छ समझता था। आ Q सोचता था, दाद से पीड़ित होना कोई ख़ास बात नहीं है, मगर दोनों गालों पर मूंछ के बालों के इतने ज़्यादा गुच्छे होना सचमुच कितना भोंडा लगता है, सचमुच कितना हीन लगता है! अतः आ Q उसकी बगल में जा बैठा। अगर कोई बेकार आदमी होता तो आ Q उसके पास इतनी लापरवाही से क़तई नहीं बैठता, लेकिन मुछंदर वाङ के पास बैठने में उसे भला किसका डर था! सच तो यह था कि आ Q का वाङ के पास बैठना वाङ के लिए ही बड़े गौरव की बात थी।

आ Q ने अपनी अस्तर वाली फटी-पुरानी जाकिट उतारी और उसे पलट डाला, लेकिन काफ़ी देर खोजने के बाद भी सिर्फ़ तीन-चार जूं ही बीन पाया, कारण या तो यह था कि उसने अपनी जाकिट हाल ही में धोई थी या यह कि वह खुद जूं बीनने में एकदम अनाड़ी था। उसने देखा, मुछंदर वाङ अब तक लगातार एक के बाद एक कई जूं बीन चुका है और दांतों के बीच रखकर चट्ट की आवाज़ के साथ उन्हें मार भी चुका है।

आ Q को पहले मायूसी हुई और फिर गुस्सा आने लगा—यह निकम्मा मुछंदर वाङ इतनी अधिक जूं पकड़ चुका है, जबकि मैं केवल कुछ ही पकड़

सका हूं, कितनी शर्म की बात है! उसने एक-दो बड़ी जूं पकड़ने की कोशिश की, लेकिन कोई हाथ न आई। बड़ी कठिनाई से वह एक बीच के आकार की जूं पकड़ पाया, जिसे उसने बड़े गुस्से के साथ मुंह में डालकर दांत से कुचल दिया, लेकिन उसके पिचकने की आवाज बड़ी धीमी थी, मुछंदर वाङ की चट्ट की आवाज़ की तुलना में बिल्कुल धीमी।

आ Q के सिर के सारे निशान लाल हो गए। उसने अपनी जाकिट ज़मीन पर पटक दी और उसकी ओर थूककर बोला, "साला, झबरीदार कीड़ा!"

"ओ खुजीले कुत्ते, गाली किसे दे रहा है?" मुछंदर वाङ ने तिरस्कारभरी नज़र ऊपर उठाते हुए कहा।

पिछले कुछ बरस में आ Q को जो अपेक्षाकृत सम्मान प्राप्त हुआ था उसी से जबकि उसका घमंड कुछ बढ़ गया था, पर अब कभी मारपीट में तेज़ गुंडों से पाला पड़ता, तो वह बिल्कुल भीगी बिल्ली बन जाता, लेकिन आज उसका मन झगड़ा करने को बहुत मचल रहा था। यह कैसे हो सकता था कि झबरीदार गालों वाला यह कीड़ा उसकी बेइज़्ज़ती कर दे?

"जिस किसी का नाम इससे मेल खाता हो।" आ Q ने जवाब दिया। वह दोनों हाथ कमर पर रख तनकर खड़ा हो गया।

"ओबे, क्या तेरी हड्डियां खुजा रही हैं?" यह कहता हुआ मुछंदर वाङ भी अपना कोट पहन तनकर खड़ा हो गया।

यह सोचकर कि वाङ का इरादा भाग खड़े होने का है, आ Q ने उस पर वार करने के लिए अपनी मुट्ठी तान ली, लेकिन मुट्ठी का वार होने से पहले ही मुछंदर वाङ ने उसे दबोच लिया और इतने ज़ोर से झटका दिया कि वह लड़खड़ा कर गिर पड़ा। इसके बाद मुछंदर वाङ ने आ Q की चोटी पकड़कर उसे दीवार की ओर घसीटा, ताकि उसका सिर सदा की तरह दीवार से टकराया जा सके।

"एक भला आदमी ज़बान इस्तेमाल करता है, हाथ नहीं।" आ Q ने सिर टेढ़ा करके विरोध किया।

प्रकट है मुछंदर वाङ कोई भला आदमी नहीं था, क्योंकि आ Q की बात पर जरा भी ग़ौर किए बिना उसने एक के बाद एक पांच बार उसका सिर दीवार पर दे मारा और उसे इतने जोर का धक्का दिया कि वह

लड़खड़ाता हुआ दो गज़ दूर जा गिरा। बस तब जाकर मुछंदर वाङ के दिल को तसल्ली हुई और वह वहां से चला गया।

जहां तक आ Q को याद है, यह उसकी जिंदगी में पहला अवसर था जबकि उसे इस तरह अपमान का घूंट पीना पड़ा था। मुछंदर वाङ के झबरीदार गालों की वह हमेशा ही हंसी उड़ाया करता था, लेकिन वाङ ने उसका कभी मज़ाक नहीं किया, मार-पीट करना तो अलग। लेकिन आज आशा के उलट मुछंदर वाङ ने उसकी पिटाई कर दी थी। शायद लोग बाज़ार में जो कुछ कह रहे थे, वह सच था—"बादशाह ने सरकारी इम्तहान लेना बंद कर दिया है। जिन विद्वानों ने ये इम्तहान पास किए हैं उनकी अब आवश्यकता नहीं है।" शायद इससे चाओ परिवार की प्रतिष्ठा कम हो गई होगी। लोगों द्वारा आ Q के प्रति तिरस्कार का रुख अपनाए जाने का कारण क्या यही तो नहीं था?

आ Q अस्थिर खड़ा था। दूर से आ Q का एक और शत्रु आ रहा था। वह छ्येन साहब का सबसे बड़ा लड़का था, जिससे आ Q भी नफरत करता था। शहर के एक विदेशी स्कूल में पढ़ने के बाद शायद वह जापान चला गया था। छः महीने बाद जब वह अपने देश लौटा था, तो तनकर चलने लगा था और अपनी चोटी कटवा चुका था। उसकी मां दसियों बार रो चुकी थी और पत्नी तीन बार कुएं में छलांग लगाने की कोशिश कर चुकी थी। बाद में उसकी मां ने सबको बताया, "जब वह शराब के नशे में था तो किसी लफ़ंगे ने उसकी चोटी काट दी। अब तक वह न जाने कब अफ़सर बन गया होता, लेकिन अब उसे तब तक प्रतीक्षा करनी होगी जब तक उसकी चोटी फिर नहीं उग जाती।" आ Q को उसकी बात पर विश्वास नहीं हुआ और वह बड़ी हठ के साथ उसे 'नक़ली विदेशी दरिंदा' और 'विदेशी पगार पाने वाला देशद्रोही' कहता रहा था। जैसे ही आ Q उसे देखता, धीमी आवाज़ में गालियां बकने लगता।

आ Q को उसकी जो चीज़ सबसे बुरी लगती थी, वह थी नक़ली चोटी। जिसकी चोटी भी नक़ली हो, ऐसे आदमी को भला इंसान कैसे कहा जा सकता था, साथ ही चूंकि उसकी पत्नी ने चौथी बार कुएं में छलांग मारने की कोशिश नहीं की थी, इसलिए उसे भला एक अच्छी औरत कैसे कहा जा सकता था!

और अब वही 'नकली विदेशी दरिंदा' उसकी ओर आ रहा था।

"गंजा···! गधा···!" पहले आ Q उसे धीमी आवाज़ में ही गालियां दिया करता था, ताकि वह सुन न सके, लेकिन आज चूंकि उसका मूड ठीक नहीं था और वह अपने दिल की भड़ास निकालना चाहता था, इसलिए ये शब्द उसके मुंह से अनायास ही थोड़ा ज़ोर से निकल गए।

दुर्भाग्य से वह गंजा एक चमकदार भूरी छड़ी लिए था, जिसे आ Q मातमपुर्सी करने वाली छड़ी कहता था। लंबे क़दम बढ़ाता वह आ Q पर टूट पड़ा, जो पहले से ही यह अनुमान लगाकर कि उसे मार ज़रूर पड़ने वाली है, अपनी पीठ तानकर पिटाई की प्रतीक्षा कर रहा था। निश्चय ही बड़े ज़ोर की चटाक की आवाज़ हुई, ऐसा लगा जैसे छड़ी से सिर पर चोट की गई हो।

"मैंने तो उसके लिए कहा था।" पास ही खड़े एक बच्चे की ओर इशारा करते हुए आ Q ने सफाई दी।

चटाक! चटाक! चटाक! जहां तक आ Q को याद है, यह उसकी ज़िंदगी में दूसरा अवसर था, जब उसे अपमान का घूंट पीना पड़ा था। खुशक़िस्मती से जब पिटाई समाप्त हो गई, तो उसे लगा मामला ख़त्म हो गया है। उसे कुछ राहत महसूस हुई। साथ ही अपनी उस मूल्यवान विरासत 'भूल जाने की क्षमता' के कारण, जो उसे अपने पूर्वजों से प्राप्त हुई थी, उसे बड़ा लाभ हुआ। वह धीरे-धीरे आगे बढ़ गया और शराबख़ाने के दरवाज़े तक पहुंचते-पहुंचते काफ़ी खुश दिखने लगा।

तभी एक छोटी भिक्षुणी 'शान्त आत्मोत्थान भिक्षुणी विहार' से उसकी ओर आती दिखाई दी। भिक्षुणी को देखते ही आ Q के मुंह से गाली निकल जाती थी। आज इतना अपमानित होने के बाद वह भला उसे गाली दिए बिना कैसे रह सकता था? जब उसे अपने अपमान की बात याद आई, तो उसका पारा फिर से चढ़ने लगा।

"अच्छा, तो आज मुझे दुर्भाग्य का सामना इसलिए करना पड़ा क्योंकि इसकी शक्ल देखनी थी।" उसने मन-ही-मन कहा।

भिक्षुणी के निकट पहुंचकर उसने जोर से खकारकर थूका, "आख़ थू! ··· आख़ थू!"

छोटी भिक्षुणी उसकी ओर ज़रा भी ध्यान दिए बिना सिर नीचा करके

चलती रही। आ Q उसके पास जा पहुंचा और हाल ही में मूंडे गए उसके सिर पर हाथ फेरता हुआ पागल की तरह ठहाका लगाकर बोला, "अरे, ओ, गंजी, जल्दी जा! तेरा भिक्षु तेरी राह देख रहा होगा।"

"कौन हो जी तुम मुझे छूने वाले?" भिक्षुणी ने कहा। उसका चेहरा शर्म से लाल हो गया और कदम तेज़ी से उठने लगे।

शराबखाने में मौजूद लोग खिलखिलाकर हंस पड़े। यह देखकर कि उसका कारनामा लोगों ने पसंद किया है, आ Q को बड़ी खुशी हुई।

"अगर तुझे तेरा भिक्षु छू सकता है, तो भला मैं क्यों नहीं छू सकता?" यह कहते हुए उसने भिक्षुणी का गाल नोच लिया।

एक बार फिर शराबखाने में मौजूद लोग खिलखिलाकर हंस पड़े। आ Q और ज़्यादा खुशी महसूस करने लगा और जो लोग दाद दे रहे थे उन्हें और अच्छी तरह संतुष्ट करने के लिए उसने फिर एक बार भिक्षुणी का गाल ज़ोर से नोच लिया। तब कहीं उसे जाने दिया।

इस घटना के दौरान वह मुछंदर वाङ और नकली विदेशी दरिंदे को बिल्कुल भूल चुका था। उसे लगा जैसे सारे दिन की दुर्भाग्यपूर्ण घटनाओं का बदला ले चुका हो। आश्चर्य की बात यह थी कि मार खाने के बाद की तुलना में अब वह कहीं ज़्यादा तनावहीन, हलका और प्रफुल्लित अनुभव कर रहा था, जैसे हवा में तैरने के लिए तैयार हो।

"आ Q, तू निपूता ही मर जाए!" छोटी भिक्षुणी ने दूर जाकर रुआंसी आवाज़ में कोसा।

आ Q एक बार फिर खिलखिलाकर हंस पड़ा। शराबखाने में मौजूद लोग भी खिलखिलाकर हंस पड़े, जबकि उन्हें आ Q से कम ही संतोष हुआ।

अध्याय चार

प्रेम की दुखांत कहानी

कुछ विजेता ऐसे होते हैं, जो अपनी जीत से तब तक खुश नहीं होते, जब तक उनके प्रतिद्वंद्वी बाघ या बाज की तरह खूंख्वार न हों,

अगर उनके प्रतिद्वंद्वी भेड़-बकरी या मुर्गी की तरह डरपोक हों, तो उन्हें अपनी जीत बिल्कुल खोखली प्रतीत होती है। कुछ दूसरे विजेता ऐसे होते हैं, जो अपने सभी प्रतिद्वंद्वियों को पछाड़कर, सभी शत्रुओं को मौत के घाट उतारकर या उनसे आत्मसमर्पण करवाकर और सरासर नाक रगड़वाकर यह महसूस करने लगते हैं कि अब उनका कोई शत्रु, प्रतिद्वंद्वी या मित्र नहीं रहा, केवल स्वयं ही रह गए हैं, सर्वोच्च, एकाकी, निराश और परित्यक्त। तब वे अपनी जीत को एक दुखांत घटना समझने लगते हैं, परन्तु हमारा हीरो इतना कमज़ोर नहीं था। वह सदा विजयोल्लास से भरा रहता था। यह शायद इस बात का प्रमाण था कि चीन नैतिक दृष्टि से बाक़ी दुनिया की तुलना में श्रेष्ठ है।

जरा आ Q को तो देखिए, वह कितना हलका और प्रफुल्लित अनुभव कर रहा है, जैसे उड़ने को तैयार हो!

यह जीत वास्तव में विचित्र परिणामों से रहित नहीं थी। काफ़ी समय तक उसे ऐसा महसूस होता रहा, जैसे उड़ने को तैयार हो, और शीघ्र ही वह उड़ता हुआ कुल-देवता के मंदिर में जा पहुंचा, जहां वह प्रायः लेटते ही खर्राटे भरने लगता था, लेकिन आज रात उसकी आंखों से नींद भाग चुकी थी, उसे महसूस हो रहा था कि उसके अंगूठे और तर्जनी को न मालूम क्या हो गया है। उनमें आम दिनों की तुलना में अधिक कोमलता आ गई थी। यह कहना कठिन था कि उस छोटी भिक्षुणी के चेहरे की कोई मुलायम व कोमल वस्तु उसकी उंगलियों से चिपक गई थी या भिक्षुणी के गालों की रगड़ से उसकी उंगलियां मुलायम हो गई थीं।

"आ Q, तू निपूता ही मर जाए!"

ये शब्द आ Q के कानों में बार-बार गूंज रहे थे। वह सोचने लगा, "ठीक है, मेरी भी पत्नी होना चाहिए अगर कोई आदमी निपूता ही मर जाए, तो मृतात्मा का पिंडदान कौन करेगा?··· मेरी पत्नी अवश्य होना चाहिए।" जैसे कि कहावत है, "जिसके पुत्र नहीं होता, उसका जैसा व्यवहार होता है, उसके तीन रूप होते हैं, जिनमें सबसे बुरा है निःसन्तान होना।"[1] यह बड़े दुर्भाग्य की बात है कि "निःसन्तान मृतात्मा भूखी ही रह जाती है।"[2] स्पष्ट

1. मेनशियस (372-289 ईसापूर्व) का एक उद्धरण।
2. प्राचीन ग्रंथ 'च्वो च्वान' का उद्धरण।

है कि उसके विचार ऋषि-मुनियों की शिक्षा के बिल्कुल अनुकूल थे, पर बड़े दुख की बात है कि बाद में उसके सिर पर पागलपन का भूत सवार हो गया।

औरत! औरत!—उसने सोचा।

वह भिक्षु उसका स्पर्श करता है··· औरत! औरत!··· औरत!—उसने फिर सोचा।

हम यह कभी नहीं जान पाएंगे कि उस रात आ Q कब सोया, मगर इसके बाद शायद हमेशा ही उसे अपनी उंगलियां थोड़ी मुलायम महसूस होने लगीं, उसके दिमाग़ में एक नशा-सा छाने लगा। औरत!—वह लगातार सोचता रहता।

इससे हम देख सकते हैं कि औरत मानव जाति के लिए अभिशाप है। चीन के अधिकांश पुरुषों को अगर स्त्रियां बर्बाद न कर देतीं, तो शायद वे ऋषि-मुनि बन गए होते। शाङ राजवंश का विनाश ता ची ने किया था और चओ राजवंश का उन्मूलन पाओ स ने, जहां तक छिन राजवंश का सवाल है, जबकि इस बात का ऐतिहासिक प्रमाण नहीं है, फिर भी यदि हम यह मान लें कि उसका पतन भी किसी औरत के ही कारण हुआ, तो शायद गलत नहीं होगा। यह सच है कि तुङ च्वो की मृत्यु का कारण भी त्याओ छान ही थी।[1]

आ Q भी शुरू में पक्के नैतिक मूल्यों वाला आदमी था। जबकि हमें इस बात की जानकारी नहीं है कि उसका मार्गदर्शन अच्छे शिक्षक ने किया था या नहीं, वह 'स्त्री-पुरुष को दृढ़ता से एक दूसरे से अलग रखने' के सिद्धांत का हमेशा बड़ी ईमानदारी से पालन करता था और छोटी भिक्षुणी और नक़ली विदेशी दरिंदे के पाखंडीपन की ईमानदारी से भर्त्सना करने में कभी पीछे नहीं रहता था। उसकी राय थी, "सभी भिक्षुणियां गुप्त रूप से भिक्षुओं के साथ अवैध संबंध रखती हैं। अगर कोई औरत रास्ते में अकेली चल रही हो, तो वह ज़रूर बुरे मर्दों को फुसलाना चाहती है। जब कोई मर्द और औरत आपस में बातें कर रहे हों, तो दोनों ज़रूर अपनी मुलाक़ात का

1. ता ची ईसापूर्व बारहवीं शताब्दी में शाङ राजवंश के अंतिम राजा की रखैल थी। पाओ स ईसापूर्व आठवीं शताब्दी में पश्चिमी चओ राजवंश के अंतिम राजा की रखैल थी। त्याओ छान ईसापूर्व तीसरी शताब्दी के एक शक्तिशाली मंत्री तुङ च्वो की रखैल थी।

स्थान व समय निश्चित कर रहे होंगे।" इस तरह के लोगों को सुधारने के लिए वह उन्हें बड़े खूंख्वार ढंग से घूरता था, ऊंची आवाज़ में तीखा व्यंग्य करता था, या अगर एकांत हो, तो पीछे से पत्थर तक मार देता था।

कौन कह सकता था कि लगभग तीस बरस की आयु में, जबकि एक आदमी को 'दृढ़ता से खड़ा'[1] होना चाहिए, वह इस तरह एक छोटी भिक्षुणी पर फिसल जाएगा? शास्त्रों के अनुसार इस प्रकार का छोटापन अत्यंत निंदनीय होता है, स्त्री सचमुच ही घृणा की पात्र होती है। यदि उस छोटी भिक्षुणी का चेहरा मुलायम न होता, तो आ Q उस पर मोहित न होता, उसका चेहरा किसी कपड़े से ढका होता, तो भी ऐसी स्थिति न आती। आज से पांच-छः साल पहले खुले मंच पर आपेरा देखते समय उसने एक दर्शक स्त्री के पैर में चुटकी भर ली थी।

लेकिन चूंकि उसके पैर पाजामे से ढके थे, इसलिए उस घटना से आ Q को ऐसे उन्माद की अनुभूति नहीं हुई थी, जैसी कि आज हो रही है। छोटी भिक्षुणी का चेहरा ढका हुआ नहीं था, जो उसके घिनौने पाखंडीपन का एक दूसरा सबूत था।

औरत—आ Q सोचता रहा।

वह उन औरतों पर कड़ी नज़र रखता, जिनके बारे में उसे ख्याल होता कि वे "बुरे मर्दों को फुसलाना चाहती हैं।" लेकिन वे उसकी ओर देखकर मुस्कराती ही नहीं थीं। जब कभी कोई औरत उससे बात करती, तो वह बड़े ध्यान से सुनता था, लेकिन अब तक उसे एक भी औरत ऐसी नहीं मिली थी, जिसने उससे गुप्त रूप से मिलने के बारे में कोई बात कही हो। ओह, यह औरत के घिनौनेपन का एक दूसरा सबूत है, वे सब दरअसल एक झूठी शालीनता का लबादा ओढ़े रहती हैं।

एक दिन जब आ Q चाओ साहब के घर चावल पीस रहा था, तो रात का भोजन करने के बाद वह रसोई में बैठकर चिलम सुलगाने लगा। अगर किसी और का घर होता, तो भोजन के बाद वह फ़ौरन घर लौट गया होता। लेकिन चाओ परिवार के लोग रात का खाना थोड़ा जल्दी खा लेते थे। जबकि वहां यह नियम था कि खाना खाने के बाद कोई रोशनी नहीं कर

1. कनफ्यूशियस ने कहा था कि वह तीस वर्ष की आयु में 'दृढ़ता से खड़ा' है। बाद में इस वाक्यांश का प्रयोग तीस वर्ष की उम्र बताने के लिए होने लगा।

सकता था और सब बिस्तर में पहुंच जाते थे, लेकिन कभी-कभी इसका अपवाद भी देखने को मिलता था। चाओ साहब के पुत्र को काउंटी की सरकारी परीक्षा पास करने से पहले इस बात की अनुमति थी कि वह रोशनी करके परीक्षा में आने वाले निबंधों की तैयारी करे, इसी तरह जब आ Q वहां काम करने जाता था, तो उसे इस बात की अनुमति थी कि चावल पीसने के लिए रोशनी किए रखे। इस अपवाद के कारण अपना काम शुरू करने के पहले आ Q अब भी रसोई में बैठा चिलम पी रहा था।

चाओ परिवार की एकमात्र नौकरानी आमा ऊ ने जब घर के बर्तन मांज लिए, तो वह भी लम्बी बेंच पर बैठकर आ Q से बातें करने लगी, "मालकिन ने दो दिन से कुछ नहीं खाया, क्योंकि मालिक रखैल लाना चाहते हैं…"

"औरत… आमा ऊ… यह छोटी-सी विधवा!" आ Q ने सोचा।

"हमारी युवा मालकिन आठवें चंद्र-मास में बच्चा पैदा करने वाली हैं।"

"औरत…!" आ Q सोचता रहा।

उसने अपनी चिलम एक ओर रख दी और खड़ा हो गया।

"हमारी युवा मालकिन…" आमा ऊ बोलती गई।

"आ, मेरे साथ सो जा।" आ Q ने अचानक कहा और आगे बढ़कर उसके पैरों पर गिर पड़ा।

एक पल के लिए वहां बिल्कुल सन्नाटा छा गया।

"उई मां!" आमा ऊ अवाक् रह गई। सहसा वह कांप उठी और चीख़ती हुई वहां से भाग गई। कुछ देर बाद उसके सिसकने की आवाज़ आने लगी।

दीवार के सामने घुटनों के बल बैठा आ Q भी अवाक् रह गया। खाली बेंच को दोनों हाथों से पकड़कर वह धीरे-धीरे उठा। उसे एक धुंधला-सा अहसास हो रहा था कि कुछ-न-कुछ गड़बड़ अवश्य हो गई है। वास्तव में इस समय वह खुद भी बहुत घबराया हुआ था। हड़बड़ाकर उसने अपनी चिलम कमरबन्द में खोंस ली और चावल पीसने के लिए जाने लगा, लेकिन तभी किसी ने जोर से उसके सिर पर वार किया। घूमकर देखा, तो काउंटी

की सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी सामने खड़ा दिखाई दिया। उसके हाथ में एक लंबा-सा बांस था।

"तेरी हिम्मत कैसे हुई··· इतनी हिम्मत कैसे हुई?"

लंबा बांस आ Q के कंधों के ऊपर पहुंच गया। जब उसने अपना सिर दोनों हाथों से ढक लिया, तो वार उसकी उंगलियों के पोरों पर पड़ा। वह दर्द से कराह उठा। जब वह रसोई के दरवाज़े से भाग रहा था, तो उसे लगा पीठ पर भी बांस का वार हुआ है।

"अरे ओ कछुए की औलाद!" सफल प्रत्याशी ने पीछे से टकसाली ज़बान में जोर से गाली दी।

आ Q भागकर धान कूटने के बरामदे में जा पहुंचा। वहां वह अकेला ही खड़ा था। उसकी उंगलियों के पोरों में अब भी दर्द हो रहा था। "कछुए की औलाद!" ये शब्द उसके कानों में अब भी गूंज रहे थे। इसे केवल वे धनी लोग ही इस्तेमाल करते थे, जो किसी-न-किसी रूप में सरकारी अफ़सर रह चुके थे। इसकी वजह से वह और अधिक डर गया और इस घटना का उसके मस्तिष्क पर बहुत गहरा असर पड़ा था। अब तक 'औरत' के बारे में सभी तरह के विचार उसके मस्तिष्क से ग़ायब हो चुके थे। गालियां और मार खाने के बाद उसे ऐसा लगा था जैसे वह सारा मामला ख़त्म हो चुका हो। खुश होकर वह फिर से चावल पीसने लगा। कुछ देर चावल पीसने के बाद उसे गर्मी लगने लगी और वह अपनी कमीज़ उतारने के लिए रुक गया।

जब आ Q अपनी कमीज़ उतार रहा था तो उसे बाहर शोर सुनाई दिया। चूंकि आ Q को इस तरह के शोर-शराबे में शामिल होना पसंद था, इसलिए शोर का पता लगाता हुआ वह बाहर निकला। वह सीधा चाओ साहब के अंदर वाले आंगन में जा पहुंचा। जबकि शाम का समय हो चुका था, फिर भी बहुत से लोग वहां जमा थे। चाओ परिवार के सभी लोग मौजूद थे, जिनमें वह मालकिन भी थी, जिसने दो दिन से खाना भी नहीं खाया था। इसके अलावा पड़ोसिन श्रीमती चओ और संबंधी चाओ पाए-येन व चाओ स-छन भी मौजूद थे।

युवा मालकिन आमा ऊ को नौकरों के कमरे से बाहर ले जाते हुए कह रही थीं, "बाहर चल··· अपने कमरे में बैठकर दुखी क्यों हो रही है?"

"हर आदमी जानता है कि तू एक भली औरत है", श्रीमती चओ पास से बोली, "तुझे आत्महत्या का विचार दिमाग से निकाल देना चाहिए।"

आमा ऊ रोती रही और मन-ही-मन कुछ बड़बड़ाती रही।

"यह खूब नाटक है," आ Q ने सोचा। "यह ज़रा-सी विधवा न जाने कैसे-कैसे गुल खिलाना चाहती है?" पता लगाने के लिए वह चाओ स-छन के पास जा ही रहा था कि अचानक उसकी नज़र चाओ साहब के बड़े लड़के पर पड़ी, जो लंबा बांस हाथ में उठाए उसकी ओर बढ़ रहा था। लंबे बांस को देखते ही उसे याद आ गया कि उसकी पिटाई हो चुकी है और वह समझ गया कि यहां जो हंगामा मचा हुआ है, उसका किसी-न-किसी रूप में उसके साथ अवश्य संबंध है। वह पीछे मुड़ा और भाग खड़ा हुआ, इस आशा से कि धान कूटने के आंगन में जा छिपेगा, लेकिन यह नहीं सोच सका कि लंबा बांस उसे पीछे नहीं लौटने देगा। इसके बाद वह फिर से मुड़ा और दूसरी दिशा में भागता हुआ बिना कोई गड़बड़ किए पिछले दरवाज़े से बाहर चला गया। कुछ ही समय में वह कुल-देवता के मंदिर में जा पहुंचा।

कुछ देर ऐसे ही बैठने के बाद आ Q सर्दी से ठिठुरने लगा और उसके रोंगटे खड़े हो गए। जबकि वसंत आ चुका था, फिर भी रातें काफी ठण्डी थीं और कमर नंगी नहीं रखी जा सकती थी। उसे याद आया कि उसकी कमीज़ चाओ परिवार के घर रह गई है। डर था कि अगर उसे लेने गया, तो सफल प्रत्याशी के लंबे बांस की मार का मज़ा कहीं फिर न चखना पड़े।

और तभी बेलिफ अंदर आया। "तेरा सत्यानास हो आ Q के बच्चे!" बेलिफ ने कहा। "अरे ओ ग़द्दार, तू चाओ परिवार की नौकरानी पर हाथ रखने से मानेगा नहीं क्या? तूने मेरी नींद ही हराम कर दी है। तेरा सत्यानास हो जाए!···"

इस तरह गालियों की बौछार होने पर यह स्वाभाविक था कि आ Q चुप ही रहता। रात का समय था, इसलिए आ Q को बेलिफ़ के हाथ में दोगुने पैसे, यानी चार सौ तांबे के सिक्के रखने थे, लेकिन उसके पास एक कौड़ी भी नहीं थी, इसलिए उसने अपना फैल्टहैट ज़मानत के तौर पर देकर नीचे लिखी पांच शर्तें मंज़ूर कर लीं–

1. अगले दिन सुबह आ Q एक पौंड वाली दो लाल मोमबत्तियां और एक बंडल अगरबत्तियां चाओ परिवार के पास भेजकर अपने पाप का प्रायश्चित करेगा।

2. ताओ धर्म के उस पुजारी की दक्षिणा आ Q देगा, जिसे चाओ परिवार ने भूत-प्रेतों को भगाने के लिए बुलाया है।
3. भविष्य में आ Q चाओ परिवार के घर में बिल्कुल क़दम नहीं रखेगा।
4. अगर आमा ऊ को दुर्भाग्य से कुछ हो गया, तो उसके लिए आ Q को ही दोषी ठहराया जाएगा।
5. आ Q अपनी उजरत और कमीज़ लेने चाओ परिवार के घर नहीं जाएगा।

आ Q ने सारी शर्तें मान लीं, पर अफ़सोस की बात है कि उसके पास नक़द पैसा बिल्कुल नहीं था। भाग्य से वसंत का मौसम आ चुका था और रूई के लिहाफ़ के बिना भी गुज़ारा हो सकता था। अतः उसने अपना लिहाफ़ दो हज़ार तांबे के सिक्कों के बदले रहन रखकर सारी शर्तें पूरी कर लीं। अपनी नंगी पीठ झुकाकर नाक रगड़ने के बाद भी आ Q के पास कुछ तांबे के सिक्के शेष रह गए थे, पर उन्हें देकर बेलिफ़ से अपनी फैल्टहैट छुड़ाने के बदले उसने सारा पैसा शराब में उड़ा दिया।

चाओ परिवार ने न तो आ Q की दी हुई अगरबत्तियां जलाईं और न मोमबत्तियां। उनका इस्तेमाल मालकिन भगवान बुद्ध की पूजा के लिए कर सकती थीं, इसलिए उन्हें अलग रख दिया। आ Q की फटी-पुरानी कमीज़ से युवा मालकिन के उस बच्चे की लंगोटियां बना दी गईं, जो आठवें चंद्र-मास में जन्मा। बचे-हुए चिथड़ों से आमा ऊ ने अपने जूते का सोल तैयार कर लिया।

अध्याय पांच

जीविका की समस्या

चाओ परिवार के सामने नाक रगड़ने और सारी शर्तें मान लेने के बाद आ Q हमेशा की तरह कुल-देवता के मंदिर में लौट आया। सूरज डूब गया था। उसे कुछ अजीब-सा लग रहा था। काफ़ी विचार करने के बाद वह इस नतीजे पर पहुंचा कि शायद नंगी पीठ होने के कारण ही उसे ऐसा

महसूस हो रहा है। उसे याद आया, उसके पास एक पुरानी अस्तर वाली जाकिट अब भी मौजूद है। वह जाकिट पहनकर लेट गया। आंख खुली, तो देखा, सूरज की रोशनी पश्चिमी दीवार के ऊपर तक पहुंच चुकी है। "अरे, सत्यानास हो गया…!" कहता हुआ वह उठा।

वह हमेशा की ही तरह गलियों में आवारागर्दों की तरह घूमने लगा। उसे एक बार फिर कुछ अजीब-सा लगने लगा, जबकि इसकी तुलना नंगी पीठ के कारण होने वाली शारीरिक असुविधा से नहीं की जा सकती थी। उस दिन के बाद वेइच्वाङ की सभी औरतें आ Q से कतराने लगीं जब भी उसे आता हुआ देखतीं, घर के भीतर छिप जातीं। यहां तक कि श्रीमती चओ भी, जो लगभग पचास बरस की हो चुकी थीं, उसे देखते ही घबराकर दूसरी औरतों के साथ घर में घुस गईं और उन्होंने अपनी ग्यारह साल की लड़की को भी अंदर बुला लिया। यह सब आ Q को बड़ा अजीब-सा लगा, "कुतिया कहीं की!" उसने सोचा, "ये औरतें अचानक नई-नवेलियों की तरह शर्म करने लगी हैं…"

लेकिन जब कई दिन बीत गए, तो उसे और भी अधिक अजीब-सा लगने लगा। एक तो शराबखाने वाले ने उसे उधार देना बंद कर दिया, फिर कुल-देवता के मंदिर के बूढ़े पुजारी ने उससे कुछ ऐसी कड़वी बातें कहीं, जिनसे लगा कि वह आ Q को वहां से निकालना चाहता हो, फिर कई दिनों तक उसे ठीक-ठीक याद नहीं कितने दिनों तक, उसे उजरत के लिए बुलाने एक भी आदमी नहीं आया। शराबख़ाने में उधार मिलना बंद होने पर भी वह काम कर सकता था, लेकिन अगर उजरत के लिए बुलाने के लिए कोई नहीं आया, तो क्या वह भूखा मरेगा? यह स्थिति सचमुच उसके लिए एक अभिशाप थी।

जब हालात आ Q की बर्दाश्त से बाहर हो गए, तो वह उन घरों में गया, जहां उसे नियम से काम मिलता रहता था, केवल चाओ साहब के घर को छोड़कर, जिसकी दहलीज पार करने की इजाज़त उसे नहीं थी, ताकि मालूम कर सके कि आखिर बात क्या है, लेकिन हर जगह लोग उसके साथ अजीब ढंग से पेश आए। घर से बाहर आने वाला आम तौर पर पुरुष ही होता, जो बहुत चिढ़ा हुआ जान पड़ता था और आ Q को इस तरह

दुतकारता, जैसे वह कोई भिखारी हो, "यहां तुझे कुछ नहीं मिलेगा, कुछ भी नहीं! भाग जा यहां से!"

आ Q को यह सब देखकर और भी ज़्यादा आश्चर्य होने लगा, "इन लोगों को पहले अपने काम में सहायता के लिए आवश्यक किसी-न-किसी की ज़रूरत होती थी", उसने सोचा, "अचानक यह कैसे हो सकता है कि इनके पास कोई काम ही नहीं रह गया हो। अवश्य दाल में कुछ काला है।" अच्छी तरह पूछताछ करने पर पता चला कि जब भी उनके यहां कोई छोटा-मोटा काम होता, तो वे लोग युवक D को बुला लेते। युवक D दुबला-पतला, कमज़ोर और कंगाल-सा व्यक्ति था, जो आ Q की नज़रों में मुछंदर वाङ से भी गया-बीता था। कौन जानता था कि यह निचले दर्जे का आदमी उसकी रोज़ी छीन लेगा। इसलिए इस बार आ Q का रोष और दिनों के मुक़ाबले कहीं ज़्यादा भड़क उठा। रास्ते में चलते-चलते वह गुस्से से उबल पड़ा और अचानक हाथ उठाकर गाने लगा—"हड्डी-पसली चूर तुम्हारी लोहे की छड़ से कर दूंगा!…"[1]

कुछ दिनों बाद छ्येन साहब के घर के सामने उसकी मुलाकात युवक D से हो गई। जब दो शत्रु मिलते हैं, तो उनकी आंखों से अंगारे बरसने लगते हैं। जब आ Q पास पहुंचा, तो युवक D सन्नाटे में खड़ा रह गया।

"अरे, ओ गधे!" आ Q फुंफकारा। उसकी आंखें आग उगल रही थीं और मुंह से झाग निकल रहे थे।

"मैं एक कीड़ा हूं, बस, इससे ज़्यादा और क्या चाहते हो?" युवक D ने कहा।

उसकी इस नर्मी से आ Q का पारा और अधिक चढ़ गया, लेकिन उसके पास लोहे की छड़ नहीं थी, इसलिए वह हाथ फैलाकर युवक D की चोटी पकड़ने के लिए झपटा। युवक D एक हाथ से अपनी चोटी की रक्षा करता हुआ, दूसरे हाथ से आ Q की चोटी पकड़ने के लिए आगे बढ़ा। इस पर आ Q ने भी खाली हाथ से अपनी चोटी बचाने की कोशिश की। आ Q ने युवक D को पहले कभी कुछ नहीं समझा था, मगर चूंकि कुछ समय

1. **'नाग और बाघ की लड़ाई' नामक आपेरा की पंक्ति। यह आपेरा शाओशिङ में काफ़ी लोकप्रिय है। इसमें बताया गया है कि सुङ राजवंश के प्रथम सम्राट चाओ ख्वाङ-इन ने एक अन्य सेनापति से कैसे युद्ध किया था।**

से आ Q भुखमरी का सामना कर रहा था, इसलिए वह भी अपने प्रतिद्वंद्वी की ही तरह दुबला-पतला और कमज़ोर हो गया था। इस तरह दोनों ही बराबर के प्रतिद्वंद्वी लग रहे थे। चार हाथों ने दो सिर थामे हुए थे, दोनों आदमी कमर झुकाए थे और कोई आधे घंटे तक छ्येन परिवार की सफ़ेद दीवार पर उनकी नीली इंद्रधनुषाकार परछाईं पड़ती रही।

"बहुत हो चुका! खत्म करो!" कुछ दर्शकों ने कहा। वे शायद उनके बीच सुलह कराना चाहते थे।

"बहुत अच्छा, बहुत खूब!" कुछ दूसरे दर्शकों ने कहा, लेकिन यह साफ़ मालूम न हो सका कि उनका उद्देश्य क्या था, सुलह कराना, लड़ाई करने वालों की तारीफ़ करना या उन्हें और अधिक लड़ने के लिए उकसाना।

मगर तीनों योद्धाओं ने उनकी एक न सुनी। अगर आ Q तीन क़दम आगे बढ़ता तो युवक D तीन क़दम पीछे हट जाता, इसके बाद दोनों स्थिर खड़े रहते। अगर युवक D तीन कदम आगे बढ़ता, तो आ Q तीन क़दम पीछे हट जाता, इसके बाद दोनों फिर से स्थिर खड़े रहते। लगभग आधे घंटे बाद (वेइच्वाङ में केवल गिनी-चुनी ही घड़ियां ऐसी थीं, जो टन्न की आवाज़ के साथ घंटा बजाती थीं, इसलिए ठीक समय बताना मुश्किल था, हो सकता है बीस ही मिनट हुए हों) उनके सिर से भाप उठने लगी और चेहरों पर पसीने की धार बहने लगी। आ Q ने अपने हाथ पीछे खींच लिए। उसी क्षण युवक D ने भी अपने हाथ पीछे खींच लिए। दोनों ने एक साथ कमर सीधी की, दोनों एक साथ पीछे हटे और भीड़ को चीरते हुए निकल गए।

"तेरी ख़बर फिर कभी लूंगा, नीच!" आ Q ने उसे कोसा।

"मैं भी तेरी खबर फिर कभी लूंगा, नीच!" युवक D ने भी यही वाक्य दोहरा दिया।

इस महायुद्ध में न तो किसी की विजय हुई और न पराजय यह भी मालूम न हो सका कि दर्शकों को इससे संतोष हुआ कि नहीं, क्योंकि उनमें से एक भी आदमी ने अपनी राय प्रकट नहीं की। यह सब होने के बावजूद आ Q को रोजगार देने कोई नहीं आया।

एक दिन जब मौसम में कुछ गर्मी थी और गुलाबी हवा से गर्मी के आने का आभास हो रहा था तो आ Q को कुछ ठंड महसूस होने लगी लेकिन

यह ठंड ऐसी थी, जिसे वह आसानी से बर्दाश्त कर सकता था। उसके आगे सबसे बड़ी चिंता भूखे पेट की थी। वह अपना रूई का लिहाफ़, फ़ैल्टहैट और कमीज़ काफ़ी पहले ही गंवा चुका था। बाद में उसने अपनी रूई वाली जाकिट को भी बेच दिया। अब उसके पास केवल एक पाजामा बच गया, जिसे उतारना उसके लिए संभव नहीं था। यह सच है कि उसके पास अस्तर वाली एक पुरानी जाकिट और थी, लेकिन वह बिल्कुल चिथड़े हो चुकी थी और केवल जूते के सोल बनाने योग्य रह गई थी। वह काफ़ी समय से आशा कर रहा था कि उसे कहीं रास्ते में पड़ा पैसा मिल जाएगा, लेकिन अभी तक सफल नहीं हो पाया था, वह यह आशा भी कर रहा था कि शायद किसी दिन उसे अपने टूटे-फूटे कमरे में अचानक कोई धन मिल जाएगा। इसे पाने के लिए उसने कमरे की पूरी तरह खोजबीन भी कर डाली थी, लेकिन कमरा बिल्कुल खाली था, उसमें फूटी कौड़ी भी नहीं थी। इसके बाद उसने तय कर लिया कि भोजन की खोज में गांव से बाहर चला जाएगा।

भोजन की खोज में वह सड़क पर जा रहा था, तो सामने हमेशा से परिचित शराबख़ाना और भपौरी रोटी पर नज़र पड़ी, लेकिन वहां एक पल के लिए भी रुके बिना, यहां तक कि उन्हें पाने के लिए ललचाए बिना ही आगे बढ़ गया। उसे इन चीजों की तलाश नहीं थी, जबकि यह बात वह खुद नहीं जानता था कि उसे किस चीज़ की तलाश थी।

वेइच्वाङ कोई बड़ा गांव नहीं था, इसलिए जल्दी ही उसे पीछे छोड़कर आ Q आगे बढ़ गया। गांव के बाहर अधिकांश धान के खेत फैले हुए थे। दूर क्षितिज तक धान के कोमल अंकुरों की हरियाली छाई थी। कहीं-कहीं गोल काली आकृतियां हिलती-डुलती दिखाई दे रही थीं। वे खेतों में काम करने वाले किसान थे, लेकिन ग्रामीण जीवन की इस आनंदभरी अनुभूति से विरक्त आ Q लगातार अपने रास्ते चला जा रहा था, क्योंकि वह अच्छी तरह इस बात को जानता था कि यह भोजन की खोज से कोसों दूर है। अंत में वह 'शांत आत्मोत्थान भिक्षुणीविहार' की चारदीवारी के पास जा पहुंचा।

यह भिक्षुणीविहार भी चारों ओर से धान के खेतों से घिरा था। इसकी सफ़ेद दीवारें हरियाले खेतों के बीच साफ़ तौर से दिखाई दे रही थीं। पिछवाड़े की ओर मिट्टी की नीची दीवार के अंदर की ओर सब्ज़ियों का

बग़ीचा था। एक क्षण के लिए आ Q ठिठका और अपने चारों ओर नज़र डाली। आसपास कोई नज़र नहीं आया, इसलिए वह एक पेड़ के सहारे उस नीची दीवार पर चढ़ गया। मिट्टी की दीवार सहसा भरभराकर गिरने को हुई। आ Q डर के मारे कांपने लगा, लेकिन शहतूत के पेड़ की शाख से लटककर दीवार फांदता हुआ अंदर चला गया। वहां सब्जियों की भरमार थी, लेकिन पीली शराब, भपौरी रोटी या अन्य किसी खाद्य पदार्थ का कहीं कोई निशान नहीं था। पश्चिमी दीवार के निकट बांसों का झुरमुट खड़ा था, जहां बांस की कोमल कोंपलें फूट रही थीं, लेकिन दुर्भाग्य से ये कोंपलें पकी हुई नहीं थीं। सरसों के पौधे खड़े थे, जो काफ़ी समय पहले ही बीज के लिए चुन लिए गए थे, राई के पौधों पर फूल खिलने वाले थे और पत्ता-गोभी की छोटी-छोटी गांठें बड़ी कठोर मालूम पड़ रही थीं।

आ Q को परीक्षा में अनुत्तीर्ण किसी विद्वान के समान निराशा हुई। वह धीरे-धीरे बग़ीचे के फाटक की ओर बढ़ने लगा। सहसा वह खुशी से झूम उठा। उसकी नज़र सामने शलजम की क्यारी पर पड़ी। नीचे झुककर उसने शलजम खोदना शुरू कर दिया। अचानक फाटक के पीछे से एक घुटा हुआ सिर नज़र आया, जो तुरंत ग़ायब हो गया। यह वास्तव में वही छोटी भिक्षुणी थी। जबकि आ Q छोटी भिक्षुणी जैसे लोगों को बहुत नफ़रत की नज़र से देखता था, फिर भी कभी-कभी ऐसा समय आ जाता है, जब "होशियारी को ही सबसे बड़ी अक़्लमंदी समझा जाता है।" उसने जल्दी-जल्दी चार शलजम उखाड़े, पत्तियां तोड़कर फेंक दीं और उन्हें अपनी जाकिट में लपेट लिया। तब तक एक बूढ़ी भिक्षुणी बाहर आ पहुंची।

"भगवान बुद्ध हमारी रक्षा करें! अरे आ Q, तू हमारे बग़ीचे में कूदकर शलजम चुराने क्यों आया है? हे भगवान, यह कितना बड़ा पाप है! भगवान बुद्ध हमारी रक्षा करें!"

"मैं तुम्हारे बग़ीचे में कब कूदा और तुम्हारे शलजम कब चुराए?" आ Q ने उत्तर दिया और भिक्षुणी की ओर देखता हुआ वहां से चल पड़ा।

"अभी-अभी चुराए हैं। देख, यह क्या है?" उसकी जाकिट की तहों की ओर इशारा करते हुए बूढ़ी भिक्षुणी बोली।

"क्या ये तुम्हारे हैं? क्या तुम इसे साबित कर सकती हो? तुम…"

अपनी बात पूरी करने से पहले ही आ Q सिर पर पांव रखकर भाग

खड़ा हुआ। उसके पीछे एक बहुत मोटा काला कुत्ता लपका। शुरू में यह कुत्ता सामने के फाटक पर था। वह पीछे के बगीचे में कैसे पहुंचा यह बड़े आश्चर्य की बात थी। काला कुत्ता गुर्राता हुआ आ Q के पीछे दौड़ा और उसकी टांग पर दांत मारने ही वाला था कि उसी समय उसकी जाकिट में से एक शलजम नीचे गिर गया। कुत्ता चौंक पड़ा और एक क्षण के लिए वहीं रुक गया। अवसर का लाभ उठाकर आ Q शहतूत के पेड़ पर चढ़ गया और मिट्टी की दीवार फांदकर शलजम समेत दूसरी ओर जा गिरा। काला कुत्ता शहतूत के पेड़ के पास भौंकता रह गया और बूढ़ी भिक्षुणी भगवान को याद करती खड़ी रही।

कहीं भिक्षुणी काले कुत्ते को उसके पीछे फिर न दौड़ा दे, इस डर से आ Q ने झट अपने शलजम बटोर लिए और दो-चार छोटे पत्थर हाथ में उठाकर भाग निकला। काला कुत्ता फिर नहीं आया। आ Q ने पत्थर नीचे फेंक दिए और शलजम खाता हुआ आगे बढ़ गया। उसने मन में सोचा, "यहां कुछ नहीं मिलेगा। शहर जाना ही ठीक रहेगा।"

तीसरा शलजम खा चुकने तक उसने शहर जाने का पक्का फ़ैसला कर लिया था।

अध्याय छः

उत्थान से पतन की ओर

उस बरस चंद्रोत्सव से पहले आ Q वेइच्वाङ में नहीं दिखाई दिया। उसके लौटने की ख़बर सुनकर हर आदमी आश्चर्य करने लगा और पुरानी बातों को याद करके सोचने लगा कि इस बीच वह गया कहां था। इससे पहले दो-चार अवसरों पर जब आ Q शहर गया था, तो लोगों को पहले से ही बड़ी शान से सूचित कर गया था, इस बार उसने ऐसा नहीं किया, इसलिए उसके शहर जाने का किसी को पता ही न चला। शायद उसने कुल-देवता के मंदिर के बूढ़े पुजारी को बताया हो, लेकिन वेइच्वाङ की प्रथा के अनुसार शहर जाना केवल तभी महत्त्वपूर्ण समझा जाता था जब चाओ साहब, छ्येन साहब या काउंटी की सरकारी परीक्षा में सफल

प्रत्याशी शहर जाते थे। यहां तक कि नकली विदेशी दरिंदे के शहर जाने की भी चर्चा नहीं होती थी, आ Q की भला क्या हैसियत थी। इससे यह मालूम हो जाता है कि उस बूढ़े पुजारी ने आ Q के शहर जाने की बात किसी से क्यों नहीं कही थी। नतीजे के तौर पर गांव वालों के पास यह बात जानने का कोई उपाय नहीं था।

आ Q की इस बार की वापसी भी पहले की तुलना में अलग तरह की थी, जो लोगों को आश्चर्य में डालने के लिए काफ़ी थी। शाम हो चुकी थी। नींद से भरी आंखें लिए वह शराबख़ाने के दरवाज़े पर जा पहुंचा और सीधा काउंटर पर पहुंचकर अपने कमरबंद से मुट्ठी भर चांदी और तांबे के सिक्के निकाल उन्हें खनखनाता हुआ काउंटर पर रखकर बोला, "नक़द पैसा है, शराब लाओ!" वह अस्तर वाली नई जाकिट पहने था। कमर में एक बड़ा-सा बटुआ लटक रहा था, जिसके भारी वज़न से कमरबंद कुछ नीचे की ओर झुक गया था। वेइच्वाङ में प्रथा थी कि अगर किसी आदमी में कोई अनूठी बात नज़र आती, तो उसके साथ इज़्ज़त का बर्ताव किया जाता, न कि शराबख़ाने का। जबकि उस समय लोग अच्छी तरह जान गए थे कि यह आ Q ही है, फिर भी वह फटे-पुराने कोट वाले आ Q से बिल्कुल अलग व्यक्ति बन चुका था। प्राचीन कहावत है, "यदि कोई विद्वान तीन दिन के लिए भी बाहर गया हो, तो उसे नई दृष्टि से देखना चाहिए।" इसलिए वेटर, शराबख़ाने का मालिक, ग्राहक और सड़क पर आने-जाने वाले सभी सहज रूप से उसे एक सम्मानजनक संदेह की नज़र से देख रहे थे। शराबख़ाने के मालिक ने सिर हिलाकर कहा, "क्यों भाई आ Q , वापस आ गए?"

"हां, आ गया हूं।"

"ख़ूब पैसा कमाया है तुमने, वैसे गए कहां थे?"

"शहर चला गया था।"

अगले दिन तक यह ख़बर पूरे वेइच्वाङ में फैल गई, हर आदमी आ Q की सफलता, उसकी नक़द पूंजी और उसकी अस्तर वाली नई जाकिट की कहानी जानना चाहता था, इसलिए गांव वालों ने शराबख़ाने में, चाय की दुकान में और मंदिर के नीचे धीरे-धीरे इस ख़बर की खोज-बीन शुरू कर दी। नतीजा यह हुआ कि उन्होंने आ Q के साथ एक नए सम्मानपूर्ण ढंग से व्यवहार करना शुरू कर दिया।

आ Q ने बताया कि शहर जाकर वह प्रांतीय सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी का घरेलू नौकर बन गया था। उसकी कहानी का यह हिस्सा जिसने भी सुना वह चकित रह गया। प्रांतीय सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी का नाम पाए था, पर वह पूरे शहर में एकमात्र सफल प्रांतीय प्रत्याशी था, इसलिए उसका कुलनाम लेने की आवश्यकता नहीं समझी जाती थी--जब भी कोई प्रांतीय सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी का बयान करता, तो उसका तात्पर्य पाए साहब से ही होता था। यह बात सिर्फ़ वेइच्वाङ के लोग ही नहीं, बल्कि तीस मील तक पूरे क्षेत्र के लोग जानते थे, जैसे हर आदमी उसका नाम 'श्री प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी' ही समझता हो। इतने महत्त्वपूर्ण आदमी के घर में काम करने वाले की इज़्ज़त होना स्वाभाविक था, लेकिन आ Q ने आगे बताया कि कुछ समय बाद उसे वहां काम करने की इच्छा नहीं रहीं, क्यों वह सफल प्रत्याशी नंबर एक का 'हरामज़ादा' था। कहानी का यह हिस्सा, जिसने भी सुना उसने एक राहत की सांस ली, लेकिन इसके पीछे खुशी भी छिपी हुई थी, क्योंकि इससे प्रकट हो जाता था कि आ Q ऐसे आदमी के घर में काम करने योग्य नहीं है। फिर भी काम न करना बड़े अफ़सोस की बात थी।

आ Q ने बताया, उसके लौटने का कारण यह भी था कि शहर के लोगों को देखकर उसे तसल्ली नहीं हुई थी, क्योंकि वे लोग लंबी बेंच को सीधी बेंच कहते थे, मछली तलने के लिए हरी प्याज़ के बारीक टुकड़े इस्तेमाल करते थे, और उनमें एक ऐसी त्रुटि थी, जिसका उसे हाल ही में पता लगा था। उनकी औरतें चलते समय अपने कूल्हे ज्यादा आकर्षक ढंग से नहीं मटकाती थीं, लेकिन शहर में कुछ अच्छी बातें भी थीं, उदाहरण के लिए वेइच्वाङ में हर आदमी बांस के बत्तीस पांसों से खेलता था और केवल नक़ली विदेशी दरिंदा ही ऐसा था, जो 'माच्याङ' खेलना जानता था, लेकिन शहर में गली-मुहल्लों के लड़के भी 'माच्याङ' के खेल में माहिर थे। अगर कहीं नक़ली विदेशी दरिंदे को इन शैतान लड़कों के हाथ में सौंप दिया जाता, तो वे उसे सीधे 'नर्क के राजा के दरबार का एक छोटा शैतान' बना डालते। जिन लोगों ने कहानी का यह भाग सुना, उनके चेहरे शर्म से लाल हो गए।

"क्या तुम लोगों ने कभी किसी को मौत की सज़ा देते देखा है?" आ Q ने पूछा। "ओह, कितना जोरदार दृश्य होता है, जब वे क्रांतिकारियों को मौत की सज़ा देते हैं। ओह, कितना ज़ोरदार दृश्य होता है, कितना ज़ोरदार दृश्य होता है!" बात करते हुए, जब उसने सिर हिलाया तो उसके मुंह से निकले थूक के छींटे चाओ स-छन के चेहरे पर जा गिरे, जो उसके बिल्कुल सामने खड़ा था। जिन लोगों ने कहानी का यह भाग सुना, वे डर से कांप उठे। तभी चारों ओर नज़र डालने के बाद उसने अचानक दायां हाथ उठाकर मुछंदर वाङ की गर्दन दबोच ली, जो सिर आगे करके उसकी बातें बड़े ध्यान से सुन रहा था।

"मार डालो!" आ Q चिल्लाया।

बिजली या चमक पत्थर की चिनगारी की सी तेज़ी से मुछंदर वाङ ने एक झटके से अपना सिर पीछे खींचा और भाग खड़ा हुआ। आसपास खड़े लोग अचरज भरी शंका से सहम उठे। इसके बाद मुछंदर वाङ कई दिन तक आतंकित रहा और आ Q के पास फटकने की हिम्मत न उसको हुई, न किसी और को।

यह नहीं कहा जा सकता कि उस समय वेइच्वाङ के लोगों की नज़रों में आ Q का रुतबा चाओ साहब से बड़ा था, फिर भी बिना गलत बोलने के ख़तरे के यह अवश्य कहा जा सकता है कि दोनों का रुतबा लगभग एक जैसा था।

कुछ ही दिनों में आ Q की प्रसिद्धि अचानक वेइच्वाङ के स्त्री समाज में भी फैल गई। वैसे तो वेइच्वाङ में छ्येन और चाओ केवल दो परिवार ऐसे थे, जिन्हें ठाठ से रहने वाले परिवार कहा जा सकता था। नब्बे प्रतिशत शेष परिवार बिल्कुल ग़रीब थे, फिर भी स्त्री समाज स्त्री समाज ही होता है, और जिस ढंग से आ Q की प्रसिद्धि उसमें फैली थी, उसे एक छोटा-मोटा चमत्कार ही समझा जाएगा। जब भी औरतें आपस में मिलतीं, एक-दूसरे से कहतीं, "श्रीमती चओ ने आ Q से एक नीले रंग का रेशमी लहंगा ख़रीदा है। वैसे लहंगा पुराना है, फिर भी उसकी कीमत केवल नब्बे सेन्ट है। और चाओ पाए-येन की मां (इसकी जांच करना अभी बाकी है, क्योंकि कुछ लोग कहते हैं कि वह चाओ स-छन की मां थी) ने गहरे लाल रंग की विदेशी

छींट की बनी बच्चे की पोशाक, जो क़रीब-क़रीब नई जैसी ही थी, केवल तीन सौ तांबे के सिक्कों में ख़रीदी थी और उसे इसके मूल्य में आठ प्रतिशत की छूट भी मिली थी।"

बाद में जिन औरतों के पास रेशम का लहंगा नहीं था या जो विदेशी छींट का कपड़ा लेना चाहती थीं, वे इन वस्तुओं को ख़रीदने के लिए आ Q से मिलने के लिए बहुत बेचैन हो उठीं। अगर वह कहीं नज़र आ जाता तो, उससे बचने के बजाय, उसके पीछे चल पड़तीं और उससे रुकने का आग्रह करतीं।

"आ Q, क्या तुम्हारे पास कुछ रेशमी लहंगे और भी हैं?" वे पूछतीं, "नहीं हैं क्या? हमें विदेशी छींट का कपड़ा भी चाहिए। है क्या तुम्हारे पास?"

बाद में यह ख़बर ग़रीब घरों से अमीर घरों में जा पहुंची। श्रीमती चओ अपने रेशमी लहंगे से इतनी खुश हुई कि इसे दिखाने श्रीमती चाओ के पास ले गई और श्रीमती चाओ ने चाओ साहब के आगे इसकी बड़ी प्रशंसा की।

चाओ साहब ने रात के भोजन के समय इसकी चर्चा अपने लड़के से की, जो काउंटी की सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी था। चाओ साहब ने यह भी कहा कि आ Q का व्यवहार बड़ा संदिग्ध प्रतीत होता है और उन्हें अपने दरवाज़ों व खिड़कियों को होशियारी से बंद रखना चाहिए, लेकिन साथ ही वे यह भी जानना चाहते थे कि आ Q के पास अब कोई सामान शेष रह गया है या नहीं और उनका ख्याल था कि उसके पास अब भी शायद कोई अच्छी वस्तु शेष रह गई है। चूंकि श्रीमती चाओ को एक अच्छी, सस्ती फ़र की जाकिट की आवश्यकता थी, इसलिए परिवार के अंदर सलाह करने के बाद फ़ैसला किया कि श्रीमती चओ से कहा जाए कि आ Q का पता लगाकर उसे फौरन ले आएं। इसके लिए अपवाद स्वरूप तीसरी बार परिवार का नियम तोड़ा गया। उस रात बत्ती जलाए रखने की ख़ास अनुमति दी गई।

काफ़ी तेल जल चुका था, लेकिन आ Q का कहीं कोई निशान नहीं था। पूरा चाओ परिवार बड़ी बेचैनी से प्रतीक्षा करता-करता उबासियां लेने

लगा था। कुछ लोग आ Q के अनुशासनहीनता की आलोचना कर रहे थे। कुछ दूसरे श्रीमती चओ को दोष दे रहे थे कि उन्होंने आ Q को लाने के लिए अधिक कोशिश नहीं की होगी। श्रीमती चाओ को भय था, कहीं ऐसा तो नहीं कि उस बरस वसंत में स्वीकृत की गई शर्तों के कारण आ Q को यहां आने की हिम्मत ही न हो रही हो, पर चाओ साहब का ख्याल था कि इसके बारे में चिंता करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि, "इस बार उसे मैंने स्वयं बुलाया है।" चाओ साहब ने साबित कर दिया कि वे कितनी तीखी दृष्टि रखते हैं, क्योंकि आख़िर श्रीमती चओ के साथ आ Q आ ही पहुंचा।

"यह बार-बार कहता जा रहा है कि अब इसके पास कोई वस्तु शेष नहीं रह गई," श्रीमती चओ हांफती हुई बोली, "जब मैंने इससे कहा कि तुम यह सब स्वयं जाकर बता आओ, तो यह बोलता ही चला गया। मैंने इससे कहा…"

"श्रीमान!" आ Q मुस्कराने की कोशिश करते हुए बोला।

"आ Q, मैंने सुना है, तुम वहां जाकर काफ़ी धनी बन गए हो", चाओ साहब ने उसके पास जाकर एक नज़र उसे ऊपर से नीचे तक देखते हुए कहा, "बहुत अच्छी बात है। अब… लोग कहते हैं, तुम्हारे पास कुछ पुरानी वस्तुएं भी हैं। …उन सबको यहां ले आओ, ताकि हम लोग देख सकें।… हम उनमें से कुछ वस्तुएं लेना चाहते हैं…"

"श्रीमती चओ को मैं बता चुका हूं कि अब मेरे पास कुछ भी शेष नहीं है।"

"कुछ भी नहीं बचा?" चाओ साहब की बात से निराशा झलक रही थी, "ये वस्तुएं इतनी जल्दी कैसे समाप्त हो गईं?"

"ये सब वस्तुएं मेरे एक दोस्त की थीं। वास्तव में बहुत ज़्यादा तो थीं नहीं। कुछ ही थीं। लोगों ने ख़रीद लीं…"

"कुछ-न-कुछ तो बचा ही होगा।"

"केवल दरवाज़े का एक पर्दा बच गया है।"

"दरवाज़े का पर्दा ही ले आओ। हम उसे देखना चाहते हैं।" श्रीमती चाओ झट बोल पड़ीं।

"अगर उसे कल ला सको तो ठीक रहेगा," बिना ज़्यादा उत्साह

दिखाए चाओ साहब ने कहा, "आ Q, आगे से जब भी तुम्हारे पास कोई वस्तु आए तो पहले हमें दिखा देना।"

"हम तो तुम्हें औरों से कम पैसा नहीं देंगे।" काउंटी की सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी बोला। उसकी पत्नी ने आ Q की प्रतिक्रिया जानने के लिए तेजी से एक नज़र उसकी ओर देखा।

"मुझे एक फ़र की जाकिट की आवश्यकता है।" श्रीमती चाओ ने कहा।

आ Q ने उनकी बात मान ली, पर वह इतनी लापरवाही से बाहर निकला कि लोगों को विश्वास ही नहीं हो पाया कि उसने उनकी बात भीतर से मानी है या नहीं। इस कारण से चाओ साहब तो इतने मायूस, परेशान और दुखी हो उठे कि उन्हें उबासियां आना भी बंद हो गईं। काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी भी आ Q के व्यवहार से बिल्कुल नाखुश था। वह बोला, "ऐसी कछुए की औलाद से बहुत होशियार रहना चाहिए। अच्छा यह होगा कि बेलिफ़ को हुक्म देकर इसके वेइच्वाङ में रहने पर प्रतिबंध लगा दी जाए।"

लेकिन चाओ साहब नहीं माने। उन्होंने कहा, "कहीं ऐसा न हो कि वह बदला लेने पर तुल जाए। वैसे कभी-कभी इस तरह के मामलों में, चील अपने स्वयं के घोंसले में शिकार नहीं करती, वाली कहावत लागू होती है—आ Q से उसके अपने गांव वालों को किसी तरह का डर नहीं होना चाहिए, केवल रात के समय उन्हें अवश्य अधिक चौकन्ना रहना चाहिए।" पिता के इस आदेश से प्रभावित होकर काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी ने आ Q को गांव बदर करने का अपना प्रस्ताव फ़ौरन वापस ले लिया और श्रीमती चओ को होशियार कर दिया कि यह बात किसी के सामने क़तई न दोहराएं।

लेकिन अगले ही दिन जब श्रीमती चओ अपने नीले लहंगे पर काला रंग करवाने ले गईं, तो उन्होंने आ Q पर लगाए गए आरोपों की चर्चा छेड़ दी, वैसे काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी द्वारा कही हुई उस बात की चर्चा उन्होंने नहीं की, जो उसने आ Q को गांव से निकालने के बारे में कही थी। बावजूद इसके आ Q को इससे बहुत हानि हुई। सबसे पहले तो बेलिफ़

उसके पास जा पहुंचा और दरवाज़े का पर्दा उठा ले गया। आ Q ने विरोध किया और कहा कि इसे श्रीमती चाओ देखना चाहती हैं, पर बेलिफ़ ने वापस देने से इनकार कर दिया। यहां तक कि आ Q से हर महीने कुछ माल-मत्ते की मांग भी की। गांव वालों के मन में उसके लिए जो इज़्ज़त पैदा हो गई थी, वह सहसा समाप्त हो गई। वैसे लोग अब भी उसके साथ हंसी-मज़ाक़ करने का साहस नहीं करते थे, पर हर आदमी उससे अधिक-से-अधिक कतराने की कोशिश करने लगा। उसके "मार डालो!" का जो भय उनके मस्तिष्क में पहले से बैठा हुआ था, इससे यह अलग प्रकार का डर था, फिर भी प्राचीन समाज द्वारा भूत-प्रेतों के प्रति अपनाए गए रवैये से यह बहुत मिलता-जुलता था, लोग उसके और अपने बीच एक सम्मान-भरी दूरी बनाए रखते थे।

कुछ निठल्ले लोग इस व्यापार की तह में जाना चाहते थे, उन्होंने आ Q के पास जाकर अच्छी तरह पूछताछ की। बात छिपाने की तनिक भी कोशिश किए बिना आ Q ने बड़े गर्व से उनके सामने अपने कारनामों का बयान कर डाला। उसने उन्हें बताया कि शहर में वह बस एक मामूली-सा चोर था, जो न केवल दीवार फांदने में, बल्कि खुले खिड़की-दरवाज़ों से भीतर जाने में भी असमर्थ था, वह तो केवल खुले खिड़की-दरवाज़ों के बाहर खड़ा होकर चोरी का माल पकड़ सकता था।

एक दिन रात के समय जब चोरी के माल की एक गठरी उसे पकड़ाने के बाद उसके गिरोह का सरदार फिर से अंदर गया, तो भीतर से बहुत ज़ोर का शोर-गुल सुनाई पड़ा। आ Q ने आव देखा न ताव वह सिर पर पांव रखकर भाग खड़ा हुआ। उसी रात वेइच्वाङ लौट आया, इसके बाद उसने दोबारा इस व्यापार में लौटने की हिम्मत नहीं की। इस कहानी से आ Q की इज़्ज़त को और ज़्यादा आघात लगा। गांव वाले उसके और अपने बीच एक सम्मान-भरी दूरी इसलिए बनाए रखते थे, क्योंकि वे लोग उससे दुश्मनी मोल नहीं लेना चाहते थे। भला यह कौन जानता था कि वह एक ऐसा चोर है, जिसके अंदर फिर से चोरी का साहस नहीं? अब कहीं उन्हें मालूम हुआ कि वह सचमुच कितना घटिया जीव था, इसलिए उससे डरने की आवश्यकता नहीं थी।

अध्याय सात

क्रांति

सम्राट श्वान थुङ के शासन-काल के तीसरे बरस नवें चंद्र-मास की चौदहवीं तारीख को[1], जिस दिन आ Q ने अपना बटुआ चाओ पाए-येन को बेच दिया था, आधी रात के समय जब तीसरी घड़ी ने चौथा घण्टा बजाया तो एक बड़े-से पाल वाली विशाल नाव चाओ परिवार के घाट पर आकर लगी। यह नाव अंधेरे में उस समय किनारे लगी, जब गांव वाले गहरी नींद सो रहे थे, इसलिए उन्हें कानों-कान खबर नहीं लगी, लेकिन पौ फटने पर जब नाव वहां से जाने लगी, तो कई लोगों ने उसे देख लिया। खोज़ के बाद पता चला कि नाव प्रांतीय सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी की थी।

इस घटना से वेइच्वाङ में बड़ी खलबली मच गई। दोपहर होने तक सभी गांव वालों के दिल तेज़ी से धड़कने लगे। चाओ परिवार इस नाव की यात्रा के उद्देश्य के बारे में बिल्कुल मौन रहा, लेकिन चाय की दुकान और शराबख़ाने में ज़ोरों से चर्चा थी कि क्रांतिकारी शहर में प्रवेश करने वाले हैं और प्रांतीय सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी शरण लेने गांव में आ गया है। केवल श्रीमती चओ की राय इससे भिन्न थी। उनका कहना था कि प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी केवल कुछ टूटे-फूटे संदूक़ वेइच्वाङ में रखवाना चाहता था, पर चाओ साहब ने उन्हें वापस भिजवा दिया। वास्तव में प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी और काउंटी परीक्षा में सफल चाओ परिवार के प्रत्याशी की आपस में बिल्कुल नहीं बनती थी, इसलिए बुरे समय में भला एक-दूसरे के काम कैसे आ सकते थे, यही नहीं, श्रीमती चओ चाओ परिवार के पड़ोस में रहती थीं और शेष लोगों के मुक़ाबले अधिक अच्छी तरह जानती थीं कि क्या हो रहा है, इसलिए उनकी बात में कुछ अधिक दम मालूम होता था

फिर भी इसके बाद यह अफ़वाह फैल गई कि प्रांतीय विद्वान स्वयं

1. 1911 की क्रान्ति में इसी दिन शाओशिङ स्वतंत्र हुआ था।

नहीं आया, बल्कि उसने एक लंबा पत्र भेजा है, जिसमें उसने चाओ परिवार से अपना दूर का रिश्ता निकाल लिया है। सोच-विचार करने के बाद चाओ साहब को यह लगा कि संदूक़ रखने में उन्हें कोई हानि नहीं होने वाली, इसलिए उन्होंने संदूक़ अपनी पत्नी के पलंग के नीचे छिपाकर रखवा दिए। जहां तक क्रांतिकारियों का संबंध है, कुछ का कहना था कि वे सफ़ेद रंग के लोह टोप और कवच पहनकर सम्राट छुङ चन की मातमपुर्सी करते हुए[1] उस रात शहर में प्रवेश कर चुके हैं।

आ Q क्रांतिकारियों के बारे में बहुत पहले से जानता था और इस साल उनके सिर कटते अपनी आंखों से देख चुका था, पर वह सोचता था कि क्रांतिकारी विद्रोही होते हैं और अगर विद्रोह हो गया, तो हालात उसके लिए और कठिन हो जाएंगे, इसलिए वह उन्हें हमेशा नापसंद करता था और उनसे दूर ही रहता था। कौन सोच सकता था कि वे लोग प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी को भी, जिसकी प्रसिद्धि चारों ओर तीस मील के इलाके में फैली हुई थी, इतना डरा सकते हैं? नतीजतन आ Q खुश हुए बग़ैर नहीं रह सका। गांव वालों में फैले आतंक से उसकी खुशी और बढ़ गई।

"क्रांति चीज़ कोई बुरी नहीं," आ Q ने सोचा, "उन सबकी समाप्ति हो…! उन सबका नाश हो!… मैं स्वयं भी क्रांतिकारियों के पास जाना चाहता हूं।"

कुछ समय से आ Q बहुत तंग था और शायद असंतुष्ट भी, इसके दोपहर के समय उसने खाली पेट दो प्याले शराब भी पी लिए थे। नतीजतन उसे नशा आसानी से चढ़ गया। जब वह अपने ख्यालों में डूबा हुआ चला जा रहा था, तो उसे एक बार फिर लगा जैसे हवा में उड़ रहा हो। अचानक न जाने कैसे उसे महसूस हुआ कि वह स्वयं ही क्रांतिकारी है और वेइच्वाङ के लोग उसकी हिरासत में हैं। अपनी खुशी को दबाने में असमर्थ होकर वह सहसा चिल्ला पड़ा, "विद्रोह! विद्रोह!"

सभी गांव वाले आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगे। आ Q ने इतनी अधिक करुणा-भरी आंखें पहले कभी नहीं देखी थीं। इन्हें देखकर उसे भरी

1. मिङ राजवंश के अंतिम सम्राट छुङ चन ने 1928 से 1944 तक शासन किया। जब ली च-छङ के नेतृत्व में विद्रोही किसानों की सेना ने पेकिङ में प्रवेश किया उससे पहले ही छुङ चन ने फांसी लगाकर आत्महत्या कर ली।

गर्मी में बर्फ़ का पानी पीकर मिलने वाली ताज़गी महसूस हुई। इसलिए वह और अधिक खुश होकर ज़ोर से चिल्लाता हुआ आगे बढ़ गया, "ठीक है, जो भी मेरे मन भाएगा आज मैं वही लूंगा, जो भी मेरे मन भाएगा, उसे मित्र समझूंगा,

"त्रा ला, त्रा ला!
है अफ़सोस मुझे मैंने हत्या कर डाली
चूर नशे में होकर अपने चङ भैया की,
है अफ़सोस मुझे मैंने हत्या कर डाली···
या, या, या!
त्रा ला, त्रा ला, थुम थी थुम!
हड्डी-पसली चूर तुम्हारी लोहे की छड़ से कर दूंगा!"

चाओ साहब और उनका बेटा अपने दरवाज़े पर दो रिश्तेदारों के साथ क्रांति के बारे में चर्चा कर रहे थे। आ Q ने उन्हें नहीं देखा और अपना सिर पीछे किए गाते हुए आगे बढ़ गया—"त्रा ला, त्रा ला, थुम थी थुम!"

"अरे दोस्त Q !" चाओ साहब ने डरी आवाज़ में धीरे से पुकारा।

"त्रा ला!" आ Q गाता चला गया। वह कल्पना भी नहीं कर सकता था कि उसके नाम के साथ दोस्त शब्द का इस्तेमाल किया जा सकता है। उसे पूरा विश्वास था कि उसने गलत सुना है। उसे किसी ने नहीं पुकारा। सो उसने अपना गाना जारी रखा--"त्रा ला ला, थुम थी थुम!"

"अरे, दोस्त Q!"

"है अफ़सोस मुझे मैंने हत्या कर डाली···"

"आ Q !" काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी को उसका पूरा नाम लेकर पुकारना ही पड़ा।

तभी आ Q रुका, "कहिए, क्या है?" उसने अपना सिर एक ओर झुकाकर पूछा।

"Q, दोस्त··· अब···" चाओ साहब की जीभ लड़खड़ाने लगी, "क्या यह सच है कि अब तुम धनी बनते जा रहे हो?"

"धनी बनता जा रहा हूं? बेशक, जो वस्तु मेरे मन भाती है, उसे ले लेता हूं।"

"आ Q, दोस्त आ Q, हम जैसे ग़रीब दोस्तों की ओर ध्यान देने की तुम्हें फ़ुरसत ही कहां है?" चाओ पाए-येन ने थोड़ा शंकित होकर कहा, जैसे क्रांतिकारियों के रुख की गहराई तक पहुंचने की कोशिश कर रहा हो।

"ग़रीब दोस्त? लेकिन तुम तो मुझसे अधिक धनी हो।" आ Q ने उत्तर दिया और वहां से चला गया।

वे निराश होकर मौन खड़े रहे, तब चाओ साहब और उनका बेटा अपने घर के भीतर चले गए। उस दिन इस सवाल पर तब तक विचार करते रहे, जब तक बत्ती जलाने का समय नहीं हो गया। जब चाओ पाए-येन घर पहुंचा, तो उसने अपनी कमर से बटुवा निकालकर पत्नी को दिया और उससे कहा कि इसे अपने संदूक़ की तह में छिपा दे।

कुछ समय तक आ Q को ऐसा लगा, जैसे हवा में उड़ रहा हो, लेकिन जब कुल-देवता के मंदिर में पहुंचा, तो उसका नशा उतर चुका था। उस रात मंदिर के बूढ़े पुजारी ने भी उसके साथ अप्रत्याशित रूप से दोस्ताना व्यवहार किया और उसे चाय भी पिलाई। इसके बाद आ Q ने पुजारी से दो चौकोर केक मांग लिए और उन्हें खाने के बाद चार औंस की एक बड़ी अधजली मोमबत्ती और एक छोटा मोमबत्तीदान मांग लिया। मोमबत्ती जलाकर वह अकेला ही अपने कमरे में लेट गया। जैसे-जैसे मोमबत्ती की लौ दीप-महोत्सव की रात की तरह घटती जा रही थी, वैसे-वैसे वह एक अलग ही ताज़गी और खुशी महसूस कर रहा था और इसके साथ उसकी कल्पना भी नई उड़ान भरने लगी थी।

"विद्रोह? बहुत मजा आएगा··· क्रांतिकारियों का दल आएगा। सबके सिर पर लोहे का सफ़ेद टोप होगा और शरीर पर सफ़ेद कवच। वे तलवारों, लोहे की छड़ों, बमों, विदेशी बंदूक़ों, नुकीले दुधारे चाकुओं और हुक वाले भालों से लैस होंगे। वे कुल-देवता के मंदिर में आएंगे और पुकारेंगे, "आ Q, आ जाओ।" तब मैं उनके साथ चला जाऊंगा।

"तब ये सारे गांव वाले हास्यापद स्थिति में होंगे, घुटने टेककर गिड़गिड़ा रहे होंगे, "आ Q, हमें बख्श दो।" लेकिन उनकी बात कौन सुनेगा! सबसे पहले युवक D और चाओ साहब को मौत के घाट उतारा जाएगा, उसके बाद काउंटी की सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी और नकली विदेशी दरिंदे की बारी आएगी, लेकिन शायद मैं कुछ लोगों को छोड़

दूं। कोई समय था, जब मैं मुछंदर वाङ को छोड़ देता, लेकिन अब तो मैं उसकी सूरत भी नहीं देखना चाहता।

"चीज़ों के लिए··· मैं सीधा अंदर चला जाऊंगा और संदूक़ खोल डालूंगा—चांदी की सिल्लियां, विदेशी सिक्के, विदेशी छींट की जाकिटें··· सबसे पहले मैं काउंटी की सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी की पत्नी का निङपो पलंग मंदिर में उठा ले जाऊंगा और छ्येन परिवार की मेज़-कुर्सियां भी या चाओ परिवार की मेज़-कुर्सियां इस्तेमाल करूंगा। मैं अपने हाथ से तिनका भी नहीं तोड़ूंगा, केवल युवक D को आदेश दूंगा कि मेरे लिए सारा सामान उठा लाए और थोड़ी फुर्ती दिखाए, वरना उसे मेरा थप्पड़ खाने के लिए तैयार रहना चाहिए।

"चाओ स-छन की छोटी बहन बड़ी कुरूप है। कुछ ही बरस में श्रीमती चओ की लड़की भी युवा हो जाएगी। नक़ली विदेशी दरिंदे की पत्नी केवल ऐसे आदमी के साथ सोने को तैयार है, जिसकी चोटी न हो। छिः, वह भली औरत नहीं। काउंटी की परीक्षा में सफल प्रत्याशी की पत्नी की पलकों में निशान हैं। आमा ऊ बहुत दिनों से दिखाई नहीं दी, न मालूम कहां है! अफ़सोस है कि उसके पैर बहुत बड़े हैं।"

इससे पहले कि आ Q कोई संतोषजनक फ़ैसला कर पाता, उसके खर्राटों की आवाज़ आने लगी। चार औंस की मोमबत्ती केवल आधा इंच जली थी, उसकी टिमटिमाती लाल रोशनी में आ Q का खुला हुआ मुंह चमक रहा था।

"हो, हो!" आ Q सहसा चिल्लाया और सिर उठाकर फटी-फटी आंखों से चारों ओर देखने लगा, पर जब उसकी नज़र चार औंस की मोमबत्ती पर पड़ी, तो वह फिर लेट गया और खर्राटे भरने लगा।

अगले दिन प्रातः बड़ी देर से जागा। बाहर गली-मोहल्ले में पहुंचा, तो हर वस्तु पहले जैसी ही नज़र आई। उसे भूख लग रही थी। बहुत दिमाग लड़ाने पर भी उसे कोई रास्ता नहीं सूझा। सहसा मन में एक विचार आया। वह धीरे-धीरे चल पड़ा और जानबूझकर या अनजाने में 'शांत आत्मोत्थान भिक्षुणीविहार' में जा पहुंचा।

भिक्षुणीविहार उस बरस के वसंत के समान ही शान्त था। उसकी सफ़ेद दीवारें और चमकदार काला फाटक वैसे ही दिखाई दे रहे थे। एक

पल सोचने के बाद उसने फाटक पर दस्तक दी, जिसे सुनकर भीतर से एक कुत्ता भौंकने लगा। उसने तुरन्त टूटी-फूटी ईंटों के कई टुकड़े उठा लिए और फाटक पर पहुंचकर और ज़ोर से खटखटाने लगा। काले फाटक को उसने इतनी ज़ोर से पीटा कि उस पर कई जगह निशान पड़ गए। अंत में उसे फाटक खोलने के लिए किसी के आने की आहट सुनाई पड़ी।

टूटी ईंटों के टुकड़े हाथ में उठाए आ Q अपनी दोनों टांगें फैलाकर काले कुत्ते से जूझने को तैयार खड़ा था। भिक्षुणीविहार का फाटक थोड़ा-सा खुला, मगर काला कुत्ता बाहर नहीं आया। आ Q ने भीतर झांका, तो उसे केवल बूढ़ी भिक्षुणी दिखाई दी।

"तुम यहां फिर क्यों आ गए?" बात शुरू करते हुए उसने पूछा।

"क्रांति हो गई है··· क्या तुम्हें नहीं मालूम?" आ Q ने अस्पष्ट आवाज़ में कहा।

"क्रांति··· क्रांति तो यहां एक बार हो चुकी है," बूढ़ी भिक्षुणी बोली। उसकी आंखें रो-रो कर लाल हो रही थीं, "तुम्हारी इन क्रांतियों से हम पर न जाने क्या बीतेगी?"

"क्या कहा?" आ Q ने चकित होकर पूछा।

"तुम्हें नहीं पता? क्रांतिकारी यहां पहले ही आ चुके हैं।"

"कौन से क्रांतिकारी?" आ Q ने और ज़्यादा ताज्जुब से पूछा।

"काउंटी की सरकारी परीक्षा में सफल प्रत्याशी और नक़ली विदेशी दरिंदा।"

यह सुनकर आ Q के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, वह बिल्कुल हक्का-बक्का रह गया। उस बूढ़ी भिक्षुणी ने देखा कि उसका लड़ाकू तेवर कुछ कम हो गया है, तो उसने फ़ौरन फाटक बंद कर दिया, ताकि यदि आ Q फिर से धक्का दे, तो वह खुल न सके। जब उसने दोबारा खटखटाया, तो कोई उत्तर नहीं आया।

यह उसी सुबह की बात थी। काउंटी की परीक्षा में सफल चाओ परिवार के प्रत्याशी को एकदम ख़बर मिल गई। जैसे ही उसे पता चला कि क्रांतिकारी उस शहर में प्रवेश कर गए हैं, उसने झट अपनी चोटी लपेटकर सिर पर छिपा ली और सबसे पहले छ्येन परिवार के नक़ली विदेशी दरिंदे से मिलने गया, जबकि उन दोनों के संबंध पहले कभी अच्छे नहीं रहे थे,

लेकिन अब समय आ गया था कि "सब मिलकर समाज-सुधार करें," इसलिए उन दोनों के बीच बड़ी आत्मीयता से भरी बातचीत हुई। दोनों फौरन एक जैसी विचारधारा वाले साथी बन गए और उन्होंने क्रांतिकारी बनने की प्रतिज्ञा कर ली।

कुछ देर दिमाग़ लड़ाने के बाद उन्हें याद आया कि 'शांत आत्मोत्थान भिक्षुणी-विहार' में एक शाही शिलालेख लगा हुआ है, जिस पर लिखा है—"सम्राट की जय!" इसे तुरंत हटा दिया जाना चाहिए। यह विचार आते ही वे अपनी क्रांतिकारी योजना को कार्यान्वित करने तुरंत भिक्षुणी विहार जा पहुंचे। बूढ़ी भिक्षुणी ने उन्हें रोकने की कोशिश की और उनसे कुछ कहा, इसलिए उन्होंने उसे छिङ सरकार समझकर डंडों व घूंसों से उसकी खोपड़ी पर अनेक वार किए। जब दोनों चले गए, तो भिक्षुणी ने विहार का निरीक्षण किया। शाही शिलालेख टुकड़े-टुकड़े करके ज़मीन पर फेंक दिया गया था। कीमती श्वेन त धूपदान[1], जो करुणा की देवी क्वानइन की मूर्ति के सामने रखा था, वहां से ग़ायब हो चुका था।

यह सब आ Q को बाद में मालूम हुआ। उसे इस बात का बड़ा अफ़सोस था कि उस समय वह सोता क्यों रह गया और वे लोग उसे बुलाने क्यों नहीं आए, उसने मन-ही-मन कहा—"हो सकता है उन्हें अब भी यह पता नहीं हो कि मैं क्रांतिकारियों की पंक्तियों में सम्मिलित हो चुका हूं।"

अध्याय आठ

क्रांति से बहिष्कृत

वेइच्वाङ के लोग दिन-ब-दिन आश्वस्त होते जा रहे थे। जो खबरें उनके पास पहुंच रही थीं उनके आधार पर वे यह बात समझ चुके थे कि क्रांतिकारियों के शहर में आने से कोई ख़ास परिवर्तन नहीं आया।

1. कांसे के अत्यन्त कलात्मक धूपदान चीन में मिङ राजवंश के श्वेन त काल (1426-1435) में बनाए जाते थे।

मजिस्ट्रेट अब भी सबसे बड़ा अफ़सर था, उसका मात्र पद बदल गया था, प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी को भी कोई पद—वेइच्वाङ गांव के लोगों के लिए इन पदों के नाम याद रखना संभव नहीं था, किसी तरह का कोई सरकारी पद दे दिया गया था।

सेना का प्रधान अब भी वही पुराना कप्तान था। खटकने की बात केवल यह थी कि कुछ बुरे क्रांतिकारियों ने शहर में पहुंचने के बाद लोगों की चोटी काटकर उन्हें परेशान करना आरंभ कर दिया था। सुनने में आया था कि पड़ोस के गांव का साढ़ेतिसेरा नाम का एक मल्लाह उनके चंगुल में फंस गया था और अब उसकी सूरत देखने क़ाबिल नहीं रही थी। फिर भी यह ख़तरा इतना बड़ा नहीं था, क्योंकि पहले तो वेइच्वाङ के लोग वैसे ही शहर बहुत कम जाते थे, फिर जो लोग शहर जाने की बात सोच रहे थे, उन्होंने इस खतरे से बचने के लिए अपना कार्यक्रम तुरंत स्थगित कर दिया था। आ Q भी अपने पुराने दोस्तों से मिलने शहर जाने की योजना बना रहा था, लेकिन जैसे ही चोटी काटने की ख़बर सुनी, उसने अपना विचार बदल दिया।

यह कहना ग़लत है कि वेइच्वाङ में कोई सुधार हुआ ही नहीं। आने वाले दिनों में ऐसे लोगों की संख्या धीरे-धीरे बढ़ती गई, जिन्होंने अपनी चोटी लपेटकर सिर पर बांध ली थी, और जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इसकी शुरुआत सबसे पहले काउंटी की परीक्षा में सफल प्रत्याशी से हुई, इसके बाद चाओ स-छन और चाओ पाए-येन आगे आए और उनके बाद आ Q । अगर वह गर्मी का मौसम होता और सब लोग अपनी चोटी लपेटकर सिर पर बांध लेते या गांठ लगा लेते, तो किसी को आश्चर्य नहीं होता, लेकिन उन दिनों सर्दियां खत्म होने ही वाली थीं, इसलिए गर्मियों के रिवाज को सर्दी में अपनाकर जिन लोगों ने अपनी चोटी लपेटकर सिर पर बांध ली थी, उनका यह फ़ैसला कोई कम बहादुरी का काम नहीं था। जहां तक वेइच्वाङ का संबंध है, यह नहीं कहा जा सकता कि इस बात का सुधारों से कोई संबंध ही न था।

जब चाओ स-छन अपनी बिना बालों की गर्दन लिए लोगों के सामने पहुंचा तो वे बोल पड़े, "वाह, यह है क्रांतिकारी!"

जब यह बात आ Q ने सुनी, तो वह बड़ा प्रभावित हुआ। जबकि वह

बहुत पहले सुन चुका था कि काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी ने अपनी चोटी लपेटकर सिर पर बांध ली है, फिर भी उसके मन में यह विचार कभी नहीं आया कि वह खुद भी ऐसा ही कर ले, पर जब उसने चाओ स-छन को भी उसके रास्ते पर चलते देखा, केवल तभी उसे ख्याल आया कि वह भी ऐसा ही करेगा। उसने इन लोगों की देखा-देखी करने की ठान ली। बांस की चापस्टिक की मदद से उसने अपनी चोटी सिर पर लपेट ली और कुछ संकोच के बावजूद अंत में हिम्मत करके बाहर निकल गया। जब वह गांव की गलियों से गुज़र रहा था, तो लोगों ने उसकी ओर देखा, लेकिन किसी ने कुछ नहीं कहा। आ Q पहले तो कुछ झुंझला गया। बाद में बहुत गुस्सा हो गया। कुछ समय से उसका पारा एकदम चढ़ जाता था। वास्तव में उसकी ज़िंदगी की कठिनाइयां क्रांति के पहले की तुलना में बढ़ी नहीं थीं और लोग उससे नम्रता का व्यवहार करते थे तथा दुकानदार नक़द पैसा देने का आग्रह नहीं करते थे। फिर भी आ Q असंतोष अनुभव करता था। वह सोचता, क्रांति हो चुकी है, उसका असर और अधिक व्यापक होना चाहिए। तभी उसकी दृष्टि युवक D पर पड़ी और उसका पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया।

युवक D ने भी अपनी चोटी लपेटकर सिर पर बांधी हुई थी और दिलचस्प यह कि उसने भी चोटी लपेटने में बांस की चापस्टिक की ही सहायता ली थी। आ Q सोच भी नहीं सकता था कि युवक D भी यह सब करने की हिम्मत कर सकता है, वह इसे क़तई बर्दाश्त नहीं कर सकता था। युवक D है किस खेत की मूली? उसके मन में यह विचार जोरों से मचलने लगा कि उसे वहीं पकड़ ले और उसके सिर पर लगी बांस की चापस्टिक तोड़ डाले, चोटी खोल दे और चेहरे पर कई चांटे रसीद कर दे, जिससे उसे अपनी औक़ात भूलने और अपने को क्रांतिकारी समझने का दंड मिल जाए, लेकिन अंत में उसने युवक D की ओर सिर्फ़ क्रोधित आंखों से देखा, तिरस्कार से थूका और छिः! कहकर उसे जाने दिया।

पिछले कुछ दिनों में बस नक़ली विदेशी दरिंदा ही शहर गया था। चाओ परिवार के काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी ने सोचा था कि प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी द्वारा रखे गए संदूक़ों के बहाने उससे भेंट करने शहर जाएगा, मगर चोटी कटवा बैठने के डर से उसने अपना विचार बदल

दिया। उसने बड़े तकल्लुफ के साथ एक चिट्ठी लिखी और नक़ली विदेशी दरिंदे के हाथ शहर भेज दी थी। नक़ली विदेशी दरिंदे से उसने यह भी अनुरोध किया था कि वह स्वाधीनता पार्टी से उसका परिचय करवा दे। जब नक़ली विदेशी दरिंदा वापस आया, तो उसने काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी से चार डालर लेकर उसके सीने पर चांदी के आड़ू वाला एक बैज टांक दिया। वेइच्वाङ के सभी निवासियों पर धाक जम गई। उन्होंने बताया कि यह 'परसिमन-तेल पार्टी'[1] का बैज है, जिसका दर्जा हान लिन[2] के बराबर है। इससे चाओ साहब का सम्मान अचानक उस ज़माने के मुकाबले कहीं ज़्यादा बढ़ गया, जब उनके बेटे ने पहली बार सरकारी परीक्षा पास की थी। परिणाम यह हुआ कि उन्होंने शेष सबको घृणा की दृष्टि से देखना शुरू कर दिया और जब कभी उनकी नज़र आ Q पर पड़ती, तो थोड़ी उपेक्षा का रुख अपना लेते।

आ Q भी निरंतर उपेक्षा के कारण बेहद असंतुष्ट था, पर जैसे ही उसने चांदी के आड़ू वाले बैज की बात सुनी, तो तुरंत समझ गया कि उसे उपेक्षित क्यों किया जा रहा है। किसी के यह कहने भर से कि वह क्रांति के पक्ष में चला गया है, वह क्रांतिकारी नहीं बन जाता, और न अपनी चोटी लपेटकर सिर पर बांध लेना मात्र ही क्रांतिकारी बनने के लिए पर्याप्त है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात है क्रांतिकारी पार्टी से संपर्क साधना। अपनी सारी ज़िंदगी में उसका दो ही क्रांतिकारियों से साक्षात्कार हुआ था। उनमें से एक शहर में अपना सिर कटवा चुका था। दूसरा नक़ली विदेशी दरिंदा शेष रह गया था। जब तक आ Q तुरंत नक़ली विदेशी दरिंदे से बात नहीं कर लेता, तब तक उसके लिए कोई रास्ता नहीं था।

छ्येन परिवार के घर का फाटक खुला था। आ Q डरता हुआ अंदर पहुंचा। घुसते ही वह चौंक पड़ा, उसने देखा नक़ली विदेशी दरिंदा आंगन के बीचोबीच ऊपर से नीचे तक काले कपड़े पहने, जो निस्संदेह विदेशी कपड़े थे, और चांदी के आड़ू वाला बैज लगाए खड़ा है। वह अपने हाथ में छड़ी थामे था, जिसका स्वाद आ Q पहले ही चख चुका था। क़रीब एक फुट

1. इसका चीनी नाम 'च यओ ताङ' है, पर गांव वालों को 'स्वाधीनता' शब्द की जानकारी नहीं थी। अतः 'च यओ' को 'श यओ' बना दिया, जिसका अर्थ परसिमन तेल है।
2. छिड़ रलवंश (1644-1911) की सर्वोच्च साहित्यिक उपाधि।

लंबे बाल, जो उसने फिर से बढ़ा लिए थे, कंधों पर संत लयू[1] के बालों की तरह लटक रहे थे। उसके सामने चाओ पाए-येन और अन्य तीन व्यक्ति सीधे तन कर खड़े थे। सभी नक़ली विदेशी दरिंदे की बात बड़े आदर से सुन रहे थे।

आ Q पंजे के बल चलता अंदर पहुंचा और चाओ पाए-येन के पीछे जा खड़ा हुआ। वह नक़ली विदेशी दरिंदे का अभिवादन करना चाहता था, किन्तु समझ में नहीं आ रहा था कि उसे किस नाम से पुकारे। ज़ाहिर था कि वह उसे 'नक़ली विदेशी दरिंदा' कहकर नहीं पुकार सकता था, और न ही 'विदेशी' या 'क्रांतिकारी' शब्द ही ठीक जान पड़ता था। शायद इसलिए उसे लगा, संबोधन का सबसे अच्छा उपाय यह होगा कि उसे 'मिस्टर विदेशी' कहा जाए।

लेकिन मिस्टर विदेशी की नज़र अभी उस पर नहीं पड़ी थी। अपनी आंखें चढ़ाकर वह बड़े आवेश के साथ कह रहा था, "मैं इतना अधिक भावुक हूं कि जब भेंट हमारी हुई, तो मैंने उनसे बार-बार कहा, 'हुङ साहब, इससे हमारा काम चल जाना चाहिए,' लेकिन उन्होंने हर बार उत्तर दिया 'No!'—यह एक विदेशी शब्द है, जिसका अर्थ तुम लोग नहीं समझ सकते। वरना हमें बहुत पहले ही सफलता मिल चुकी होती। यह इस बात का उदाहरण है कि वे कितना फूंक-फूंक कर पैर रखते हैं। उन्होंने मुझसे बार-बार हुपे प्रांत जाने को कहा, लेकिन मैं नहीं माना। ज़िले के छोटे से क़स्बे में कौन काम करना चाहेगा?

"अ र् र् र्…" आ Q ने कुछ देर तक उसके रुकने की प्रतीक्षा की और तब बोलने के लिए हिम्मत बटोरने की कोशिश की, लेकिन किसी कारण वह अब भी उसे मिस्टर विदेशी के नाम से नहीं बुला सका।

जो चार आदमी उसकी बात सुन रहे थे, वे चौंक पड़े और आ Q की ओर घूरने लगे। मिस्टर विदेशी ने भी पहली बार उसकी ओर देखा।

"क्या है?"

"मैं…"

"चले जाओ यहां से!"

1. चीन की लोककथाओं का एक अमर चरित्र, जिसका वर्णन हमेशा लंबे बालों वाले व्यक्ति के रूप में किया जाता है।

"मैं साथ होना चाहता हूं।"

"चले जाओ यहां से!" मिस्टर विदेशी ने मातमपुर्सी करने वाले की छड़ी उठाते हुए कहा।

तब चाओ पाए-येन और दूसरे लोग भी चिल्लाकर बोल पड़े, "छ्येन साहब तुम्हें बाहर जाने को कह रहे हैं। तुमने सुना नहीं?"

आ Q ने अपना सिर बचाने के लिए दोनों हाथ उस पर रख लिए और बिना यह जाने कि वह क्या कर रहा है फाटक से बाहर चला गया। इस बार मिस्टर विदेशी ने उसका पीछा नहीं किया। कोई पचास-साठ क़दम दौड़ने के बाद आ Q धीरे चलने लगा। वह बहुत परेशान था, क्योंकि अगर मिस्टर विदेशी ने उसे क्रांतिकारी न बनने दिया, तो उसके सामने और कोई रास्ता ही नहीं रह जाएगा। भविष्य में वह क़तई आशा नहीं कर सकता था कि लोहे का सफ़ेद टोप और सफ़ेद कवच पहने सैनिक उसे बुलाने आएं। उसकी सारी आकांक्षा, उद्देश्य, आशा और भविष्य एक झटके से तहस-नहस हो गए। इस बात से कि यह ख़बर कहीं फैल न जाए और वह युवक D और मुछंदर वाङ जैसे लोगों के लिए उपहास का विषय न बन जाए, उसके मन में जो भय पैदा हो गया था, वह उसकी परेशानी का केवल मामूली कारण था।

इतना अधिक हतोत्साह वह पहले नहीं हुआ था। यहां तक चोटी लपेटकर सिर पर बांधना उसे बेकार और हास्यास्पद मालूम हो रहा था। बदला लेने के लिए उसके मन में तीव्र विचार आया कि वह अपनी चोटी फ़ौरन खोल दे, लेकिन उसने ऐसा नहीं किया। शाम तक इधर-उधर घूमता रहा और जब उधार में दो प्याले शराब पी ले तब कहीं उसका मन कुछ हलका हुआ और वह एक बार फिर लोहे के सफ़ेद टोपों और सफ़ेद कवचों की झलक अपने कल्पना के नेत्रों से देखने लगा।

एक दिन वह काफ़ी रात गए घूमता रहा। जब शराबख़ाना बंद होने का समय हो गया बस तभी कुल-देवता के मंदिर की ओर लौटने लगा।

"धांय! धांय!"

अचानक उसने एक अजीब-सी आवाज़ सुनी, जो निश्चित रूप से पटाख़ों की नहीं थी। आ Q, जो हमेशा हंगामा पसंद करता था और जिसे दूसरों के मामलों में टांग अड़ाने में मज़ा आता था, अंधेरे में उस आवाज़

को खोजने निकल पड़ा। उसे लगा उसके सामने किसी के पैरों की आहट आ रही है। वह सावधानी से कान लगाकर सुन रहा था कि एक आदमी उसके सामने से तेज़ी से भाग निकला। ज्यों ही आ Q ने उसे देखा, उसके पीछे पूरी तेज़ी से दौड़ पड़ा। जब वह आदमी मुड़ा, तो आ Q भी मुड़ गया और जब वह मुड़ने के बाद रुका, तो आ Q भी रुक गया। उसने देखा पीछे कोई नहीं है और उस आदमी को पहचान लिया। वह युवक D था।

"क्या बात है?" आ Q ने क्रोध से पूछा।

"चाओ··· चाओ परिवार के घर चोरी हो गई है।" युवक D ने हांफते हुए कहा।

आ Q का दिल तेज़ी से धड़कने लगा। युवक D इतना कहकर चला गया। आ Q दौड़ पड़ा। रास्ते में वह दो या तीन बार रुका, फिर आगे बढ़ गया, लेकिन वह किसी समय इस धंधे में रह चुका था, इसलिए उसमें एक अनोखा साहस पैदा हो गया। एक गली के नुक्कड़ से गुज़रते हुए उसने कान लगाकर सुनने की कोशिश की। कल्पना में उसे ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने की आवाज़ सुनाई दी। ध्यान से देखा, तो उसे लगा कि बहुत से सैनिक लोहे का सफ़ेद टोप और सफ़ेद कवच पहने संदूक़ ले जा रहे हैं, फ़र्नीचर ले जा रहे हैं, यहां तक कि काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी की पत्नी का निङ्पो पलंग भी ले जा रहे हैं, लेकिन वे लोग उसे ज़्यादा साफ़ नज़र नहीं आ रहे थे। वह पास जाना चाहता था, लेकिन उसे लगा, जैसे उसके पैर ज़मीन में गड़ गए हों।

उस रात आकाश में चंद्रमा नहीं उगा था। वेइच्वाङ में गहरा अंधेरा था, चारों ओर सन्नाटा था। सम्राट फ़ू शी[1] के शांतिपूर्ण शासन-काल की तरह सारा वातावरण शांत था। आ Q वहां तब तक खड़ा रहा, जब तक वह उकता नहीं गया। फिर भी उसे हर वस्तु पहले की ही तरह मालूम हो रही थी। दूर कहीं लोग तरह-तरह का सामान ले जाते हुए, संदूक़ ले जाते हुए, फ़र्नीचर ले जाते हुए, काउंटी परीक्षा के सफल प्रत्याशी की पत्नी का निङ्पो पलंग ले जाते हुए। ऐसा-ऐसा सामान ले जाते हुए, जिसे देखकर उसे स्वयं अपनी आंखों पर भरोसा नहीं हो रहा था, इधर-उधर आ-जा रहे थे, लेकिन

1. चीन की प्राचीनतम दन्त कथाओं का एक सम्राज्य।

आ Q ने उनके पास न जाने का फ़ैसला कर लिया और मंदिर में लौट गया।

कुल-देवता के मंदिर में और भी अधिक अंधेरा था। बड़ा फाटक बंद करने के बाद वह टटोलता हुआ अपने कमरे में जा पहुंचा। कुछ देर लेटने के बाद ही उसका मन शांत हुआ और वह सोच सका कि इस घटना का उस पर क्या असर पड़ सकता है। लोहे का सफ़ेद टोप और सफ़ेद कवच धारण किए सैनिक आ चुके थे, लेकिन वे उससे मिलने नहीं आए थे। वे बहुत-सी चीज़ें ले गए थे, लेकिन उसे अपना हिस्सा नहीं मिल सका था, यह सब उस नक़ली विदेशी दरिंदे का ही दोष था, जिसने उसे विद्रोह में शामिल नहीं होने दिया था अन्यथा यह कैसे हो सकता था कि इस बार उसे अपना हिस्सा नहीं मिलता?

आ Q इसके बारे में जितना अधिक सोचता, उसका ग़ुस्सा भी उतना ही अधिक बढ़ता जाता। सोचते-सोचते उसका पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया, "तो यह विद्रोह मेरे लिए नहीं, सिर्फ़ तुम लोगों के लिए है?" बड़ी चिढ़न के साथ सिर हिलाते हुए वह बुदबुदाया, "सत्यानास हो तेरा ओ नक़ली विदेशी दरिंदे के बच्चे! अच्छा, तो तू बना रह विद्रोही। जानता है, विद्रोह की क़ीमत सिर कटाकर चुकानी पड़ती है! मैं मुखबिर बन जाऊंगा और तेरा सिर कटवाने के लिए, तेरा और तेरे पूरे कुनबे का सिर कटवाने के लिए, तुझे शहर भिजवा कर रहूंगा।··· मार डालो! मार डालो!"

अध्याय नौ

शानदार पटाक्षेप

चाओ परिवार के घर चोरी होने पर वेइच्वाङ के अधिकतर लोग बड़े खुश हुए, पर वे सहम भी गए। आ Q इसका अपवाद न था, पर चार दिन बाद अचानक आधी रात के समय आ Q को घसीटकर शहर ले जाया गया। वह अंधेरी रात थी। एक सैनिक दस्ता, एक मिलिशिया दस्ता, एक पुलिस दस्ता और गुप्तचर विभाग के पांच आदमी चुपचाप वेइच्वाङ पहुंचे और कुल-देवता के मंदिर के फाटक के सामने मशीनगन लगाकर,

उन्होंने अंधेरे में मंदिर को घेर लिया। आ Q बाहर नहीं भागा। बहुत समय तक मंदिर में तिनका भी नहीं हिला। कप्तान बेचैन हो उठा और उसने बीस हज़ार तांबे के सिक्कों के इनाम का ऐलान कर दिया। बस, तभी दो मिलिशियामैन ने साहस बटोरकर दीवार फांदी और अंदर घुस गए। उनके सहयोग से शेष लोग भी तेज़ी से अंदर घुस गए और आ Q को बाहर घसीट लाए, लेकिन जब तक उसे मंदिर के बाहर मशीनगन के पास नहीं लाया गया, तब तक वह होश में नहीं आया।

शहर पहुंचने तक दोपहर हो चुकी थी। वे लोग आ Q को एक टूटे-फूटे सरकारी दफ़्तर में ले गए, जहां पांच-छः मोड़ पार करने के बाद उसे एक छोटे कमरे में धकेल दिया। जैसे ही वह गिरता-पड़ता कमरे में पहुंचा, लकड़ी के सींखचों का दरवाज़ा, जो कठघरे के दरवाज़े जैसा लग रहा था, पीछे से तुरंत बंद हो गया। कमरे में शेष तीन ओर नंगी दीवारें थीं और जब उसने सावधानी से देखा, तो कमरे के एक कोने में उसे दो दूसरे व्यक्ति नज़र आए।

आ Q को थोड़ी बेचैनी महसूस हो रही थी, फिर भी वह निराश बिल्कुल नहीं था, क्योंकि कुल-देवता के मंदिर वाला उसका कमरा, जहां वह सोता था, इस कमरे के मुक़ाबले किसी भी तरह बेहतर नहीं था। दूसरे दो व्यक्ति भी देहाती जान पड़ते थे। धीरे-धीरे उन्होंने आ Q से बात शुरू की। उनमें से एक ने बताया कि प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी उसके दादा के ज़माने का लगान वसूल करने के लिए उसे परेशान कर रहा है। दूसरा व्यक्ति यह नहीं जानता था कि उसे यहां क्यों लाया गया है। जब उन्होंने आ Q से पूछा, तो उसने साफ़ कह दिया, "क्योंकि मैं विद्रोह करना चाहता था।"

उस दिन तीसरे पहर उसे लकड़ी के सींखचों वाले दरवाज़े से बाहर घसीटकर एक बड़े कमरे में ले जाया गया। कमरे के दूसरे किनारे पर एक बूढ़ा आदमी बैठा था, जिसकी चांद घुटी हुई थी। आ Q ने पहले उसे कोई भिक्षु समझा, लेकिन जब देखा कि सैनिक उसकी रक्षा कर रहे हैं, जिनमें से कुछ लोगों की चांद इसी बूढ़े आदमी की तरह घुटी हुई है, और कुछ लोग नक़ली विदेशी दरिंदे की ही तरह अपने बाल लगभग एक फुट लंबे बढ़ाकर उन्हें अपने कंधों तक लटकाए हुए हैं, और सबके सब गुस्से से लाल-पीले

होकर बड़ी गंभीर मुद्रा में उसकी ओर घूर रहे हैं, तो वह समझ गया कि अवश्य ही यह कोई महत्त्वपूर्ण व्यक्ति है। उसके घुटने खुद-ब-खुद मुड़ते चले गए और वह सिकुड़कर धरती पर घुटनों के बल बैठ गया।

"खड़े होकर बात करो! घुटने टेकने की आवश्यकता नहीं!" लंबे कोट वाले सारे व्यक्ति ज़ोर से बोल पड़े।

आ Q उनकी बात समझ गया, फिर भी वह खड़े होने में अपने को असमर्थ महसूस कर रहा था—उसका शरीर अनायास ही सिकुड़ गया था और अंत में वह बड़ी अच्छी तरह घुटनों के बल बैठ गया था।

"गुलाम कहीं का!···" लंबे कोट वाले व्यक्तियों ने तिरस्कार के साथ कहा, लेकिन उन्होंने आ Q से उठने का आग्रह नहीं किया।

"अगर सच-सच बता दोगे तो हलकी सज़ा मिलेगी," घुटे सिर वाले बूढ़े आदमी ने आ Q की आंखों में आंखें डालकर धीमे किन्तु स्पष्ट स्वर में कहा, "मुझे सब कुछ मालूम हो चुका है। अगर स्वीकार कर लोगे, तो छोड़ दिए जाओगे।"

"स्वीकार कर लो!" लंबे कोट वाले व्यक्तियों ने ज़ोर से कहा।

"बात यह है कि मैं··· खुद ही आना···. चाहता था···" आ Q ने एक क्षण के लिए अवाक् रहने के बाद लड़खड़ाती ज़बान से उत्तर दिया।

"अगर ऐसी बात थी, तो तुम आ क्यों नहीं गए?" बूढ़े आदमी ने बड़ी नर्मी से कहा।

"नक़ली विदेशी दरिंदे ने आने ही नहीं दिया।"

"बकवास बंद करो! यह चर्चा अब बेकार है। तुम्हारे साथी कहां हैं?"

"क्या कहा?···"

"जिन लोगों ने उस रात चाओ परिवार के घर चोरी की, वे लोग कहां हैं?"

"वे मुझे अपने साथ नहीं ले गए थे। उन्होंने चोरी खुद की थी।" यह कहते हुए आ Q कुछ क्रोधित हो उठा।

"वे कहां हैं? अगर बता दोगे, तो तुम्हें छोड़ दिया जाएगा।" बूढ़े आदमी ने और अधिक नर्मी से दोहराया।

"मुझे नहीं मालूम। वे मुझे अपने साथ नहीं ले गए थे।"

इसके बाद बूढ़े आदमी के इशारे पर आ Q को घसीटकर लकड़ी के

सींखचों वाले दरवाज़े के भीतर धकेल दिया गया। अगले दिन सुबह उसे एक बार फिर घसीटकर बाहर निकाला गया।

बड़े कमरे में हर चीज़ पहले जैसी थी। घुटे सिर वाला बूढ़ा अब भी वहीं बैठा था और आ Q एक बार फिर पहले की तरह घुटनों के बल बैठ गया था।

"तुम्हें कुछ और कहना है?" बूढ़े ने बड़ी नर्मी से पूछा।

आ Q ने सोचा और फ़ैसला कर लिया कि उसे कुछ नहीं कहना। इसलिए उसने उत्तर दिया, "कुछ नहीं।"

इसके बाद लंबे कोट वाला एक आदमी काग़ज़ और क़लम लेकर आ Q के पास जा पहुंचा। उसने क़लम आ Q के हाथ में थमाने का प्रयत्न किया। आ Q डर के मारे कांपने लगा, उसकी ज़िंदगी में यह पहला अवसर था, जबकि उसे लिखने के काम आने वाली क़लम हाथ में उठानी पड़ रही थी। अभी यह सोच ही रहा था कि क़लम कैसे पकड़ी जाए, उस आदमी ने काग़ज़ पर एक जगह उंगली रखते हुए उससे हस्ताक्षर करने को कहा।

"मैं—मैं—लिखना नहीं जानता।" आ Q ने कहा। वह शर्म से गड़ा जा रहा था। क़लम पकड़े उसका हाथ कांप रहा था।

"अगर ऐसी बात है, तो एक गोल आकार बना दो। यह तो तुम्हारे लिए आसान है!"

आ Q ने एक गोल आकार बनाने की कोशिश की, लेकिन जिस हाथ से उसने क़लम पकड़ी हुई थी, वह कांप रहा था। इसलिए उस आदमी ने आ Q के लिए काग़ज़ ज़मीन पर फैला दिया। आ Q झुका और उसने बड़े जतन से, जैसे इस पर उसके जीवन का अस्तित्व निर्भर हो, एक आकार बना दिया। इस भय से कि कहीं लोग उसकी हंसी न उड़ाएं, उसने आकार को गोल बनाने की कोशिश की, लेकिन वह कम्बख़्त क़लम न सिर्फ़ बहुत भारी थी, बल्कि उसके आदेश का पालन भी नहीं कर रही थी। इसके उलटे वह इधर-उधर डगमगाती हुई चल रही थी, और जब आकार पूरा होने ही जा रहा था, तो वह फिर एक बार डगमगा गई, जिससे तरबूज़ के बीज जैसा आकार बन गया।

चूंकि आ Q एक गोल आकार नहीं बना पाया, इसलिए वह शर्म के मारे गड़ा जा रहा था। उस आदमी ने बिना कुछ कहे काग़ज़ और क़लम

को उसके हाथ से ले लिया। इसके बाद कई लोगों ने उसे तीसरी बार घसीटकर लकड़ी के सींखचों वाले दरवाज़े के भीतर धकेल दिया।

इस बार उसे ज़्यादा परेशानी नहीं हुई। उसने सोचा कि इस दुनिया में हर आदमी को किसी-न-किसी समय बंदीगृह के अंदर या बाहर अवश्य जाना पड़ता है और काग़ज़ पर आकार अवश्य बनाने पड़ते हैं, उसका बनाया हुआ आकार गोल नहीं था इसलिए आ Q को ऐसा लग रहा था, जैसे उसकी इज़्ज़त पर धब्बा लग गया हो, लेकिन तभी उसने यह सोचकर अपने मन को तसल्ली दी कि, "केवल मूर्ख लोग ही सम्पूर्ण आकार बना सकते हैं।" मन में यही विचार लिए वह सो गया।

मगर उस रात प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी सो नहीं सका, क्योंकि कप्तान से उसका झगड़ा हो गया था। सफल प्रत्याशी इस बात पर ज़ोर दे रहा था कि सबसे अधिक महत्त्व की बात है चुराए गए माल को बरामद करना, जबकि कप्तान कह रहा था कि सबसे ज़्यादा महत्त्व की बात है, लोगों के सामने उदाहरण प्रस्तुत करना। कुछ समय से कप्तान प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी के साथ बड़ा तिरस्कारपूर्ण व्यवहार कर रहा था। इसलिए मेज़ पर ज़ोर से घूंसा मारते हुए कहा था, "एक को सज़ा दो और सौ को डराओ! मालूम है तुम्हें, मुझे क्रांतिकारी पार्टी का सदस्य बने अभी बीस दिन भी नहीं हुए कि लूटमार की एक दर्जन से ज्यादा वारदातें हो चुकी हैं और इनमें से एक भी मामले का सुराग नहीं मिल पाया है। ज़रा सोचो इसका मेरी प्रतिष्ठा पर कितना ग़लत असर पड़ रहा है। बड़ी मुश्किल से यह मामला सुलझ सका है, लेकिन तुम सिद्धांत बघारने चले आए। इससे काम नहीं चलेगा। यह मेरा मामला है।"

प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी बहुत क्षुब्ध हो उठा, लेकिन अपनी बात पर अडिग रहते हुए उसने कहा कि अगर चोरी का माल बरामद नहीं हुआ तो वह सहायक नागरिक प्रशासक के पद से तुरंत त्याग-पत्र दे देगा।

"जो जी में आए करो।" कप्तान ने उत्तर दिया।

इस घटना से प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी उस रात सो न सका, लेकिन दिलचस्प बात यह है कि अगले दिन सुबह उसने त्याग-पत्र नहीं दिया।

जिस रात प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी सो नहीं सका था, उसके अगले दिन सुबह आ Q को घसीटकर लकड़ी के सींखचों वाले दरवाज़े के

बाहर फिर लाया गया। जब उसे बड़े कमरे में ले जाया गया, तो घुटे हुए सिर वाला बूढ़ा पहले की तरह वहां बैठा था। आ Q भी पहले की तरह घुटनों के बल बैठ गया।

बूढ़े आदमी ने बड़ी नर्मी से उससे पूछा, "तुम्हें कुछ और कहना है?"

आ Q ने सोचा और फ़ैसला कर लिया कि उसे कुछ नहीं कहना। इसलिए उसने जवाब दिया, "कुछ नहीं।"

लंबे कोट और छोटी जाकिट वाले कई लोगों ने विदेशी कपड़े की बनी एक सफ़ेद बनियान उसे पहना दी। इस पर काले रंग के अक्षर अंकित थे। आ Q को घबराहट महसूस हुई, क्योंकि यह पोशाक कुछ शोक मनाने वालों की सी लगती थी, और शोक मनाने वालों की पोशाक पहनना अपशकुन समझा जाता है। साथ ही उसके दोनों हाथ पीठ पर बंधे हुए थे। वे लोग उसे सरकारी दफ़्तर से बाहर घसीट ले गए।

आ Q को एक खुले छकड़े में बैठा दिया गया और कई छोटी जाकिट वाले उसके साथ बैठ गए। छकड़ा फौरन चल पड़ा। छकड़े के सामने बहुत से सैनिक व मिलिशिया वाले चल रहे थे, जिनके कंधों पर विदेशी राइफ़लें लटक रही थीं, दोनों तरफ़ सन्नाटे में आए तमाशा देखने वालों की भीड़ चल रही थी। पीछे की ओर क्या था, यह आ Q को नज़र नहीं आ रहा था। अचानक उसे ख्याल आया, "क्या ये लोग मेरी गर्दन उड़ाने तो नहीं ले जा रहे हैं?" उसका दिल दहल उठा, आंखों के सामने अंधेरा छा गया, कानों में घूं-घूं की आवाज़ गूंजने लगी और उसे लगा, जैसे बेहोश हो जाएगा। मगर वह बेहोश नहीं हुआ। वह कुछ देर तक डरा रहा, लेकिन बाद में शांत हो गया। उसने सोचा कि इस दुनिया में शायद हर आदमी को किसी-न-किसी समय अपना सिर अवश्य कटवाना पड़ता है।

इस सड़क से वह अच्छी तरह परिचित था, पर उसे बड़ा आश्चर्य हो रहा था—ये लोग उसे क़त्लगाह की ओर क्यों नहीं ले जा रहे? यह बात वह नहीं जानता था कि लोगों के सामने उदाहरण प्रस्तुत करने के लिए उसे पूरे शहर में घुमाया जा रहा है। अगर उसे मालूम भी हो जाता, तो भी स्थिति में कोई बदलाव नहीं होने वाला था, बस वह सोचने लगता कि इस दुनिया में शायद हर आदमी को किसी-न-किसी दिन लोगों के सामने अवश्य उदाहरण बनकर प्रस्तुत होना पड़ता है।

और जब वे लोग क़त्लगाह की ओर मुड़े, तब कहीं उसे ज्ञात हुआ कि उसका सिर कटने वाला है। जो लोग चींटियों की तरह उसके इर्दगिर्द एकत्र हो गए थे, उनकी ओर आ Q ने बड़ी दुखी नज़रों से देखा। सड़क के किनारे एकत्र भीड़ में सहसा उसकी नज़र आमा ऊ पर पड़ी। अच्छा, तो इसीलिए इतने दिनों तक वह नहीं दिखाई दी—वह शहर में काम करने लगी थी।

अचानक आ Q को अपने ठंडे उत्साह पर शर्म महसूस होने लगी, क्योंकि उसने आपेरा की एक भी पंक्ति नहीं गाई थी। उसके मन में अनेक विचार घूम गए—'युवक विधवा अपने पति की क़ब्र पर' अधिक वीररसपूर्ण नहीं है। 'नाग और बाघ की लड़ाई' के ये शब्द कि 'है अफ़सोस मुझे मैंने हत्या कर डाली' बिल्कुल निम्न स्तर के हैं। 'हड्डी-पसली चूर तुम्हारी लोहे की छड़ से कर दूंगा' सबसे अच्छा रहेगा, लेकिन जब उसने अपने हाथ ऊपर उठाने की कोशिश की, तो याद आया कि उसके दोनों हाथ बंधे हुए हैं, इसलिए उसने 'हड्डी-पसली चूर तुम्हारी···' भी नहीं गाया।

"बीस बरस बाद मैं एक अन्य···"[1] क्षुब्ध आ Q के मुंह से इसकी आधी ही पंक्ति निकली, जिसे उसने पहले कभी याद कर लिया था परन्तु इस्तेमाल कभी नहीं किया था, "बहुत ख़ूब!" भीड़ की आवाज़ भेड़िए की गुर्राहट के समान गूंज उठी।

छकड़ा लगातार आगे बढ़ता जा रहा था। इस शोरगुल के बीच आ Q की आंखें आमा ऊ को खोज रही थीं, लेकिन मालूम होता था कि उसने आ Q को नहीं देखा, क्योंकि वह सैनिकों के कंधों पर लटकी विदेशी राइफलों पर नज़र गड़ाए थी।

आ Q ने शोरगुल मचाती भीड़ पर फिर एक बार नज़र डाली।

उस समय उसके मन में फिर एक बार अनेक विचार घूम गए। आज से चार साल पहले पहाड़ की तलहटी में उसका सामना एक भूखे भेड़िए से हो गया था। भेड़िया उसके पीछे लग गया था और उसे खा जाना चाहता था। आ Q को लगा कि भय के मारे उसके प्राण ही निकल जाएंगे, पर भाग्य से उसके हाथ में एक कुल्हाड़ी थी, जिससे उसके अंदर वेइच्वाङ लौटने की

1. "बीस वर्ष बाद मैं एक अन्य हट्टा-कट्टा नौजवान बन जाऊंगा", ये पंक्तियां अक्सर अपराधी मौत की सजा पाने के पहले मृत्यु को तुच्छ समझने के लिए कहा करते थे।

हिम्मत आ गई। मगर उस भेड़िये की आंखों को वह कभी नहीं भूल सका था। खूंख्वार होते हुए भी वे सहमी हुई, दो ज्योति-पुंजों की तरह चमक रही थीं, जैसे दूर से ही उसे बेध डालेंगी। आज उसे उस भेड़िये से भी ज्यादा खूंख्वार आंखें नज़र आ रही हैं—ठंडी लेकिन मर्म को भेदनेवाली आंखें, जो उसके शब्दों को निगल जाने के बाद उसके हाड़-मांस से भी कुछ अधिक चीज़ें निगल जाने को तत्पर थीं। ये आंखें एक निश्चित दूरी पर बराबर उसका पीछा कर रही थीं। लगता था, ये आंखें एक ही बिंदु पर केंद्रित होकर उसकी आत्मा को बेध रही हैं।

"बचाओ! बचाओ!"

लेकिन ये शब्द आ Q के मुंह से क़तई नहीं निकले थे। उसकी आंखों के आगे अंधेरा छा गया, कानों में घूं-घूं की आवाज़ें गूंजने लगीं और उसे लगा, जैसे सारा शरीर मिट्टी की तरह बिखर गया हो।

उस चोरी के बाद सबसे अधिक प्रभाव प्रांतीय परीक्षा में सफल प्रत्याशी पर पड़ा, क्योंकि चोरी का माल बरामद नहीं हो पाया। उसका सारा परिवार दुख के समंदर में डूब गया। दूसरे नंबर पर सबसे अधिक प्रभाव चाओ परिवार पर पड़ा; जब काउंटी परीक्षा में सफल प्रत्याशी चोरी की रपट लिखाने शहर गया, तो कुछ बुरे क्रांतिकारियों ने न सिर्फ़ उसकी चोटी ही काट डाली, बल्कि उससे बीस हज़ार तांबे के सिक्के भी वसूल कर लिए। इससे पूरा चाओ परिवार भी दुख के समंदर में डूब गया। उस दिन के बाद से उन लोगों में बस एक सत्ताच्युत राजवंश के उत्तराधिकारियों की सी शान शेष रह गई।

इस घटना की चर्चा करते समय वेइच्वाङ में किसी ने कोई प्रश्न नहीं उठाया। प्राकृतिक तौर पर सभी इस बात के बारे में एकमत थे कि आ Q एक बुरा आदमी था, इसका सबूत यह था कि उसे गोली मार दी गई थी। अगर वह एक बुरा आदमी न होता, तो भला उसे गोली क्यों मारी जाती? लेकिन शहर के लोगों का मत उसके पक्ष में नहीं था। ज़्यादा लोग इसलिए असंतुष्ट थे, क्योंकि गोली मारने का दृश्य उतना ज़ोरदार नहीं होता, जितना कि सिर काटने का, और वह कितना हास्यास्पद अपराधी था, जो आपेरा की भी पंक्ति गाए बिना इतने गली-कूचों से गुज़र गया। वे लोग व्यर्थ ही उसके पीछे गए।

गांव का आपेरा

पिछले बीस बरस में सिर्फ़ दो बार चीनी आपेरा (गीति-नाट्य) देखने गया हूं। दोनों बार पिछले दस बरसों में ही गया। उससे पहले न कभी इच्छा हुई और न कभी ऐसा मौका ही आया। दो बार गया तो अवश्य, परंतु देख कुछ भी न सका; यूं ही लौटना पड़ा।

पहली बार तो 1912 की बात है, जब मैं बीजिंग पहली बार आया था। एक दोस्त ने राय दी थी कि बीजिंग के आपेरा का मुक़ाबला नहीं, जिसने नहीं देखा पछताएगा। सोचा था आपेरा देखना बड़े आनंद की बात होगी, ख़ासकर बीजिंग में। बहुत उत्साह से आपेरा देखने गया। थियेटर का नाम तो भूल गया। जब थियेटर में पहुंचा, तो आपेरा आरंभ हो चुका था। नगाड़ों की आवाज़ भवन के बाहर भी सुनाई दे रही थी। किसी तरह भीड़ में दबता हुआ भीतर पहुंचा। रंग-बिरंगी रोशनी की चकाचौंध थी। ठसाठस भीड़ थी। बीच में कुछ कुर्सियां खाली दिखाई दीं। मैं वहां बैठने लगा, तो किसी ने टोक दिया। नगाड़ों और बाजों की गूंज इतनी थी कि बात समझ नहीं पाया। कान पर हाथ रखकर सुना तो समझ में आया—वे कुर्सियां रिज़र्व थीं।

हम लोगों को पीछे लौटना पड़ा। तभी लंबी-चमकीली चोटी वाला एक आदमी आया। वह इशारे से हमें अपने पास बुला ले गया। उसने एक ओर गलियारे में हमें एक बेंच दिखा दी। बेंच क्या, चार अंगुल चौड़ी तख्ती कंधों तक ऊंचे पायों पर टिकी हुई थी, जैसे किसी को दंड देने का उपकरण हो। उसके ऊपर बैठने में भय लगा। मैं भाग निकला।

कुछ दूर था कि पीछे से मित्र की पुकार सुनी, "क्यों, क्या हुआ?" घूमकर देखा वह पीछे-पीछे चला आ रहा था। उसने आश्चर्य से पूछा, "भागे क्यों जा रहे हो, बताते क्यों नहीं?"

"क्षमा करना," मैंने जवाब दिया, "उस शोर से बहरा हो गया था। कानों में अब भी गड़गड़ाहट गूंज रही है। तुम्हारी बात सुन ही नहीं सका।"

उस घटना की जब भी याद आ जाती, यह मानना पड़ता कि या तो आपेरा कुछ ऐसा-वैसा ही था या मैं ही उसे देखने योग्य नहीं था।

दूसरी बार आपेरा देखने का साहस किस बरस किया, यह ठीक-ठीक याद नहीं है। सिर्फ़ यह याद है कि वह आपेरा हुपे प्रांत के बाढ़ पीड़ितों की सहायता के लिए आयोजित किया गया था। थान शिन-फेइ[1] अभी ज़िंदा था। दो डालर का टिकट था, 'आम के आम गुठलियों के दाम' का मामला था। बाढ़ पीड़ितों की सहायता भी थी और बीजिंग के नं. एक थियेटर में आपेरा देखने का मौक़ा भी था। थान शिन-फ़ेइ और दूसरे प्रमुख कलाकार आपेरा में भाग ले रहे थे। चंदा जमा करने वाले के प्रभाव में आकर एक टिकट ख़रीद लिया था, मगर एक उत्साही सज्जन ने समझाया कि थान शिन-फ़ेइ के दर्शन पा लेना ही कौन-सी कम बड़ी बात है! कुछ बरस पहले आपेरा देखने की कोशिश का कानफोड़ अहसास भी भूल गया। बहुत उत्साह से आपेरा देखने गया। इतना महंगा टिकट ख़रीदकर यूं ही कैसे फेंक सकता था? यह भी सोचा कि मौक़ा चूक गया, तो मन में टीस रह जाएगी। आपेरा बीजिंग के सर्वोत्तम आधुनिक थियेटर में हो रहा था। धक्कों का भय नहीं था, वहां कुर्सियां रिज़र्व रहती थीं। यह भी सुन लिया था कि थान शिन-फेइ काफ़ी देर से मंच पर आएगा, इसलिए आराम से नौ बजे चला। थियेटर में पहुंचा, तो चकित रह गया—पहली बार की तरह ही, ठसाठस भीड़ के कारण भीतर जाना आसान नहीं था। खड़े होकर देखने के लिए भी जगह नहीं दिखाई दी। बड़ी कठिनाई से भीड़ में पीछे दबकर खड़े रह सकने की जगह मिली। एक अभिनेता बुढ़िया की भूमिका में गा रहा था। उसके मुंह के दोनों तरफ़ छोटी-छोटी मशालें जल रही थीं। उसके साथ ही एक राक्षस योद्धा भी खड़ा था। बहुत याद करके अंदाज़ा किया, वह बुढ़िया शायद मौद्गल्यायन[2] की मां थी, क्यों उसके पास ही मंच पर एक भिक्षु आया था।

1. बीजिंग आपेरा का एक प्रसिद्ध अभिनेता।
2. मौद्गल्यायन गौतम बुद्ध का शिष्य था। कहा जाता है कि उसकी मां को अपने पापों के कारण नर्क में जाना पड़ा था, पर उसने अपनी मां का उद्धार कर लिया।

अभिनेता को पहचान नहीं पाया। समीप ही एक बड़ा मोटा आदमी मेरी ही तरह फंसा खड़ा था। मैंने उससे पूछ लिया कि यह कौन है। मेरे अज्ञान पर उसकी आंखें हैरत से फैल गईं। 'कुङ युन-फू!'[1] उसने उत्तर दिया। अपने अज्ञान और भूल के लिए मुझे बड़ी लज्जा अनुभव हुई। निश्चय किया कि जानकारी न हो तो चुप रहना ही अच्छा है। इसके बाद एक नायिका अपनी दासी के साथ गीत गाती हुई आई। एक बूढ़े ने भी गीत गाया। एक के बाद एक कई पात्र आए। मैं किसी को भी पहचान नहीं सका। इसके बाद मंच पर भयंकर युद्ध का हंगामा हुआ। बाद में भी दो-तीन योद्धाओं ने तलवारों के पैंतरे दिखाए। 10 बजे, 11 बजे, 11.30 बजे, 12 भी बज गए, लेकिन मंच पर थान शिन-फेइ का कोई चिह्न नज़र नहीं आया।

जीवन में धैर्य की ऐसी कठिन परीक्षा मुझसे कभी नहीं दी गई। साथ चिपके स्थूल मोटे शरीर वाले सज्जन की सांसों की सांय-सांय, मंच पर नगाड़ों की गड़गड़ाहट, झांझों की झंकार, बाजों की गूंज और रंग-बिरंगी रोशनियों की चकाचौंध ने मुझे पस्त कर दिया। मान लेना पड़ा कि यह परीक्षा मेरे बस में नहीं है। पीठ फेर ली। भीड़ से निकल पाने के लिए भी कम संघर्ष नहीं करना पड़ा। मेरा स्थान पलक मारते ही भर गया। बेशक मेरे बग़ल वाले मोटे व्यक्ति के शरीर के दबे हुए भाग ने ही फूलकर वह स्थान ले लिया था। मैं भीड़ को चीरकर एक-एक कदम निकलता जा रहा था और मेरे पीछे का स्थान भरता जा रहा था। किसी तरह थियेटर से बाहर निकला। बाहर सवारियों के इंतज़ार में खड़ी रिक्शाओं के अलावा सड़क सूनी थी। हां, दस-बारह आदमी अब भी झेंपे हुए आपेरा के पोस्टर में अभिनेताओं के नाम पढ़ रहे थे। दूसरी तरफ़ आठ-दस बेकार भी बैठे थे, शायद आपेरा की समाप्ति पर बाहर निकलने वाली स्त्रियों को घूरने की तमन्ना लिए हुए। यहां भी थान शिन-फ़ेइ का कहीं कोई आभास नहीं था।

लेकिन रात में हवा तेज़ और बड़ी सर्द हो गई थी तथा शरीर को तीर की तरह बेध रही थी। सर्द हवा का ऐसा आनंद मैंने बीजिंग में उस रात पहली बार पाया।

उस रात मैंने चीनी आपेरा को हमेशा के लिए अलविदा कह दिया।

1. बुढ़िया की भूमिका में काम करने वाला एक दूसरा बीजिंग का आपेरा अभिनेता।

उस बारे में फिर कभी सोचा भी नहीं। कभी किसी आपेरा के थियेटर के सामने से निकल भी गया, तो उधर आंख नहीं उठाई। वह चीज़ अपनी समझ और पहुंच के दूर थी।

कुछ दिन पहले चीनी आपेरा के संबंध में जापानी में एक पुस्तक पढ़ने का मौक़ा मिला। पुस्तक और लेखक का नाम भूल चुका हूं। पुस्तक के एक अध्याय में लेखक ने विचार प्रकट किया था कि चीनी आपेरा में नगाड़े, ढोल, झांझ, बाजों और चीख़-पुकार का इतना हंगामा होता है कि दर्शकों का सिर चकराए बिना नहीं रह सकता। ये आपेरा थियेटर के लिए उपयुक्त नहीं हो सकते, परंतु खुले मैदान में कुछ दूरी से देखा जाए तो इनमें ज़रूर रस मिलता है। मुझे लगा कि मेरे मस्तिष्क में चीनी आपेरा के बारे में जो टुकड़े-टुकड़े विचार बना था, उसका उस पुस्तक में ठीक शब्दों में वर्णन कर दिया गया था। ठीक से याद भी आ गया कि बीजिंग में दो बार आपेरा देखने का साहस इसलिए किया कि बहुत पहले गांव में देखे आपेरा की याद से उसके लिए रुचि बनी हुई थी। क्या बताऊं, उस जापानी पुस्तक का नाम ही याद नहीं आ रहा।

हां, तो गांव में वह दिलचस्प आपेरा मैंने कब देखा था? कई बरस पहले। उसे एक युग बीत गया। मैं तब ग्यारह-बारह साल से अधिक नहीं था। हम लूचन में थे। लूचन में पुराना रिवाज था कि नई ब्याही बहुएं जब तक गृहस्थी के झमेले में अच्छी तरह नहीं फंस जातीं, गर्मी आने पर कुछ दिनों के लिए मायके चली जाती थीं। मेरी दादी अभी खूब तगड़ी-तंदुरुस्त थीं, पर मां को भी घर का काफ़ी काम संभालना पड़ता। इसलिए वे मायके में अधिक समय नहीं रह पाती थीं। पुरखों की समाधि की पूजा के लिए वहां जातीं, तो कुछ समय रह लेतीं। मैं मां के साथ ननिहाल अवश्य जाता। मेरे ननिहाल का गांव फिङछूयाओ नदी के किनारे से दूर था। गांव से समुद्र भी दूर नहीं था। सब मिलाकर वहां से किसानों और मछुआरों के तीस घर भी नहीं होंगे। गांव में एक छोटी-सी दुकान भी थी, पर मेरे लिए तो वहां स्वर्ग था। एक तरफ़ मुझे वहां बड़ा लाड़ मिलता था और दूसरी ओर गीत-संग्रह'[1] रटने से भी बचा रहता था।

---

1. चीन का प्राचीनतम काव्य-संग्रह।

ननिहाल में खेलने के लिए बच्चों की कमी नहीं थी। गांव में एक घर का मेहमान सारे गांव देहात का मेहमान होता है। सो, मेरी वजह से दूसरे घरों के बच्चों को भी खेल में मेरा साथ देने के लिए कामकाज से निजात मिल जाती। हम प्रायः बराबर के ही थे, परंतु रिश्ते के संबंध से हम लोगों में छोटे-बड़े का बहुत भेद था। सारा गांव एक ही कुटुम्ब का था। कोई संबंध में मेरा मामा लगता तो कोई नाना। इस तरह से पीढ़ियों का अंतर था, परंतु इस तरह की बड़ाई का ख्याल किसी को नहीं था। खेल और झगड़े के बीच यदि भानजा मामा को या दोहता नाना को पीट देता, तो इसे अनुचित या अपमान समझकर आपत्ति नहीं की जाती थी। गांव के अक्सर सभी लोग अनपढ़ थे।

हम दिन-भर नदी के किनारे रेत खोद-खोद कर केंचुए चुनते रहते। कांटा डालकर झींगे पकड़ते रहते थे। जल-जन्तुओं में झींगे के समान मूर्ख दूसरा जीव नहीं। झींगा स्वयं कांटे को ढूंढ़कर फंसने के लिए आता है। दो-चार घंटे में ही हम लोग टोकरी भर झींगे पकड़ लेते। दूसरे बच्चे मुरव्वत में अपने पकड़े हुए झींगे भी मुझे दे देते। हम भैंस चराने भी जाते, पर शायद भैंस जीवों में ऊंची जाति की होती है, इसलिए सांडों और भैंसों का रुख अपरिचितों के लिए जरा दुश्मनी-भरा होता है। उनकी नज़र में मेरे लिए स्नेह नहीं था। इसलिए मुझे भी उनके बहुत पास जाने का साहस नहीं होता था। मैं उनसे थोड़ा दूर ही रहता। मेरा भय दूसरे बच्चों के लिए हंसी की चीज़ बन जाता। उस वक़्त वे प्राचीन कविता सुना सकने की मेरी योग्यता की उपेक्षा कर मुझ पर ठठाकर हंस पड़ते थे।

मेरे मन में चाओच्वाङ जाकर आपेरा देखने की बहुत उमंग थी। चाओच्वाङ उस गांव से दो मील पर थोड़ा बड़ा गांव था। फिङछूयाओ बहुत छोटा गांव था। वहां के लोग आपेरा का आयोजन करने का खर्च नहीं उठा सकते थे। वे जो कुछ बनता जमा करके चाओच्वाङ के लोगों को दे देते। दोनों गांवों का आपेरा साझे में होता। तब मेरे भीतर यह सोचने लायक समझ नहीं थी कि हर साल उस अवसर पर आपेरा आयोजित करने का क्या कारण है? पर अब समझ में आता है कि वसंत का उत्सव मनाने के लिए या गांव में बलि के अवसर पर आपेरा का आयोजन किया जाता होगा।

बहुत इंतज़ार के बाद वह दिन आया। कह चुका हूं कि तब मेरी उम्र

ग्यारह-बारह की रही होगी। दुर्भाग्य से उस दिन घाट पर कोई नाव नहीं थी। फिड़छ्याओ भर में एक ही बड़ी नाव थी। बड़ी नाव सुबह ही छूट जाती और शाम देर से लौटती। उस नाव को हम किराए पर नहीं ले सकते थे। दूसरी नावें बहुत छोटी थीं, इसलिए उनमें भी नहीं जा सकते थे। एक आदमी को नाव के लिए पड़ोस के गांव में दौड़ाया, पर कुछ लाभ नहीं हुआ। सभी नावें सुबह ही किराए पर चली गई थीं। मेरी नानी बहुत बिगड़ीं, अपने लड़कों पर बहुत नाराज़ हुई–"पहले से नाव क्यों नहीं की?"

मां ने बात टाल देने के लिए कहा, "परेशान होने की क्या ज़रूरत है? लूचन में तो बड़े-बड़े आपेरा होते रहते हैं। जब चाहेगा देख लगा। गांव के आपेरा में ऐसी क्या बात है? इतने झंझट की क्या आवश्यकता है?" परन्तु मेरी आंखों में निराशा के आंसू आ गए। मां ने ख़ूब समझाने का प्रयत्न किया कि मुझे रोना नहीं चाहिए, नहीं तो नानी का मन दुखेगा। मुझे दूसरे लोगों के साथ न जाने के लिए भी समझाया कि नानी पीछे चिन्ता करती हैं।

मतलब यह कि बात बन नहीं सकी। दूसरे लोग दोपहर में खा-पी कर आपेरा देखने चले गए, तो मुझे लग रहा था कि नगाड़ों और झांझ और ताशों की आवाज़ मुझे भी सुनाई दे रही है। कल्पना में दिखाई दे रहा था कि आपेरा के मंच को घेरे लोग सोयाबीन का दूध ख़रीद-ख़रीद कर पी रहे हैं।

उस दिन मैं झींगा पकड़ने भी नहीं गया। खाना भी अच्छा नहीं लगा। इससे मां भी दुखी थीं, पर उनके बस में कुछ नहीं था। शाम होते-होते नानी को मेरा दुख मालूम हुआ। वह बोलीं, "लड़का गुस्सा क्यों नहीं करेगा? पहले ही ख्याल किया जाना था। चार दिन का मेहमान है। मेहमान का भी ख्याल न किया जाए, ऐसा तो कभी नहीं होता। शाम का भोजन हो चुका था। आपेरा देखने गए लड़के लौटे तो सीधे हमारे यहां आ गए और चहक कर आपेरा की बातें सुनाने लगे। मैं चुपचाप सुनता रहा। मुझे ख़ामोश देखकर वे मेरे प्रति हमदर्दी जताने लगे। श्वाङ-शी सब लड़कों में चालाक था। सहसा बोल पड़ा, "बड़ी नाव चाहिए? आठवें बड़े बाबा की नाव तो आ ही गई होगी।" दस-बारह लड़के भी तैयार हो गए कि बड़े बाबा की बड़ी नाव पर मुझे आपेरा दिखा लाएंगे। मैं ख़ुश हो गया, परन्तु नानी घबराईं कि हम

बच्चे ही तो हैं। बच्चों के साथ मुझे अकेले कैसे भेज दें। मां बोलीं कि जवान लोगों को सुबह अपने काम में लगना होगा। किसी को रतजगा करने के लिए उनके साथ कैसे भेज दें।

बात यहां अटकी, तो श्वाङ-शी ने हिम्मत से कहा, "डरने की क्या बात है? मेरे जिम्मे रहा। ख़ूब बड़ी नाव है। शुन भैया बहुत सीधा लड़का है, वह कौन सा पानी में कूदने जा रहा है! यहां सब तैरना भी जानते हैं।"

श्वाङ-शी ठीक कह रहा था। उनमें कोई भी लड़का ऐसा नहीं था, जो पानी में मछली की तरह न तैर लेता हो। दो-तीन तो प्रसिद्ध तैराक थे। मां और नानी को भरोसा हो गया। उन्होंने फिर आपत्ति नहीं की और मुस्कराने लगीं। तब हम सब लोग दौड़ पड़े।

मैं अपना सब दुख भूल गया। पांव ज़मीन पर नहीं टिक रहे थे। हम नदी की तरफ़ चल पड़े। चांदनी छिटकी हुई थी। नदी में पुल के पास नाव खड़ी थी। नाव पर सफ़ेद पाल तना था। हम सब नाव में कूद गए। श्वाङ-शी ने सामने का डांड थाम लिया और आ-फ़ा ने पीछे की। छोटे लड़के मेरे साथ नाव के बीचों बीच बैठ गए। बड़े लड़के पीछे होकर डांड चलाने लगे। हम लोगों के पीछे 'सम्भलकर, होशियारी से', कहने के लिए मां चली आ रही थीं। मां जब तक नदी के किनारे पहुंचीं, हम नाव को किनारे से ले जा चुके थे। हम लोगों ने नाव को पुल से दूर ले जाकर घुमाया, नाव पुल की नींव से टकराकर पीछे हट गई। फिर हम पुल के नीचे से निकल गए। दो चप्पू लगाए गए। एक-एक चप्पू पर दो-दो लड़के जुट गए। थोड़ी-थोड़ी दूर जाकर लड़के हाथ बदल लेते। नदी के पानी की कलकल और थपथप में लड़कों की किलकारियां और बातचीत का स्वर मिल रहा था। हम लोग चाओच्वाङ की ओर दौड़े चले जा रहे थे। नदी के दाएं-बाएं किनारों के साथ गेहूं और बीन की फसलों वाले मख़मली खेत नदी के आंचलों की तरह फैले थे।

नदी के पानी पर कोहरा छाया था। कोहरे में खेतों की फसलों, नदी के किनारे और तल के खरपतवार की गन्ध छाई हुई थी। कोहरा हमारी ओर उड़ता आ रहा था। चांदनी कोहरे में से छन-छन कर बरस रही थी। दोनों तरफ़ दूर भूरे रंग की पहाड़ियां फैली हुई थीं, जो हमारी नाव से उल्टी दिशा में भागी जा रही थीं, जैसे लोहे से बने विशाल, चौकड़ियां भरते जानवरों की

पीठें खिंच गई हों। फिर भी मुझे लग रहा था कि हमारी नाव धीरे चल रही है। चप्पू चलाने वाले चार-चार बार हाथ बदल चुके, तब दूर चाओच्वाङ की रोशनियां टिमटिमाती दिखाई देने लगीं। संगीत की गूंज भी महसूस हुई। एक जगह बहुत-सी रोशनियां एक साथ दिखाई दे रही थीं। अंदाज़ा किया कि शायद वहीं आपेरा हो रहा होगा या मछुआरों की नावें एक साथ खड़ी होंगी।

हवा की लहरों पर दूर से हमें बांसुरी की तान भी सुनाई देने लगी। स्वर-लहरी के उतार-चढ़ाव की छुअन मन को सहलाती-सी प्रतीत होती थी। ऐसा लग रहा था, जैसे मैं सपनों के संसार में घूम रहा हूं अथवा स्वर की वह लहर कोहरे, खेतों और जल-वनस्पति की गंध के साथ मुझे भी आकाश में उड़ा ले जाएगी।

नाव दूर से दिखाई देती रोशनियों के पास पहुंच गई। ये मछुआरों की नावों की ही रोशनियां थीं। मैं समझ गया कि चाओच्वाङ तो अभी कुछ दूर ओट में है। ठीक हमारे सामने चीड़ का जंगल था। पिछले बरस मैं उस जंगल में खेलने गया था। याद आ गया कि इसी जंगल में मैंने पत्थर की बनी एक टूटी-फूटी घोड़े की मूर्ति देखी थी। पत्थर की बनी एक भेड़ भी घास पर बैठी थी। जंगल को पार करके हमारी नाव किनारे बने एक घाट पर पहुंच गई। चांओच्वाङ हमारी आंखों के सामने आ गया।

हम लोग टकटकी बांधे आपेरा के मंच की ओर देख रहे थे। मंच गांव के बाहर नदी के किनारे मैदान में बना था। चांदनी में दूर से कोहरे में ढका मंच आसपास की ज़मीन से मिला हुआ, बहुत साफ़ नहीं दिखाई दे रहा था। लगता था कि चित्रों में देखा हुआ परियों का देश आंखों के सामने सजीव हो गया है। हमारी नाव अब बहुत तेज चल रही थी। शीघ्र ही मंच पर रोशनी दिखाई देने लगी और चलते-फिरते लोगों का आभास मिलने लगा। मंच के पास नदी की धारा में आपेरा देखने के लिए आए दर्शकों की नावों की इतनी भीड़ थी कि पानी ही नहीं दिखाई देता था।

आ-फ़ा बोला, "मंच के पास जगह नहीं मिलेगी, दूर से ही देखते हैं।"

नाव की चाल धीमी हो गई। हम पहुंच गए। वाक़ई, मंच के पास पहुंच सकना सम्भव नहीं था। हमें अपनी नाव मंच के सामने वाली दरगाह से कुछ दूर बांधनी पड़ी। अपनी सफ़ेद पाल वाली नाव को काली, मैली नावों के साथ बांधते हमें कौन-सा अच्छा लगता! और वहां जगह भी कहां थी!

हम नाव बांधने में लगे थे कि आपेरा के मंच पर लम्बी काली दाढ़ी लगाए एक पात्र दिखाई दिया। उसकी पीठ पर चार झण्डियां लगी हुई थीं। हाथ में बरछा लिए वह निहत्थे लोगों के झुंड का सामना कर रहा था। श्वाङ-शी ने बताया कि वह बड़ा मशहूर नट है, बिना रुके चौरासी क़लाबाज़ियां खा सकता है। श्वाङ-शी दिन में आया था, तो उसने क़लाबाज़ियां गिनी थीं।

मंच पर होता देखने के लिए, हम सब नाव की डेक पर एकत्र हो गए। परन्तु नट ने कोई क़लाबाज़ी नहीं दिखाई। निहत्थे लड़ते लोगों में से दो-चार ने कुछ उलटी-सीधी छलांगें लगाई और मंच से भाग गए। फिर एक लड़की आई। लड़की ने आकर चिचियाए स्वर में एक गीत गाया—"शाम को भीड़ कम है।"

श्वाङ-शी बोला—"नट थक भी गया होगा। ख़ाली भीड़ में वह करतब क्या दिखाए?" बात ठीक थी, उस समय तक कम ही दर्शक रह गए थे। गांव के लोगों को अंधेरे मुंह ही खेती का काम आरम्भ करना होता है। वे रात-भर जागकर तमाशा कैसे देखते रहते, अतः सोने चले गए। चाओच्वाङ और पड़ोस के गांवों के बीस-पचीस बेकार अवश्य मौजूद थे। गांव के खाते-पीते परिवारों की नावें अलबत्ता अब भी मौजूद थीं, परन्तु उन्हें आपेरा में कोई रुचि नहीं थी। वे मंच के समीप लगे खोमचों पर जाकर मिठाई, फल या दूसरी चीजें खा रहे थे। आपेरा कोई नहीं देख रहा था।

दरअसल क़लाबाज़ी में मुझे भी ख़ास दिलचस्पी नहीं थी। मुझे तो सबसे अधिक रुचि सर्पदेवी देखने की था, जो सफ़ेद वस्त्र पहने अपने सिर पर सर्प का फन दोनों हाथों से संभाले रहती। दूसरा मैं शेर का तमाशा देखना चाहता था। शेर की खाल जैसे धारीदार पीले कपड़े पहनकर कूदते-फांदते कलाकारों का तमाशा। मैं बहुत देर तक इंतज़ार करता रहा, परन्तु दोनों ही खेल नहीं हुए। लड़की गीत गा चुकी, तो एक बूढ़ा अभिनेता युवा नायक की भूमिका में आ गया। मुझे थकान महसूस हो रही थी। क्वेइ-शङ से कहा कि मुझे सोयाबीन का दूध ला दे। क्वेइ-शङ ने लौटकर बताया, "सोयाबीन का दूध ख़त्म हो गया है। सोयाबीन का दूध बेचने वाला

बहरा लौट चुका है। दिन में था, तब मैंने दो कटोरे पिए थे। पानी पियो तो ला दूं।"

मैंने पानी नहीं पिया। प्यास दबाए बैठा रहा। मुझे याद नहीं क्या-क्या देखा। लगता था कि अभिनेताओं के चेहरे अजीब ढंग से बदलते जा रहे हैं। कभी सब एक में मिल जाते, कभी अलग-अलग हो जाते। छोटे लड़के थककर उबासियां ले रहे थे और बड़े आपस में बातें कर रहे थे। तभी एक अच्छा दृश्य सामने आया। लाल कुर्ता पहने एक जोकर को खम्भे से बांध दिया गया और सफ़ेद दाढ़ी लगाए एक आदमी उस पर हण्टर बरसाने लगा। सब को हंसी आ गई और सभी उत्सुकता से देखने लगे। उस रात यही दृश्य सबसे अच्छा रहा।

इसके बाद मंच पर एक बुढ़िया आई। इसको देखकर मुझे बहुत परेशानी होने लगती थी, ख़ासकर तब जब वह बैठकर अपना लम्बा राग अलापना शुरू कर देती। दूसरे लोगों के चेहरों पर भी ऊब साफ़ नज़र आ रही थी। बुढ़िया गाते हुए मंच पर दो बार इधर से उधर गई, फिर मंच के बीचों बीच कुर्सी पर बैठ गई। मुझे बड़ी ऊब हो रही थी। श्वाङ-शी और दूसरे लड़के गालियां बकते हुए शोर मचाने लगे। बुढ़िया ने गाते-गाते अपनी बांहें उठाईं। आशा थी कि गाना समाप्त करके उठ रही होगी, परन्तु इतनी जल्दी निजात कैसे मिल जाती। बुढ़िया फिर आराम से बैठी गाती रही। मेरे साथी शोर मचाने लगे, कुछ लोग उबासियां ले रहे थे। श्वाङ-शी के लिए और सहना पाना सम्भव न था। बोला, "बुढ़िया तो दिन चढ़े तक रेंकती रहेगी, हम घर चलते हैं।" सब तुरन्त तैयार हो गए। जैसे तेज़ी से आपेरा देखने के लिए दौड़ पड़े थे, वैसे ही लौटने के लिए भी उतावले हो गए। तीन-चार लड़के तेज़ी से डांड चलाने लगे, नाव को घुमाकर चप्पू चलाने लगे। वे बुढ़िया गायिका को गालियां भी देते जा रहे थे। नाव चीड़ के जंगल की ओर बढ़ने लगी।

चांद अब भी आसमान में ख़ूब चमक रहा था। ऐसा लगा कि आपेरा में हम अधिक देर नहीं बैठे होंगे। चाओच्वाङ से लौट रहे थे, तब चांदनी और भी अधिक उजली लग रही थी। मुड़कर मंच की ओर देखने से फिर वही परीदेश का गुलाबी कोहरे से ढका काल्पनिक महल दिखाई पड़ रहा था, फिर बांसुरी की वही प्यारी आवाज़ सुनाई देने लगी। अंदाज़ा था कि बुढ़िया

का गाना ख़त्म हो गया होगा, परन्तु फिर लौट चलने की सलाह देने का साहस मुझमें नहीं था।

जल्दी ही हम चीड़ का जंगल पार कर गए। हमारी नाव बड़ी तेज़ रफ़्तार से जा रही थी। चारों तरफ़ छाए घने अंधेरे से अनुमान होता था कि रात बहुत हो चुकी है। हम अभिनेताओं पर हंसते, उन्हें गालियां देते रहे और चप्पुओं की रफ़्तार तेज़ होती रही। पानी की कलकल और नाव द्वारा पानी काटने का शब्द अधिक साफ़ सुनाई दे रहा था। हमारी नाव अपने ऊपर लड़कों को सवार किए एक बहुत बड़ी मछली की तरह नदी की धार को चीरती जा रही थी। रात-भर मछली पकड़ने वाले बूढ़े मछुआरे भी हमें देखकर अपनी नाव रोककर खुशी से पुकार उठते थे।

फिङछ्याओ लगभग तिहाई मील रह गया था। चप्पू चलाने वालों ने चप्पू रख दिए। बहुत जोर लगाने से वे थक गए थे। नाव धीरे-धीरे बहती जा रही थी। हम लोगों को भूख सताने लगी। खाना खाए काफ़ी समय बीत चुका था। क्वेङ-शङ को एक बहुत अच्छी तरकीब सूझी। बोला, "खेतों में 'लोहान बीन' की फलियां पक चुकी हैं, नाव पर ईंधन है। फलियां क्यों न उबालकर खा लें?" सब ओर से 'हां, हां' होने लगी। नाव फ़ौरन किनारे की ओर मोड़ दी। घनी फसल से भरे खेत काले-काले से दिखाई दे रहे थे। खेतों में फलियां पककर फटने को थीं।

श्वाङ-शी नाव से कूदकर किनारे पहुंच गया। उसने पुकारा, "आ-फ़ा, यह तुम्हारे घर का खेत है, उधर का खेत बुजुर्ग ल्यू ई का है। बोलो हम किस खेत की फलियां तोड़ें?"

सब किनारे कूद आए, "तुम लोग पल-भर ठहरो, मुझे देखने दो।" आ-फ़ा ने कहा और खेत में घुसकर फलियों को टटोलने लगा, फिर पुकार उठा—"हमारे खेतों की फलियां बड़ी हैं, यहीं से ले लो।" सब लड़के किलकारी मारकर आ-फ़ा के खेत में घुस गए और जल्दी-जल्दी फलियां तोड़ने लगे।

जब एक-एक मुट्ठी फलियां तोड़ लीं और नाव में डाल दी, तो श्वाङ-शी ने पुकारा—"एक ही खेत में से और मत तोड़ो। आ-फ़ा की मां जान जाएगी तो बहुत हंगामा करेगी। चलो, एक-एक मुट्ठी बुजुर्ग ल्यू ई के खेत से भी ले लें।"

दो बड़े लड़के फिर चप्पू चलाने लगे, दूसरे लड़कों ने आग जलाई। हम छोटे लड़के फलियां छीलने बैठ गए। बीन जल्दी ही उबलकर तैयार हो गया। सब लोगों ने हाथों में लेकर खाया। खा चुके तो बर्तन धोकर रख दिए। फलियों के छिलके नदी में बहा दिए। अपनी शरारत का कोई निशान बचा नहीं रहने दिया। श्वाङ-शी ने कहा कि हम लोगों ने आठवें बड़े बाबा की नाव से ईंधन और नमक ख़र्च किया है। बूढ़ा बहुत तेज़ है, ज़रूर पकड़ लेगा और बिगड़ेगा। दूसरे लड़के ने सुझाया, कोई फिक्र नहीं बूढ़ा बिगड़ेगा तो हम भी उसकी चोरी बता देंगे। बूढ़ा पिछले साल नदी के किनारे से चीड़ की शाखें उठा ले गया था। हम भी कह देंगे कि लकड़ी को लौटाओ! उसके मुंह पर उसे चोर बना देंगे।

"लो, घर पहुंच गए। किसी को भी परेशानी नहीं हुई। मैंने जिम्मा लिया था, सो निभा दिया।" नाव के डेक पर से श्वाङ-शी की आवाज़ सुनाई पड़ी।

मेरी नज़र श्वाङ-शी के पीछे गांव की तरफ़ चली गई। पुल के पास कोई खड़ा था। यह तो मां थीं। श्वाङ-शी मां को ही सुनाकर कह रहा था। नाव पुल के नीचे से गुजरने लगी, तो मैं खड़ा हो गया। नाव किनारे लगी। हम सब उतर गए। मां चिन्ता से भारी स्वर में बोलीं, "तुम लोगों ने इतनी देर क्यों लगा दी? रात का तीसरा पहर हो रहा है।" दूसरे ही क्षण मां के चेहरे से चिन्ता के बादल उड़ गए और होठों पर मुस्कान खिल गई। मां ने लड़कों को अपने घर चलकर मुरमुरे खाने का निमंत्रण दिया।

लड़कों ने बताया कि रास्ते में कुछ खाकर आए हैं, अब भूख नहीं है, नींद आ रही है। चलकर सोएंगे। सब अपने-अपने घर चले गए।

दूसरे दिन आंख खुली, तो दोपहर हो चुकी थी। आठवें बड़े बाबा ने नाव से की गई ईंधन और नमक की चोरी की कोई चर्चा नहीं की। दोपहर बाद हम लोग रोज़ की तरह झींगे पकड़ने चले गए।

"ओ, श्वाङ-शी के बच्चे! तुम बदमाशों ने कल मेरे खेत में चोरी की थी। तुम्हें फलियां तोड़ना भी नहीं आता। बेलें भी रौंद आए हो।" बुजुर्ग ल्यू ई नदी में अपनी डोंगी में से पुकार रहा था। ल्यू ई बीन बेचकर लौटा था। डोंगी में बाजार से बची हुई फलियां रखी थीं।

"दद्दा, क्या हुआ, गांव के मेहमान को ही तो खिलाईं। वास्तव में पहले

तुम्हारी फलियां तोड़ने का हमारा रत्ती-भर भी इरादा नहीं था।" श्वाङ-शी ने कहा, "देखो तुमने डराकर मेरा झींगा ही भगा दिया।"

बुजुर्ग ल्यू ई की नज़र मुझ पर पड़ी, तो डोंगी रोककर हंस पड़ा, "मेहमान को खिलाया? मेहमान को तो खिलाना ही चाहिए था।" फिर मुझसे बोला, "भैया, आपेरा अच्छा रहा?"

"हां" मैंने सिर हिलाया।

"बीन मीठा लगा?"

"हां, बहुत।" मैंने फिर सिर हिलाया।

मैं देखकर हैरान था कि बूढ़ा खुश हो गया। हाथ नचाकर गर्व से बोला, "शहरों के पढ़े-लिखे बड़े लोग ही बढ़िया चीज की क़द्र जानते हैं। मैं तो बीज के लिए दाना-दाना चुनता हूं। गांव के लोग मेरे बीन की क़द्र क्या जानें? आज तुम्हारी मां को भी खिलाऊंगा।" बुजुर्ग अपनी डोंगी खेता हुआ चला गया।

मां ने मुझे खाने के लिए पुकारा। तो बड़े कटोरे में 'लोहान बीन' भरा था। इसे बुजुर्ग ल्यू ई हम लोगों के लिए दे गया था। मां के सामने मेरी बहुत सराहना भी कर गया था, "अभी लड़के की उम्र ही क्या है, पर अच्छे-बुरे की परख खूब है। विद्वान अफसर बनेगा, बहुत उन्नति करेगा। तुम्हारे तो भाग्य खुल गए।" बीन खाया, परन्तु उसमें पिछली रात वाले बीन का मज़ा कहां था!

सच पूछो तो इतनी उम्र हो गई, पर बीन में उस रात का सा मज़ा कभी नहीं आया और उस रात जैसा आपेरा भी फिर कभी नहीं देखा।

नए साल की बलि

पुराने पंचांग[1] के अनुसार नए साल की पूर्वसंध्या वास्तव में नए साल की पूर्वसंध्या के आगमन का अहसास के लिए रहती है। नगर-गांव में उत्सव के उत्साह की बात जाने दीजिए, वातावरण में भी एक उमंग-सी आ जाती है। नया साल आरम्भ होने वाला है। शाम के मटमैले, उदास, कोहरे के बोझ से झुके बादलों में जगह-जगह बिजलियां-सी कौंधने लगती हैं। पटाखों की आवाज़ों से अग्निदेव की विदाई का त्यौहार आरम्भ हो जाता है। बहुत पास छोड़े जाने वाले पटाखों की आवाज़ों से लगता है कान के पर्दे ही फट जाएंगे। गड़गड़ाहट खत्म होते-होते हवा में बारूद की गंध भर जाती है। ऐसे ही त्यौहार की रात मैं अपने जन्म-स्थान लूचन लौटा था। लूचन में मेरा पुराना घर अवश्य था, परन्तु बरसों से उस स्थान से संबंध टूट चुका था। मेरा अब वहां कुछ भी नहीं रह गया था। कुछ ही समय के लिए गया था। अपने संबंधी लू साहब के यहां ठहर गया। लू और हमारे लक्कड़ दादा एक ही थे। वे मेरे पिता की पीढ़ी के थे। रिश्ते से चौथे स्थान पर मेरे चाचा लगते थे। वे शाही महाविद्यालय[2] के पुराने छात्र और नव-कनफ़्यूशियसवाद के पण्डित थे। चाचा में कोई खास बदलाव नहीं आया था। थोड़ा बुजुर्ग-से तो लगते थे, परन्तु मूंछ अब भी नहीं उगी थी। मुलाक़ात हुई तो शिष्टाचार और अभिवादन के बाद कहने लगे कि मैं पहले के मुक़ाबले मोटा हो गया हूं और ऐसा कहते ही फ़ौरन क्रान्तिकारियों पर अपना क्रोध प्रकट करने लगे।

जानता था कि उनका क्रोध मुझ पर नहीं, बल्कि खाङ यओ-वेइ[3] पर

1. चीन का परम्परागत चन्द्र-पंचांग।
2. छिङ राजवंश का सर्वोच्च शिक्षा-प्रतिष्ठान।
3. खाङ यओ-वेइ (1858-1927) एक प्रसिद्ध सुधारवादी था, जिसने वैधानिक राजतंत्र का पक्षपोषण किया।

था। ख़ैर, इस दशा में बातचीत क्या होती। कुछ ही क्षणों में वे चले गए और मैं स्टडीरूम में अकेला रह गया।

दूसरे दिन काफ़ी देर से नींद टूटी। दोपहर में खा-पीकर पुराने दोस्तों और रिश्तेदारों से मिलने चला गया। अगला दिन भी ऐसे ही गुज़रा। उन लोगों में कोई ख़ास बदलाव मालूम नहीं दे रहा था। बस, उम्र में ज़रा बढ़ गए थे। सभी परिवारों में बेचैनी दिखाई दी, नए साल की बलि की तैयारियां हो रही थीं। लूचन में गुज़रे साल को बड़ी धूमधाम से विदाई दी जाती है। लोग बहुत श्रद्धा और उत्साह से नए साल के आरम्भ में भाग्य के देवता का स्वागत करके नए साल में सुख और सौभाग्य के लिए प्रार्थना करते हैं। मुर्ग़ियां और हंस काटे जाते हैं। शूअर का मांस ख़रीदा जाता है। फिर इन्हें पानी में बड़ी सावधानी से धोया जाता है। सर्दी में पानी के स्पर्श से स्त्रियों के हाथ लाल हो जाते हैं। कुछ स्त्रियों की कलाइयों पर अब भी चांदी के कंगन दिखाई देते हैं। मांस को पकाकर उसमें तीन-चार जगह चापस्टिकें खोंस दी जाती हैं। इसे पूजा का भोग कहा जाता है। भोग सवेरे अंधेरे मुंह ही धूप और दीप से लगाया जाता है और बड़ी श्रद्धा से भाग्य के देवता से भोग स्वीकार करने की प्रार्थना की जाती है। पूजा का भोग केवल पुरुष ही लगा सकते हैं। पूजा से पहले पटाखे और गोले छोड़े जाते हैं और पूजा के बाद भी कुछ देर तक धूम-धड़ाका चलता रहता है। सभी परिवार हर साल इसी तरह पूजा करते हैं। लोग अपनी औकात-बिसात के अनुसार भोग लगाते हैं और पटाखों से त्यौहार मनाते हैं। जैसे हमेशा से होता आया था, वैसे ही उस साल भी हो रहा था।

उस दिन सुबह ही बादल चढ़ आए, दोपहर में बर्फ़ भी गिरने लगी। ख़ूब बर्फ़ गिर रही थी। बर्फ़ आलूचे के फूलों की पंखुड़ियों की तरह आकाश में से थिरकती चली आ रही थी। पटाखों का धुआं और कोलाहल ऊपर उठ रहा था, इससे लूचन में अजीब समा बंध गया था। मैं चाचा के यहां लौटा, तो घर की छत बर्फ़ से ढककर श्वेत हो चुकी थी। चारों तरफ़ के उजाले से कमरे के भीतर भी प्रकाश बढ़ गया था। दीवार पर लटकी लाल रंग की तस्वीर पर ताओपंथी संत छन त्वान[1] द्वारा लिखा हुआ 'चिरायु' शब्द

1. दसवीं शताब्दी के आरम्भ-काल का एक संत।

खूब बड़ा और उजला दिखाई दे रहा था। सुभाषित से अंकित दो लंबी कुंडलीनुमा पट्टियां दीवार पर लटकी हुई थीं। एक कुंडलीनुमा पट्टी दीवार से मेज़ पर गिरकर ढीली-ढीली लिपट गई थी। लटकी हुई पट्टी पर लिखा था, "विवेकशीलता से मन को शान्ति प्राप्त होती है।" करने को कुछ था नहीं। खिड़की के समीप पड़ी मेज़ पर रखी पुस्तकों को उलट-पलट कर देखने लगा। खाङ शी के शब्दकोश[1] के कई खंड थे। "'चू शी के दार्शनिक लेखों पर' च्याङ युङ की टीका" की भी एक जिल्द थी और एक प्रति "चार ग्रन्थों की टीका"[2] की भी थी। जो भी हो मैंने तय कर लिया कि कल लौट जाऊंगा।

पहले दिन श्याङ लिन की पत्नी मिल गई थी। उससे मिलकर मन को बड़ी ठेस लगी। दोपहर बाद नगर के पूर्वी मोहल्ले में एक दोस्त के यहां गया था। लौट रहा था, तो नदी के किनारे श्याङ लिन की पत्नी से सामना हो गया। उसकी निगाहें मुझ पर ऐसे टिक गईं कि साफ़ था कि कुछ कहना चाहती थी। लूचन में सबसे अधिक बदली हुई वही दिखाई दी। पांच साल पहले उसके सिर में कहीं कोई इक्का-दुक्का बाल सफेद होने लगा होगा। उसने अभी चालीस साल ही पार किए थे कि अब पूरा सिर रुई की तरह बिल्कुल सफेद हो गया था। चेहरा पीला पड़ कर बिल्कुल झुर्रीदार हो गया था। पहले भी उसके चेहरे पर उदासी-सी छाई रहती थी, पर अब वह बिल्कुल भावशून्य, काठ की मूर्ति जैसी लग रही थी। आंखों में कभी-कभी पुतलियां नाच जाती थीं। जीवन का यही चिह्न शेष था। बुढ़िया हाथ में सींखों की बुनी छोटी-सी टोकरी लिए थी। टोकरी में टूटा-सा ख़ाली कटोरा था। दूसरे हाथ में बांस की सिर से ऊंची छड़ी लिए थी। छड़ी का ऊपरी सिरा फटा हुआ था। साफ़ था कि वह भीख मांगने लगी है।

उसे देखा, तो मैं ख़ामोश खड़ा रह गया। सोचा पास आकर शायद कुछ मांगे।

"तुम लौट आए?" पास आकर उसने पूछ लिया।

"हां।"

1. एक चीनी शब्दकोश, जिसे सम्राट खाङ शी (1662-1722) ने तैयार कराया था।
2. कनफ्यूशियसवादी प्राचीन ग्रंथ।

"बहुत अच्छा किया। तुम पढ़े-लिखे हो, देश-विदेश घूमे-फिरे हो, दुनिया देखी है। एक बात पूछूं।" उसकी बुझी हुई आंखें चमक उठीं।

वह इस तरह बात करेगी, ऐसी आशा नहीं थी। इसलिए आश्चर्य से खड़ा रहा।

"यह बताओ," वह दो क़दम पास आई और आवाज़ धीमी कर रहस्य-भरे स्वर में फुसफुसाकर बोली, "आदमी मर जाता है, तो क्या सचमुच प्रेत बन जाता है?"

मैं क्या उत्तर देता? वह मेरी तरफ़ टकटकी लगाए थी। जिस्म में सिहरन दौड़ गई, रोमांच हो आया, जैसे परीक्षक से कोई अनचाहा, बहुत कठिन सवाल पूछ ले और सामने खड़ा होकर तुरन्त उत्तर मांगे। मृत्यु के बाद जीव के प्रेत बन जाने के बारे में मैंने कभी विचार नहीं किया था। बहुत संकट में था, क्या जवाब देता? कुछ पल अवाक् सोचता रहा। गांव में लोग मृत्यु के बाद आत्मा के प्रेत बन जाने में विश्वास करते हैं। लगता है, उसके मन में किसी कारण कुछ संदेह हो गया हो। उसे क्या जवाब दूं? जवाब ऐसा ही ठीक होगा जिससे उसे कुछ तसल्ली मिले। अंदाज़ा लगाया कि यही चाहती होगी कि मृत्यु के बाद भी उसकी आत्मा बनी रहे या हो सकता है कि इसी चिन्ता से डर रही हो? शायद उसे शंका हो कि उसका वजूद मिट जाएगा। दुखिया को और दुख देने से क्या लाभ? उसे कुछ आशा और तसल्ली मिले यही अच्छा है। यही कहना उचित है कि आत्मा नहीं मरती।

"ख्याल तो है आत्मा रहती है।" मैंने झिझकते हुए सिर हिलाया।

"तो फिर नर्क भी अवश्य होता होगा?" उसने पूछा।

"कैसा नर्क?" उसके प्रश्न से मैं घबरा गया। टालने के लिए बोला, "तर्क के अनुसार तो नर्क होता है, इसे पर कौन जाने! ख़ैर, इन बातों में क्या रखा है?"

"मरने के बाद परिवार के सब लोग फिर से आपस में मिलते होंगे?"

"कौन जाने मृत्यु के बाद कौन किससे मिलता है!" कुछ समझ नहीं पा रहा था कि उसे क्या जवाब दूं। सोचने की शक्ति कुछ काम नहीं कर रही थी। इन सवालों का क्या जवाब दूं? बात संभाल ही नहीं पाया। मन में आया, सीधी तरह कह दूं, "असल में मुझे खुद कुछ पता नहीं। मृत्यु के पश्चात जीवों के प्रेत बनने की बात पर मेरा विश्वास नहीं है।"

वह न जाने और क्या पूछ बैठे, इस भय से तेज़ चाल से चाचा के घर की तरफ़ चल पड़ा। उसके सवाल से मन में बड़ी बेचैनी थी। सोच रहा था, मेरी बात से बेचारी और अधिक दुखी तथा निराश हो गई होगी। कौन सी चिन्ता उसे बेचैन कर रही है? दूसरे लोग त्यौहार मनाने में व्यस्त हैं, इस बेचारी के लिए कुछ नहीं है। शायद इसीलिए इसका मन भटक रहा है। दूसरा कारण क्या हो सकता है? या इसके मन में कोई डर बस गया है? जाने क्या बात है? यदि मेरी बात से निराश होकर वह कुछ कर बैठी, तो यह मेरे ही जवाब के कारण होगा। कुछ समय बाद मुझे अपनी इस चिन्ता पर खुद हंसी आने लगी। इतनी छोटी-सी बात सोच-सोचकर मैं कितना परेशान हो गया हूं। तभी तो कई शिक्षा-शास्त्री मुझे स्नायु-रोग का बीमार बताते हैं। साथ ही मैंने उसे साफ़ कह दिया था कि कौन जाने। पहले जो बात कही थी, उसे बाद में काट भी दिया था। अब अगर कुछ हो जाए तो मुझे उससे क्या लेना?

"कौन जाने!" यह एक बहुत उपयोगी वाक्य का टुकड़ा है।

अल्हड़ साहसी युवक प्रायः दूसरों के झमेले अपने सिर पर लेने के लिए उतावले रहते हैं और झमेला दूर करने का उपाय बता देते हैं। यदि दुर्भाग्य से कुछ गड़बड़ हो जाए, अनहोनी हो जाए, तो शायद कलंक उनके ही सिर मढ़ दिया जाएगा, पर अपनी बात को 'कौन जाने' इस वाक्य के टुकड़े से समाप्त कर दें, तो आप हर तरह की जवाबदेही से छुटकारा पा सकेंगे। उस समय यह शब्द-पंक्ति मुझे और अधिक उपयोगी लगी। उस भिखारिन को भी इससे उचित कोई दूसरा जवाब नहीं दिया जा सकता था।

भिखारिन की वह बात मन में खटकती रही। रात बीतने पर भी उलझन और बेचैनी मन में बनी रही, मन पर शंका का बोझ हो गया था। बर्फ़ लगातार गिरती रहने के कारण मौसम भी उदास हो गया। मेरे कमरे में सूनापन भर गया। मन की बेचैनी बढ़ती ही जा रही थी। सोचा कि यहां रहने से क्या लाभ। कल प्रातः ही लौट चलूंगा। फ़ू-शिङ रेस्तरां में पहले शार्क मछली के पंख की बड़ी प्लेट एक डालर में मिल जाती थी। सस्ती और अच्छी थी। मालूम नहीं अब इसका दाम बढ़ गया है या नहीं। पुराने दोस्त, जिनके साथ फ़ू-शिङ रेस्तरां में जाया करता था, यहां-वहां जा चुके थे, परन्तु

शार्क मछली के पंख खाने के लिए तो जा ही सकता था। दूसरे दिन सुबह लौट जाने का निश्चय कर ही चुका था।

कई बार अनुभव हो चुका था कि जिसकी आशंका हो, जिससे बचने की चिन्ता हो, वह बात ज़रूर होकर रहती है। मन में डर भर गया था कि इस बार भी कुछ-न-कुछ बुरा होकर रहेगा। सचमुच अजीब-सी बातें हो रही थीं, आसार अच्छे नहीं थे। शाम के समय घर के भीतर से बातचीत के स्वर सुनाई देने लगे, जैसे कोई बहस हो रही हो। कुछ समय बाद बातचीत रुक गई। फिर सुनाई पड़ा कि चाचा घर से बाहर जाते हुए कह रहे हैं, "आगे न पीछे, यह इसी समय होना था क्या? कुलच्छनी ही तो है···!"

सुनकर चकित रह गया, बहुत बुरा लगा। सोचा कि क्या मेरे बारे में बात हो रही है? दरवाज़े से बाहर झांका, पर वहां कोई नहीं था। बड़ी कठिनाई से अपने आपको बस में किए हुए था कि नौकर शाम के भोजन से पहले चाय लेकर आ गया। मौक़ा पाकर उससे बात की।

"लू साहब अभी किस पर बिगड़ रहे थे?" मैंने पूछा।

"वही श्याङ लिन की पत्नी।" नौकर ने छोटा-सा उत्तर दिया।

"श्याङ लिन की पत्नी? क्या हुआ उसे?" मैंने फिर पूछा।

"मर गई।"

"मर गई?" लगा, मेरा दम घुट जाएगा। दिल की धड़कन बढ़ गई। शायद चेहरे पर पसीना भी आ गया था। नौकर सिर झुकाए हुए चाय बना रहा था, उसका ध्यान मेरी तरफ़ नहीं था। किसी तरह अपने आपको सम्भालकर पूछा, "मरी कब?"

"कब? कल रात या आज, कौन जाने!"

"मर कैसे गई?"

"कैसे मर गई? भूख से, और क्या!" नौकर ने निर्विकार भाव से उत्तर दिया और मेरी तरफ़ दृष्टि उठाए बिना कमरे से चला गया।

कुछ देर बाद मेरी बेचैनी खत्म हो गई। शंका तो थी ही, अतः घटना भी घट गई थी। अब 'कौन जाने' कहकर ज़िम्मेदारी टालने की चिन्ता का कुछ मतलब नहीं था, या नौकर के अनुसार उसके भूख से मर जाने की बात से ज़िम्मेदारी से बचने का आश्वासन पा लेने की भी आवश्यकता नहीं थी। उधर से मन हलका हो गया था। उस अप्रिय अहसास की लकीर बच गई

थी, जो समय-समय पर मेरे मन को कचोटती रहती थी। शाम का भोजन मेज़ पर लगा दिया गया। चाचा भी साथ बैठे। मन में आया, श्याङ लिन की पत्नी की बात पूछूं। जानता था कि चाचा ने पढ़ा होगा, "प्रेत प्राकृतिक तत्व मात्र हैं।"[1] फिर भी पुराने अंधविश्वासों में उनकी आस्था थी। नए साल की पूजा की तैयारी के समय मौत या बीमारी की चर्चा कैसे की जा सकती थी! अगर अनिवार्य तौर पर अवसर आ ही जाए, तो ऐसी बात केवल व्यंजना या संकेत में ही कही जानी चाहिए। दुर्भाग्य से मैं इस तरह के व्यवहार में अनाड़ी हूं। इसलिए होठों पर बार-बार आने पर भी बात को दबा लेना पड़ा। चाचा का चेहरा इतना गम्भीर था कि मुझे शक होने लगा, कहीं वह गम्भीर वाक्य, "आगे न पीछे यह इसी समय···" मेरे ही लिए तो नहीं था? मैं ऐसे समय उन्हें परेशान करने के लिए यहां आ गया हूं, इसलिए मैं भी कुलच्छन ही हूं। अपने बारे में चाचा के मन से चिन्ता दूर करने के लिए मैंने कह दिया, "सुबह लूचन से जाना चाहता हूं। मुझे शीघ्र लौटना है।" चाचा ने मुझे रोकने का बहुत अधिक आग्रह नहीं किया। हम चुपचाप खाना खाते रहे।

सर्दी के दिन यूं भी छोटे होते हैं। तब बर्फ़ भी पड़ रही थी। अतः सारे क़स्बे पर जल्दी ही अंधेरा छा गया। घर में रोशनियां जल गईं। सभी लोग किसी-न-किसी काम में लगे थे, परन्तु घर के बाहर अंधेरा और सन्नाटा था। ढेरों बर्फ़ गिर चुकी थी और लगातार गिरती जा रही थी। उससे सन्नाटा और सूनापन अधिक भी गहरा हो रहा था। मैं तेल के दीये के पीले, मद्धिम प्रकाश में अकेला बैठा था। ख्याल आ रहा था, "इस ग़रीब औरत को सब ने ठुकरा दिया था, जैसे टूटे बेकार हो गए खिलौने से मन ऊबने लगता है, तो उसे धूल में फेंक दिया जाता है। कभी धरती की धूल में उसका भी कोई निशान और स्थान था। जो लोग सुख से जी रहे हैं, उन्हें कितना आश्चर्य हुआ होगा कि यह और भी अपना अस्तित्व बनाए रखना चाहती है। जो भी हो, अब अनंत ने उसके वजूद को सिकोड़कर उसका निशान भी मिटा दिया है। कौन जाने प्रेत-आत्माओं का अस्तित्व है या नहीं, पर ऐसे निरर्थक लोग, जिनके अस्तित्व से दूसरे लोग झुंझला जाते हैं, जब इस संसार से मिट

1. एक कनफ्युशियसवादी उक्ति।

जाते हैं, तो उनका या बाक़ी बचे दूसरे लोगों का ही क्या बिगड़ जाता है?" इसी ख्याल में खोया ख़ामोश बैठा सोचने लगा कि बाहर गिरती बर्फ़ की आहट सुन सकता हूं या नहीं और बहुत ध्यान से उस तरफ़ कान लगाए रहा। धीरे-धीरे मन की बेचैनी मिटने लगी थी।

श्याङ लिन की पत्नी के बारे में जो कुछ देखा था या लोगों से सुना था सब एक साथ सामने आने लगा। श्याङ लिन की पत्नी लूचन की नहीं थी। बहुत साल पहले जाड़े के शुरू में चाचा अपनी नौकरानी बदलना चाहते थे। तब वेइ की बुढ़िया उसे लेकर आई थी। श्याङ लिन की पत्नी सिर पर सफ़ेद फीता बांधे थी, काला लहंगा, नीली जाकिट और हल्का हरा ब्लाउज़ पहने थी। तब उसकी उम्र लगभग छब्बीस की रही होगी। चेहरे का रंग पीला था, पर गालों पर सुर्खी थी। वेइ की बुढ़िया उसे 'श्याङ लिन की पत्नी' के नाम से ही पुकारती। बुढ़िया ने बताया कि श्याङ लिन की पत्नी उसके मायके की पड़ोसिन है। उसका पति मर चुका था, अतः वह चाहती थी कि दूसरों के यहां नौकरी करके गुज़ारा करे। मेरे चाचा ने सुना, तो उनके माथे पर बल पड़ गए। चाची समझ गईं कि चाचा बेवा को नहीं रखना चाहते, पर चाची की नज़र श्याङ लिन की पत्नी के मज़बूत-चुस्त हाथ-पैरों की तरफ़ थी। उसके चेहरे पर नम्रता-भरा मौन था। देखने में मेहनती और शान्त स्वभाव वाली लग रही थी। चाची ने चाचा की त्यौरियों की परवाह किए बिना उसे रख लिया। काम-काज में कैसी है यह परखने के दौरान श्याङ लिन की पत्नी दिन-रात काम में लगी रहती, जैसे आराम से उसका मन घबराता हो। उसके शरीर में पूरे आदमी की शक्ति थी। तीसरे-चौथे दिन चाची ने उसका वेतन तय कर दिया—हर महीने तांबे के पांच सौ सिक्के।

उसे सब लोग श्याङ लिन की पत्नी के नाम से ही पुकारने लगे। किसी ने उसका नाम नहीं पूछा। वेइ की बुढ़िया उसे लेकर आई थी और बता गई थी कि वह उन्हीं के मायके के पड़ोस की थी। अतः अनुमान हो गया कि उसका कुलनाम भी वेइ ही होगा। वह स्वभाव से चुप रहती थी। कोई पूछता तभी बोलती। तब भी दो-चार शब्द से ज़्यादा नहीं। दस-बारह दिन बाद पता चला कि घर में उसकी लड़ाकू सास और दस वर्ष का एक देवर भी है। देवर लकड़हारा था, पति की पिछले वसंत में मौत हो गई थी। वह भी लकड़हारा

था। उम्र में पत्नी से दस साल छोटा था।[1] अधिक उसने कुछ नहीं बताया।

समय तेजी से बीतता गया। श्याङ लिन की पत्नी पहले की तरह सख़्त मेहनत करती जा रही थी। बासी-खासी जो कुछ मिल जाता खा लेती, पर काम में कोई कसर नहीं छोड़ती थी। लोग कहते थे कि लू साहब की नौकरानी किसी अच्छे मेहनती युवा मर्द से कम नहीं है। पुराने साल की विदाई की पूजा के समय उसने घर की झाड़-पोंछ की, मुर्गियां और हंस काटे, भोग का मांस पकाने के लिए चढ़ा दिया। सारे कामों के लिए वह अकेली ही बहुत थी। चाची को कोई दूसरा आदमी नहीं लगाना पड़ता। नौकरानी भी संतुष्ट और प्रसन्न थी। उसके होंठों पर हलकी-हलकी मुस्कराहट टपकने लगी थी, गाल भर आए थे और रंग भी साफ़ हो गया था।

नए साल की पूजा का काम पूरा हुआ ही था। एक दिन नौकरानी चावल धोने डलिया लेकर नदी के किनारे गई। लौटी तो उसका चेहरा उतरा हुआ था। बोली कि उसे नदी के उस पार एक आदमी घूमता दिखाई दिया। आदमी उसके पति के चचेरे भाई जैसा लग रहा था। वह डरी हुई थी, "कहीं मुझे लेने तो नहीं आया हो।" चाची भी घबरा गईं। उन्होंने इधर-उधर काफ़ी खोज करवाई, पर कुछ पता नहीं चला। चाचा ने सुना, तो उनके माथे पर बल पड़ गए, बोले, "मामला गड़बड़ है, यह ससुराल से भागकर आई होगी।" जल्दी ही बात खुल गई कि वह सचमुच ससुराल से भागकर आई थी।

एक पखवाड़ा बीत गया, लोग उस घटना को भूल गए। वेइ की वुढ़िया एक दिन अचानक आ पहुंची। उसके साथ पैंतीस-चालीस साल की दूसरी औरत थी। बुढ़िया ने बताया कि यह नौकरानी की सास है। सास रूप-रंग से गांव की ही लगती थी, पर बातचीत बड़े विश्वास से कर रही थी। उसकी ज़बान कैंची की तरह चलती थी। उसने बड़े शिष्टाचार से बात की। कष्ट के लिए क्षमा मांगी। बताया कि अपनी बहू को ले जाने आई है। अपनी मुश्किल बताते हुए बहुत खेद प्रकट किया कि वसन्त के शुरू

1. पुराने चीन के देहातों में दस-बारह साल के लड़के के लिए तगड़ी जवान पत्नी ले आना एक आम बात थी। जवान पत्नी की श्रमशक्ति को पति के घरवाले कामकाज के लिए इस्तेमाल कर सकते थे।

में खेती का काम बहुत है। घर में बुढ़िया-बच्चे के अलावा कोई नहीं, किस पर भरोसा करे।

चाचा बोले, "सास बुलाने आई है, तो हम कैसे रोक सकते हैं!"

नौकरानी का हिसाब कर दिया। उसने अपना पूरा वेतन चाची के पास जमा रहने दिया था, कभी एक पैसा भी नहीं लिया था। हिसाब से एक हज़ार सात सौ पचास तांबे के सिक्के बनते थे। चाची ने सारा पैसा बहू की सास के हाथ में दे दिया। दोपहर हो गई थी। सास ने साहब और चाची को कष्ट देने के लिए फिर क्षमा मांगी और धन्यवाद देकर चली गई। बहू के कपड़े भी साथ ले गई।

"चावल का क्या हुआ? श्याङ लिन की पत्नी क्या चावल धोने नहीं गई थी?" चाची पुकार बैठीं। उन्हें भूख लगी थी, इसलिए चावल याद आ रहा था।

चावल की टोकरी की खोज होने लगी। चाची रसोई में देखने गईं। एक कमरे में देखा, दूसरे में ढूंढा, पर चावल की टोकरी कहीं दिखाई नहीं दी। चाचा ने आंगन में और घर के आसपास नज़र डाली। वहां भी कुछ नहीं था। वे खोजते हुए नदी की तरफ़ चले गए। देखा कि नदी के किनारे चावल की टोकरी ठीक-ठाक रखी हुई थी। टोकरी के साथ कुछ तरकारी भी पड़ी हुई थी।

चाचा ने आसपास पूछताछ की। लोगों ने बताया कि नदी में प्रातः से सफ़ेद पाल वाली एक नाव खड़ी थी। कौन जाने पाल के पीछे कौन था! किसी ने उधर ख़ास ध्यान भी नहीं दिया था। जब श्याङ लिन की पत्नी चावल धोने आई थी और चावल की टोकरी उसने नदी के किनारे रखी ही थी कि नाव से दो ग्रामीण कूद कर आए और उसे उठाकर नाव में ले गए। बहू ने दो-तीन बार चिल्लाकर पुकारा, फिर उसकी पुकार सुनाई नहीं दी। उसका मुंह दबा दिया होगा या कुछ और कर दिया होगा। उसके बाद नाव से दो औरतें उतरीं। उनमें एक अजनबी थी, मगर दूसरी वेइ की बुढ़िया ही थी। लोगों ने नाव में झांककर देखा, तो साफ़ कुछ दिखाई नहीं दिया। शक होता था कि उन्होंने बहू को बांध-बूंध कर नाव में कहीं डाल दिया होगा।

"कितनी घिनौनी बात है, खैर!" चाचा चुप रह गए।

उस दोपहर चाची ने खुद रसोई बनाई। चचेरे भाई आ न्यू ने चूल्हा सुलगाया।

दोपहर का भोजन हो चुका था। तभी वेइ की बुढ़िया आ पहुंची।

"कितनी घिनौनी बात है!" चाचा बोले।

चाची रसोई में वर्तन मांज रही थीं। बर्तनों में उलझी हुई गर्ज पड़ीं, "बड़ी दिल्लगी की तूने। अब क्या करने आई है? तू खुद ही उसे रखवाकर गई थी और फिर बेचारी को इस तरह से अगवा दिया। खूब बखेड़ा कर दिया तूने। लोग क्या कहेंगे? हमारी भी हंसी उड़वाएगी क्या?"

"हाय री मां, मैं ग़रीब खुद किस झगड़े में फंस गई! मालकिन, मैं आपको पूरी बात बताने आई हूं। वह आकर मुझसे कहने लगी, कहीं काम दिला दो, लेकिन मुझे क्या मालूम था कि सास से बिना पूछे भागकर चली आई है। श्रीमान, गरीब को क्षमा दे दो। मैं मूर्ख ठहरी, इन बातों को क्या समझ। मुझे क्षमा मिले, मुझसे भूल हुई, मुझे आपकी ही दया का भरोसा है। मालिक तो सदा ग़रीबों पर दया करते हैं। मैं ढूंढकर श्रीमान के लिए ऐसी अच्छी नौकरानी लाऊंगी कि मालकिन खुश हो जाएं।"

"खैर···" चाचा चुप हो गए। श्याङ लिन की पत्नी का मामला ख़त्म हो गया। कुछ दिनों में लोग इसे भूल भी गए।

श्याङ लिन की पत्नी को सब तो भूल गए, पर चाची नहीं भूलीं। भूलतीं भी कैसे? फिर उन्हें कोई ढंग की नौकरानी मिली ही नहीं। जो आती, कामचोर होती या रसोई की या दूसरी चीजों की चोरी करती, या कामचोर भी होती और चोर भी। चाची नौकरानियों से तंग आ जातीं, तो श्याङ लिन की पत्नी को याद करने लगतीं, "न जाने वह गरीब कहां होगी!" साफ़ था कि वह लौट आती, तो चाची उसे रख लेतीं, परन्तु साल भर बाद, नए साल की पूजा आते-आते उन्हें उसके लौटने की आस नहीं रही।

नए वर्ष की पूजा बीत चुकी थी। वेइ की बुढ़िया एक दिन डगमगाती चाची को पूजा का अभिवादन करने आई। क्षमा मांगकर बोली कि वह अपने मायके गई थी। वहां कई दिन लग गए, इसलिए पहले नहीं आ सकी। बातचीत में श्याङ लिन की पत्नी की चर्चा भी होने लगी।

"मालकिन, वह बड़े मजे में है," वेइ की बुढ़िया ने चहककर कहा। "उसकी सास जब उसे यहां से ले गई, तो पहले ही हो परिवार वालों के यहां बात तय कर आई थी। हो गांव में हो परिवार के छठे लड़के से उसकी सगाई तय हो गई। बहू को यहां से ले गई, तो उसे तुरन्त डोली में डाल चलता कर दिया।"

"है, भगवान् ऐसी, सास भी क्या?" चाची ने आश्चर्य प्रकट किया।

"अरे, मालकिन, आप बड़े लोग हैं। इसलिए वैसी ही बातें करती हैं। इसमें क्या है? हम ग़रीब गांव की औरतों का क्या है? हमारे यहां तो सब ऐसे ही चलता है। सास भी बेचारी क्या करती? उसे अपने छोटे लड़के का भी तो ब्याह करना था। उसे घर में ही रोके रखती, तो लड़के के ब्याह के लिए पैसा कहां से लाती, पर उसकी सास है बड़ी चालाक। जाने कैसे यह सौदा कर लिया। उसे दूर पहाड़ में ब्याह दिया। आसपास के किसी गांव में ब्याहती तो इतना पैसा कहां मिलता? पहाड़ जाने के लिए कोई औरत तैयार नहीं होती, इसलिए वहां अस्सी हज़ार तांबे के सिक्के मिल गए। छोटे लड़के के लिए लड़की पचास हज़ार में मिली, बीस हज़ार बारात और भोजन में लग गया, दस हजार फिर भी बच गया। देखा मालकिन, कैसी चालाक औरत है!"

"श्याङ लिन की पत्नी तैयार थी?" चाची ने पूछा।

"मालकिन, औरत की हां-ना कौन पूछता है। हरेक विरोध ज़रूर करती है। उसके हाथ-पैर बांध दिए और डोली में ले गए। हाथ-पैर बांधे ही दुल्हन का सेहरा सिर पर बांध कर ब्याह की रस्म पूरी कर ली। दोनों को कोठरी में बन्द कर दिया। बस, काम पूरा हो गया, पर मालकिन, वह भी बड़ी अड़ियल थी। सुना है कि बहुत लड़ी, मानी नहीं। लोग कह रहे थे कि बड़े लोगों के यहां रह आई है, इसीलिए इसमें इतना घमंड आ गया है। मालकिन हमारी इतनी उम्र हो गई, दुनिया को बहुत देखा है। जानती हूं बेवाओं का ब्याह होता है, तो चिल्लाती हैं, कोई तो जहर खा लेने को तैयार हो जाती है। डोली में डालकर मर्द के यहां पहुंचा दो, तो भी कोई अड़ जाती हैं कि ब्याह की रस्म नहीं करेंगी। कोई ब्याह की रस्म के जलाए धूप और दीप पटक देती हैं, लेकिन मालकिन, श्याङ लिन की पत्नी की तो पूछो मत! उसे डोली में डालकर ले गए, तो रास्ते भर चीखती रही। ससुराल पहुंची,

तो गला बैठ गया था। मुंह से बोल नहीं निकल रहा था। डोली से खींचकर निकाला। दो कहार वाले और उसका जवान देवर तीन जवान उसे पकड़े हुए थे, मगर वह विरोध करती रही। ज़रा ढील पाई तो, बुद्ध भगवान रक्षा करें, जाकर मेज़ के कोने से सिर टकरा दिया, सिर फोड़ लिया। इतना ख़ून बहा कि दो मुट्ठी धूप की राख डालकर दो लाल अंगोछे लपेट दिए, तो भी खून बहता रहा। अन्त में बहुत से लोगों ने मिलकर उसे दूल्हा के साथ कोठरी में बन्द कर दिया। वहां भी चीखती रही। हे भगवान, कैसी औरत है!" बुढ़िया ने सिर हिलाते हुए कहा और गर्दन झुकाकर चुप हो गई।

"फिर क्या हुआ?" चाची ने पूछा।

"कहते हैं, दूसरे दिन पलंग पर ही पड़ी रही।" बुढ़िया ने सिर उठाकर जवाब दिया।

"फिर क्या हुआ?"

"फिर? काम में लग गई। साल-भर में बच्चा हो गया। लड़का है। इस बार नए साल के अवसर पर दो साल का हो गया।[1] अभी मैं मायके से गई थी, तो कुछ लोग पहाड़ से हो परिवार के गांव लौटे थे। वे बता रहे थे, अच्छी-ख़ासी है, लड़का भी खूब तगड़ा है। अब उसके ऊपर सास थोड़े ही है। ख़ूब तगड़ा कमानेवाला मर्द है, घर अपना है। उसके तो भाग खुल गए।"

इस घटना के बाद चाची ने भी फिर श्याङ लिन की पत्नी की चर्चा नहीं की।

२

श्याङ लिन की पत्नी की सुख-समृद्धि का समाचार मिले दो साल बीत गए थे। सर्दी में एक दिन अचानक वह चाचा के द्वार पर आ पहुंची। एक छोटी-सी गोल टोकरी लिए और बग़ल में कपड़ों की गठरी थी। सिर पर अब भी सफ़ेद फ़ीता बंधा था, वही काला लहंगा, नीली जाकिट, हलका हरा ब्लाउज़। चेहरे पर स्याही पुत गई थी। गालों की सुर्खी ग़ायब थी। पलकों पर आंसू सूखे थे, आंखें बुझी हुई थीं। वेइ की बुढ़िया अब भी

1. चीन में बच्चे की उम्र निश्चित करने के लिए उसके जन्म ही से उसे एक साल का माना जाता है और नए साल के दिन उसकी उम्र में एक और साल जोड़ दिया जाता है।

उसके साथ थी। वही उसे लाई थी। बुढ़िया के चेहरे पर सहानुभूति और चिन्ता का भाव था। बड़ी लम्बी कहानी के बाद बुढ़िया ने चाची को बताया, "बेचारी ग़रीब पर बिजली गिर पड़ी। निगोड़ी बर्बाद हो गई। कैसा तगड़ा मर्द था! कौन जानता था कि ऐसा मियादी बुखार आएगा कि जान ही ले लेगा। बुखार तो ख़त्म हो गया था, पर उसने ठंडा भात खा लिया था। बुखार लौट पड़ा। तब भी बेचारी का भाग अच्छा था, लड़का तो था। हाथ-पांव में ताक़त थी, काम से डरती नहीं थी। ज़रूरत हो तो लकड़ी भी चीरती थी, चाय की पत्ती चुन लाती, रेशम के कीड़े सम्भाल लेती। बेचारी घर सम्भाले हुए थी, पर कौन जानता था कि लड़के को भेड़िया उठा ले जाएगा। भेड़िये के आने का कोई मौसम भी नहीं था। वसंत बीत चुका था, किसे पता था कि ऐसे समय भेड़िया आ जाएगा? तब बेचारी अकेली रह गई। तब ही इसका देवर आ गया। इसे घर से निकाल दिया और सारा घर व खेत हड़प लिए। मालकिन, अब इसे आपके सिवा और किसका सहारा है। फिर भी बेचारी की क़िस्मत अच्छी ही समझो। अब इस पर किसी का ज़ोर नहीं है। इसके भाग अच्छे ही हैं कि सरकार को भी नौकरानी की ज़रूरत है। इसीलिए इसे यहां लाई हूं। आपके यहां वही नौकरानी काम कर सकती है, जो यहां के तरीक़े जानती हो। बिल्कुल नई औरत यहां काम नहीं कर सकती।"

"सचमुच मेरी अकल ही मारी गई थी," श्याङ लिन की पत्नी ने अपनी उदास आंखें उठाईं और सुनाने लगी, "मैं यही जानती थी कि जब बर्फ़ गिरती है, तो जंगली जानवर खाइयों और खेतों में खाने को कुछ नहीं पाते और गांव में घुस आते हैं। मैं क्या जानती थी कि जब जाड़ा चला जाएगा, तब भी जानवर गांव में आ घुसेंगे। अंधेरे मुंह उठी, किवाड़ खोल दिए। अपने आ माओ को पुकारा, 'बेटा देहरी पर आ जा'। लड़का बहुत कहना मानता था। छोटी टोकरी में लोबिया की फलियां उसे दे दीं कि छील दे। मैं पिछवाड़े चली गई। ईंधन काटा। चावल धोकर चूल्हे पर रख दिए। आ माओ को पुकारा कि लोबिया दे जा। कोई उत्तर नहीं मिला। मैं दरवाज़े पर देखने आई, तो क्या देखती हूं कि लोबिया धरती पर बिखरा है। आ माओ का कहीं पता नहीं है। बच्चा खेलने के लिए पड़ोसियों के घर कभी नहीं जाता था। मैं सब जगह ढूंढती फिरी। पता नहीं चला। मैं घबरा गई।

पड़ोसियों को पुकारा। लोग ढूंढने के लिए खेतों में गए। दोपहर तक इधर-उधर ढूंढ लिया। जब कहीं कोई पता नहीं चला तो वे घाटी में पहुंचे। वहां बच्चे का एक जूता कटीली झाड़ी में उलझा मिला। लोगों ने कहा, 'बेचारा बच्चा! उसे भेड़िया ले गया।' वही बात थी। लोग और आगे बढ़े, तो लड़का भेड़िये की मांद में पड़ा था। भेड़िए ने उसका पेट खा लिया था। नन्हीं-सी मुट्ठी में अब भी टोकरी पकड़े था।" इतना कहने के बाद श्याङ लिन की पत्नी रोने लगी और उसका गला रुंध गया।

चाची पहले कुछ दुविधा में थीं, पर उसकी कहानी सुनते ही उनकी आंखें भर आईं। उन्होंने एक पल के लिए सोचा और श्याङ लिन की पत्नी से कह दिया कि वह अपनी टोकरी और पोटली नौकरानी के कमरे में रख दे। वेइ की बुढ़िया ने राहत की सांस ली, जैसे किसी बड़े बोझ से मुक्त हो गई हो। श्याङ लिन की पत्नी को भी पहले से अधिक तसल्ली हुई और रास्ता पूछे बग़ैर चुपचाप अपना सामान उठाकर चल दी। तब से लूचन में फिर नौकरानी का काम करने लगी।

लोग अब भी उसे श्याङ लिन की पत्नी के नाम से ही पुकारते थे।

श्याङ लिन की पत्नी का नाम तो वही रहा, पर औरत बहुत बदल गई। तीन दिन में ही मालिक और मालकिन ने समझ लिया कि नौकरानी में अब पुरानी चुस्ती नहीं है। अब बात भी भूल जाती है। चेहरे पर ऐसी मुर्दनी छा गई थी कि ताज़गी और मुस्कराहट का कोई आभास ही न रहा था। चाची कहने लगीं, अब इससे कैसे काम हो पाएगा।' श्याङ लिन की पत्नी आई, तो चाचा के माथे पर फिर वही पुराने बल उभर आए। अच्छी नौकरानी न मिल सकने की मुश्किल से मजबूर थे, इसलिए ख़ास आपत्ति क्या करते, पर अकेले में उन्होंने चाची को समझा दिया, "ये लोग ग़रीब हैं, इन पर दया करना तो ठीक है, पर घर के लिए अच्छे लच्छन नहीं होते। इधर-उधर के मामूली काम यह बेशक करे, परन्तु पूजा-बलि की सामग्री इसे मत छूने देना। पूजा का भोग अपने हाथों ही बनाना होगा। पवित्र काम में इनका स्पर्श ठीक नहीं होता। इन लोगों का छुआ भोग पितर और देवता कैसे स्वीकारेंगे!"

चाचा के यहां पितरों के श्राद्ध का आयोजन बड़े समारोहपूर्वक होता था। इससे पहले श्राद्ध की सब तैयारी श्याङ लिन की पत्नी करती थी। अब

उसे कुछ करने को ही न था। बड़ी मेज़ कमरे के बीच रख दी गई थी और पर्दा लगा दिया गया था। श्याङ लिन की पत्नी शराब के प्याले और चापस्टिक पुरानी रस्म के अनुसार पहले की तरह सजाने लगी।

"श्याङ लिन की पत्नी, तू रहने दे। मैं आप कर लूंगी। तू छोड़ दे।" चाची बोल उठीं।

श्याङ लिन की पत्नी ने हाथ खींच लिया। मेज़ से हट गई। वह धूप और दीप की सामग्री उठाने लगी।

"श्याङ लिन की पत्नी, तू रहने दे, इसे रहने दे, मैं स्वयं कर लूंगी।" चाची फ़ौरन बोल पड़ीं।

श्याङ लिन की पत्नी के पास करने के लिए कुछ नहीं रहा। बेचारी खोई-खोई सी कभी इधर जाती, कभी उधर। फिर एक तरफ़ बैठ गई। दिनभर रसोई में बैठी रही। चूल्हा सुलगाने के अलावा उसे और कुछ काम न था।

सब पुकारते, तो अब भी उसे श्याङ लिन की पत्नी के नाम से ही थे, पर ध्वनि कुछ बदल गई थी। लोग उससे बोलते तो अब भी थे, पर ढंग बदल गया था। श्याङ लिन की पत्नी को इसकी चिन्ता भी नहीं थी। उसकी आंखें पथराई हुई रहतीं। अपनी कहानी हमेशा उसकी जीभ पर रहती, दिन हो या रात, उसकी कहानी का तार कभी नहीं टूटता :

"सचमुच मेरी अक़्ल ही मारी गई थी," श्याङ लिन की पत्नी सुनाने लगती, "मैं यही जानती थी कि जब बर्फ़ गिरती है, तो जंगली जानवर खाइयों और खेतों में खाने को कुछ नहीं पाते और गांव में घुस आते हैं। मैं क्या जानती थी कि जब जाड़ा चला जाएगा, तब भी जानवर गांव में आ घुसेंगे। अंधेरे मुंह उठी, किवाड़ खोल दिए। अपने आ माओ को पुकारा, 'बेटा देहरी पर आ जा।' लड़का बहुत कहना मानता था। छोटी टोकरी में लोबिया की फलियां उसे दीं कि छील दे। मैं पिछवाड़े चली गई। ईंधन काटा। चावल धोकर चूल्हे पर रख दिए। आ माओ को पुकारा कि लोबिया दे जा। कोई जवाब नहीं मिला। मैं दरवाज़े पर देखने आई, तो क्या देखती हूं कि लोबिया धरती पर बिखरा है। आ माओ का कहीं पता नहीं है। बच्चा खेलने के लिए पड़ोसियों के घर कभी नहीं जाता था। मैं सब जगह ढूंढ़ती फिरी। कुछ पता नहीं चला। मैं घबरा गई। पड़ोसियों को पुकारा। लोग ढूंढ़ने

के लिए खेतों में गए। दोपहर तक इधर-उधर ढूंढ़ लिया, जब कहीं पता नहीं चला, तो वे घाटी में पहुंचे। वहां बच्चे का एक जूता कटीली झाड़ी में उलझा मिला। लोगों ने कहा, 'बेचारा बच्चा! उसे भेड़िया ले गया।' वही बात थी। लोग और आगे बढ़े तो लड़का भेड़िये की मांद में पड़ा था। भेड़िये ने उसका पेट खा लिया था। नन्हीं-सी मुट्ठी में अब भी टोकरी पकड़े था।" इतना कहने के बाद श्याङ लिन की पत्नी रोने लगती और उसका गला रुंध जाता।

श्याङ लिन की पत्नी की कहानी में बड़ा दर्द था। पुरुष सुनते, तो उदास हो जाते। गर्दन झुकाकर आंखें बचा लेते। स्त्रियां सुनतीं, तो सहानुभूति में उनके आंसू बह जाते। उस स्त्री के प्रति उनकी घृणा की भावना धुल जाती। कई बूढ़ी स्त्रियों ने गली में यह बात नहीं सुनी थी और वे पूरी बात सुन पाने के लिए उसके यहां गई थीं। श्याङ लिन की पत्नी अपनी कहानी सुनाकर रो उठी, तो बूढ़ी औरतें भी रुलाई नहीं रोक सकीं। रो चुकीं, तो संतोष से आहें भरती आपस में चर्चा करतीं अपने-अपने घर लौट गईं।

श्याङ लिन की पत्नी किसी से कुछ नहीं मांगती थी, उसे कुछ नहीं चाहिए था। वह सिर्फ़ अपनी दुख भरी कहानी सुना देना चाहती थी। बार-बार जब भी तीन-चार सुनने वाले मिल जाते, तो वह सुनाने लगती। कुछ ही दिनों में आसपास के सब ही लोगों ने वह कहानी सुन ली। कहानी सबको याद हो गई। अब बहुत दयावान और ईश्वरभक्त औरतें भी उसकी कहानी सुनतीं, तो उनकी आंखों में आंसू नहीं आते। कुछ और दिन बीत गए। श्याङ लिन की पत्नी की कहानी लोगों को अच्छी तरह याद हो गई। लोग कहानी सुनने से उकताने और डरने लगे।

"सचमुच मेरी अकल ही मारी गई थी," श्याङ लिन की पत्नी कहने लगती।

"हां-हां, तुम तो यही जानती थीं कि जब बर्फ़ गिरती रहती है, तो जंगली जानवर खाइयों और खेतों में खाने को कुछ नहीं पाते और गांवों में घुस आते हैं।" यह कहकर लोग फौरन उसे टोक देते और मुंह फेरकर चल देते।

श्याङ लिन की पत्नी मुंह खोले सूनी आंखें फाड़े खड़ी रह जाती, जैसे कुछ समझ ही नहीं पाई हो। फिर वह चल देती, जैसे अपनी बात पर झेंप

गई हो। उसके दिमाग़ में कहानी सुनाने की इच्छा फिर भी बनी रहती। इसी चिन्ता में रहती कि किसी भी प्रसंग से चाहे टोकरी की बात उठे या लोबिया या बच्चों की चर्चा हो, वह अपने आ माओ की बात कह सके। अगर किसी दो-तीन साल के बच्चे पर नज़र पड़ जाती, तो कह देती, "हाय, मेरा आ माओ होता, तो इतना ही बड़ा होता।"

श्याङ लिन की पत्नी की आंखें और चेहरा ऐसा हो गया था कि बच्चे देखकर डर जाते। भागने के लिए मां का आंचल पकड़ उसे भी खींच ले जाते, वह बेचारी अकेली रह जाती। उदास होकर दूसरी तरफ़ चल देती। उसकी मानसिक अवस्था से सभी परिचित थे। लोग खुद ही किसी बच्चे की ओर इशारा कर मुस्कराहट दबाकर कह देते, "श्याङ लिन की पत्नी, क्या कहती हो, तुम्हारा आ माओ होता, तो क्या इतना बड़ा नहीं हो गया होता?"

श्याङ लिन की पत्नी शायद यह कभी नहीं समझ पाई कि उसकी कहानी अब बासी पड़ चुकी है। उनके दिलों में इस कहानी के प्रति उकताहट और उपेक्षा की भावना पैदा हो चुकी है। वह लोगों की मुस्कराहट देखती और समझ जाती कि उसमें सहानुभूति का स्थान विद्रूप ने ले लिया है। उसे समझ लेना चाहिए था कि लोग अब उसकी करुण कथा सुनना नहीं चाहते। वह फटी-फटी आखों से उनकी ओर देखती रह जाती और कोई जवाब नहीं देती।

लूचन में नए साल का त्यौहार बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। 12वें महीने की 20 तारीख से ही सब तरफ़ पूजा की तैयारियां शुरू हो जाती हैं। उस साल चाचा के यहां कुछ दिनों के लिए नौकर रखे बिना काम चल नहीं सकता था। एक नौकर से भी नहीं चल सकता था, इसलिए एक और नौकरानी भी रखनी पड़ी। नाम ल्यू मा था। पूजा के लिए मुर्ग़ियां और हंस काटना ज़रूरी था, परन्तु ल्यू मा भक्तिन थी, वह मांस नहीं खाती थी, फिर भला जीव-हत्या कैसे करती? बस पूजा के बर्तन ही मांज सकती थी। श्याङ लिन की पत्नी के लिए चूल्हा जलाने के सिवाय और कोई काम नहीं था, चुप बैठी ल्यू मा को पूजा के बर्तन मांजते देखती रहती। हलकी-हलकी बर्फ़ गिरने लगी थी।

श्याङ लिन की पत्नी की आंखें आकाश की तरफ़ थीं। उसने एक आह भरी और बोली, "मैया री, मेरी तो मत ही मारी गई थी।"

"श्याङ लिन की पत्नी, फिर वही बात," ल्यू मा ने परेशान होकर उसे टोक दिया और आगे बोली, "यह तो बता, तेरे माथे पर जो चोट है, यह तभी लगी थी ना?"

"हूं।" श्याङ लिन की पत्नी ने स्वीकार किया।

"यह बता, तू मान कैसे गई?"

"मैं?"

"और नहीं तो क्या? मानी कैसे नहीं थी? नहीं थी तो···।"

"मैयरी, तू क्या जाने उसमें कितना बल था?"

"अरी रहने भी दे। कितना भी बल रहा हो, तुझमें भी तो बहुत बल था। उसमें कितना भी बल हो, तू मानी नहीं होती, तो क्या कर लेता? तू खुद मानी थी, अब बात बना रही है कि उसमें बहुत बल था।"

"मैया री···तू ही आजमाकर देख लेती, जान जाती।" श्याङ लिन की पत्नी मुस्करा दी।

ल्यू मा के झुर्रीदार चेहरे पर भी मुस्कराहट खेलने लगी। उसका चेहरा अखरोट की तरह सिकुड़ गया। काले मोतियों जैसी उसकी आंखें श्याङ लिन की पत्नी के माथे पर गईं और फिर उसकी आंखों में गड़कर स्थिर रह गईं। श्याङ लिन की पत्नी सहसा झेंप गई, उसकी मुस्कराहट मिट गई। वह आकाश से झड़ती बर्फ़ की पंखुड़ियों की तरफ़ देखने लगी।

"श्याङ लिन की पत्नी, यह अच्छा काम नहीं हुआ।" ल्यू मा रहस्यभरी आवाज़ में बोली, "तू मान गई, यह ठीक नहीं हुआ। इससे तो अच्छा था तू सिर फोड़कर मर जाती। दूसरे मर्द के साथ तू दो साल भी नहीं रही, यह बहुत बड़ा पाप हो गया। जानती है, तू मरेगी तो दोनों मर्दों के प्रेत तेरे लिए आपस में लड़ेंगे। तू किसकी मानेगी? यमराज चीरकर तेरे दो टुकड़े कर देंगे और तुझे दोनों में आधा-आधा बांट देंगे। और क्या होगा?"

श्याङ लिन की पत्नी ने सुना तो भय से सन्नाटे में आ गई। पहाड़ी इलाके में उसने ऐसी बात कभी भी नहीं सुनी थी।

"मैं कहती हूं तू इसका कुछ उपाय कर। कुल-देवता के मन्दिर में दान देकर अपने नाम की एक देहलीज़ रखवा ले। देह तेरे नाम की हो जाएगी, तो हजारों उस पर पांव रखेंगे, जिससे तेरा पाप धुल जाएगा और उस लोक में दुख उठाने से बच जाएगी।"

श्याङ लिन की पत्नी चुप रह गई, पर ल्यू मा की बात उसके मन में लग गई। सुबह उठी, तो आंखों के नीचे बड़ी-बड़ी झांइयां पड़ गई थीं। सुबह का खाना खाकर गांव के पश्चिम में कुल-देवता के मन्दिर में चली गई। पुजारी से एक देहलीज़ मांगी। पुजारी ने उसे दुतकार दिया। बेचारी बहुत रोई, पुजारी के पांव पड़ी। तब कहीं पुजारी ने देहलीज़ के दान के रूप में बारह हजार तांबे के सिक्के मांगे।

श्याङ लिन की पत्नी बहुत पहले से किसी से बोलती नहीं थी। लोग उसके बेटे की करुण कथा से उकताने और हंसने लगे, तो उसने मौन धारण कर लिया, परन्तु ल्यू मा से हुई उसकी बात की ख़बर गांव-भर में फैल गई। लोगों को मज़ा लेने की सामग्री मिल गई। लोग उसका मज़ाक उड़ाने के लिए आने लगे। अब बात श्याङ लिन की पत्नी के माथे पर बने चोट के से शुरू होती।

"श्याङ लिन की पत्नी, सच बता, ऐसी बात के लिए तू मानी कैसे?" कोई पूछता।

"मैया री, बड़े दुख की बात है, तूने बेकार में अपना सिर क्यों फोड़ लिया?" कोई और उसके चोट के दाग़ पर नज़र डालते हुए पूछता।

श्याङ लिन की पत्नी लोगों के लहजे और मुस्कराहट से शायद यह जान गई थी कि वे उससे मज़ाक करने के लिए आ रहे हैं। वह किसी को उत्तर नहीं देती। बिना हिले, सामने देखती रह जाती। उसके होंठों पर चुप्पी बिछ गई थी। उसके माथे पर चोट का दाग़ लोगों की दृष्टि में कलंक का निशान बन गया था। बेचारी दिन-भर मौन साधे, होंठ सिये, भाग-दौड़ करने झाड़ू-बुहारी करने, साग-सब्जी काटने, चावल धोने में ही लगी रहती। लगभग एक साल और बीत गया, तो उसने चाची से अपनी पगार मांगी। पूरी राशि को चांदी के बारह डालरों में बदलवा लिया। मालकिन से छुट्टी मांगकर क़स्बे के पश्चिम में बने मन्दिर में गई। फ़ौरन ही लौट भी आई। इतना भी समय नहीं लगा, जितना भात निगलने में लगता है। मन्दिर से लौटी तो बहुत संतुष्ट थी, आंखों में अनोखी चमक थी। आकर प्रसन्नता से चाची को बताया कि देहलीज़ के लिए दान दे आई है।

सर्दी की बलि का समय आ गया। श्याङ लिन की पत्नी खूब उत्साह

और लगन के साथ काम कर रही थी। उसने चाची को पूजा के बर्तन और आ न्यू के साथ मेज़ उठाकर लाते देखा, तो स्वयं शराब के प्याले और चापस्टिकें लाने के लिए जाने लगी।

"रहने दे, रहने दे, श्याङ लिन की पत्नी, तू रहने दे।" चाची ने तुरन्त टोक दिया।

श्याङ लिन की पत्नी ने हाथ पीछे खींच लिए, जैसे तपता लाल लोहा हाथों को छू गया हो। चेहरा एकदम फ़क़ पड़ गया। वह धूप-दीप का सामान भी लेने नहीं गई, सन्न खड़ी रही, जैसे कुछ समझ ही नहीं पा रही हो। जब चाचा धूप और दीप जलाने के लिए आए, तो उन्होंने उसे वहां से जाने के लिए कहा। तब कहीं उसकी बेहोशी हटी। वह कमरे से चली गई। श्याङ लिन की पत्नी एक ही दिन में कितनी बदल गई थी। उसकी आंखें अंदर धंस गईं। लगता था कि शरीर की सारी शक्ति खो बैठी है। उसके मस्तिष्क में अजीब-सा डर समा गया। वह न सिर्फ़ अंधेरे से या किसी की छाया से डरने लगी, बल्कि आदमी की सूरत देखते ही डरने लगी। मालिक या मालकिन का सामना होते ही वह ऐसे सिकुड़ जाती, जैसे चुहिया बिल से निकल आए और उजाला देखकर डर जाए। दिन-भर कोने में लकड़ी के कुन्दे की तरह चुप बैठी रहती। छह महीने में सिर सफ़ेद होने लगा। उसे कोई भी बात याद नहीं रहती। यह हालत हो गई थी कि चावल रांधना तक भूल जाती।

"श्याङ लिन की पत्नी को न जाने क्या हो गया है? इस बार तो उसे रखकर ही पछताए।" चाची उसके सामने ही कह देतीं कि सुनकर शायद कुछ ठीक हो जाए।

श्याङ लिन की पत्नी की हालत सुधरी नहीं, सुधरने की कोई आशा भी नहीं दिखाई देती थी। चाचा-चाची सोच रहे थे कि उससे कैसे पीछा छूटे, उसे वेइ की बुढ़िया के यहां ही भेज दिया जाए। मैं लूचन में था, तो अभी यह बात चल ही रही थी, परन्तु बाद की घटनाओं से पता चला कि उसे निकाल दिया होगा। यह कह सकना कठिन है कि श्याङ लिन की पत्नी को जब चाचा ने काम से हटाया, तभी भीख मांगने लगी या पहले वेइ की बुढ़िया के यहां गई और उसके बाद भीख मांगने लगी।

सहसा मेरी नींद टूट गई। ऐसा लगा, जैसे बहुत समीप ही किसी ने

पटाख़े छोड़ दिए हों। आंख खुली, तो सब तरफ़ दीवाली-सी छिटकी हुई थी, जैसे रंग-बिरंगे प्रकाश के मोती बिखर गए हों। कान पटाखों की गूंज से भर गए थे। चाचा के यहां पूजा की बलि दी जा रही थी। समझ लिया पौ फटने की बेला हो गई है। आकाश दूर-दूर तक पटाखों की गूंज से भरा था, जैसे गड़गड़ाहट के साथ बादल उमड़ते चले आ रहे हों। आकाश से भंवरों में चक्कर काटती बर्फ़ की पंखुड़ियां शहर को ढके जा रही थीं। मुझे कि कोई सपना देख रहा हूं। मन कुछ हलका जान पड़ रहा था। पिछले दिन से मेरे दिमाग़ में चिन्ता और शंका का जो बोझ बना हुआ था, त्यौहार की धूमधाम उसे न जाने कहां उड़ा ले गई। मैं स्वस्थ और चिन्ता से मुक्त हो गया। विश्वास हो गया कि आकाश और पृथ्वी के देवताओं ने पूजा की बलि को स्वीकार कर लिया था और देवता आकाश में व्याप्त धूप और दीप की सुगंध से संतुष्ट और मुग्ध होकर लूचन रहने वालों को चिर सुख और सौभाग्य का आशीर्वाद देने के लिए तत्पर हो रहे हैं।

जनद्वेषी

एक

वेइ ल्येन-शू से मेरी दोस्ती थी। सोचता हूं, वह भी एक अद्भुत संयोग ही था! दोस्ती एक शवयात्रा के अवसर पर हुई और उसका अंत भी शवयात्रा में ही हुआ।

जिन दिनों मैं S—शहर में रहता था, प्रायः लोग उसकी चर्चा करते रहते थे और उसे सनकी समझते थे। कॉलेज में वह जीव-विज्ञान पढ़ता था, लेकिन बाद में एक मिडिल स्कूल में इतिहास का शिक्षक बन गया। यूं दूसरों से व्यवहार में वह अपनी चौधराहट बनाए रहता, परन्तु किसी का कोई भी काम अटका हो तो तुरन्त हाथ बंटाने को तैयार रहता। सिद्धान्त रूप से वह परिवार प्रणाली के विरुद्ध था, जिस रोज वेतन पाता, फ़ौरन दादी को रुपए भेज देता। उसमें और भी कई सनकें थीं। S—में उसकी किसी-न-किसी बात की चर्चा होती ही रहती थी। एक बार सर्दी का मौसम था। मैंने अपने कुछ रिश्तेदारों के साथ हानशीशान में मकान ले लिया था। मेरे ये रिश्तेदार भी वेइ कुल के थे, इसलिए उनका कुछ-न-कुछ सम्बन्ध, चाहे दूर का ही क्यों न हो, वेइ ल्येन-शू से भी ज़रूर रहा होगा। उन लोगों की वेइ ल्येन-शू से न ही पटती थी, नहीं परस्पर कोई संपर्क था। ये उसको इस तरह देखते जैसे वह कोई विदेशी हो। जब कभी उसकी बात करते, तो कह देते, "वह हमसे भिन्न है।"

उन दिनों यह बात कुछ आश्चर्य की भी नहीं थी। यद्यपि उस समय भी शहरों में नए ढंग के स्कूल चलते बीस वर्ष हो चुके थे, परन्तु हानशीशान में तब एक भी प्राइमरी स्कूल नहीं खुला था। उस पहाड़ी प्रदेश में वही एक

व्यक्ति था जो शहर जाकर पढ़-लिख आया था। इसीलिए गांव के लिए वह सनकी नहीं, तो और क्या था? लोगों को उससे जलन भी थी। कहते रहते "बहुत रुपया बनाया है।"

सर्दी के अन्त में, गांव में पेचिश की बीमारी फैल गई। बीमारी के डर से सोचा, शहर लौट जाए। सुना कि वेइ की दादी को पेचिश हो गई है। बूढ़ी तो थी ही, उसकी हालत ज़्यादा खराब हो गई। गांव में डाक्टर-वैद्य भला कहां थे। वेइ का दादी के अलावा और कोई नहीं था। बुढ़िया ने एक नौकरानी रखी हुई थी और सीधी-सादी ज़िन्दगी गुज़ार रही थी। वेइ के मां-बाप बचपन में ही चल बसे थे। दादी ने ही उसे पाला था। लोग कहते थे कि बुढ़िया ने बहुत दुख झेले हैं, अब वह सुखी है। जो हो, वेइ के बाल-बच्चे कुछ नहीं थे, घर में सन्नाटा था। शायद, लोगों की नज़र में उसके सनकी होने का यही क़ाफी बड़ा सबूत हो।

गांव सड़क के रास्ते शहर से तीस मील से भी अधिक दूर था। नाव से भी बीस मील से अधिक दूर पड़ता था। वेइ को बुलाने कोई शहर जाता, तो लौटने में चार दिन लग जाते। उस सुदूर गांव में कोई भी घटना मामूली बात नहीं थी। कुछ भी होता, तो सभी उसकी चर्चा करने लग जाते। बात फैल गई कि बुढ़िया की हालत बहुत ख़राब है। वेइ को बुलाने के लिए आदमी शहर गया, लेकिन पौ फटने से पहले ही बुढ़िया चल बसी। बुढ़िया के अन्तिम शब्द थे, "अरे, मेरे पोते को बुला दो। मुझे अपने पोते का मुंह दिखा दो।"

बिरादरी के बड़े-बूढ़े, पास-दूर के रिश्तेदार, दादी के परिवार के सदस्य और दूसरे लोग भी घर में आए। वेइ के लौटने की प्रतीक्षा थी। आशा थी, वह अर्थी उठाए जाने के समय तक पहुंच जाए। कफन और ताबूत भी आ गया। चिन्ता थी कि वेइ को कैसे समझाया जा सकेगा। सभी को शंका थी कि वह आदमी कोई-न-कोई झमेला खड़ा कर देगा। पुराने रीति-रिवाजों में अड़ंगा लगा देगा। पंचायत बैठी और पंच फ़ैसले में तीन बातें तय की गईं कि वे वेइ को हर हालत में माननी ही पड़ेंगी। पहली बात यह कि—वेइ को रीति के अनुसार शोक के कपड़े पहनने पड़ेंगे; दूसरी बात यह कि—उसे ताबूत के सामने दण्डवत करना होगा; तीसरी बात—सब क्रिया-कर्म या तो

कोई बौद्ध भिक्षु कराएगा या कोई ताओ पुजारी। संक्षेप में वेइ को सभी पुराने रीति-रिवाज पूरे करने होंगे।

पंच फ़ैसला हो गया, तो यह भी निश्चय कर लिया गया कि वेइ घर लौटे, तो सभी वहां एकत्र हो जाएं। और सब मिलकर उससे बात करें, जो पंच फ़ैसला हो गया है, उसमें कोई बदलाव नहीं हो सकता। उत्सुकता और कौतूहल से गांव के लोगों के प्राण होठों पर आने लगे थे। क्या होता है? वेइ नए जमाने का आदमी है, 'विलायती चालढाल' मानता है, कुछ-न-कुछ नई बात करेगा ही। ज़रूर झगड़ा उठ खड़ा होगा, जाने क्या गुल खिले!

दोपहर बाद ख़बर आई कि वेइ लौट आया है। आते ही उसने दादी के शव को प्रणाम किया। बिरादरी के बड़े-बूढ़े पंच फ़ैसले के अनुसार चौकन्ने थे। वेइ को चौपाल में बुलवाया गया। बहुत लम्बी, इधर-उधर की बातचीत के बाद बुढ़िया के क्रिया—कर्म का प्रसंग चला। सभी लोग एक साथ बोल रहे थे और बोलते जा रहे थे। वेइ को उत्तर देने का कोई अवसर नहीं था। सब बोल कर थक गए, तो चौपाल में सन्नाटा छा गया। सभी की आंखें आशंका से वेइ की ओर लगी हुई थीं। वेइ लकड़ी के पुतले जैसा निश्चल और मौन बैठा था। आखिर वह बोला, "जो आज्ञा।"

लोग हैरान रह गए। लोगों के मन से चिन्ता दूर हुई पर उन्हें निराशा भी हुई। वे कितनी उम्मीद लगाए बैठे थे, सब यूं ही रह गया। अब कानाफूसी होने लगी, "यह भी ख़ूब रहा, कहता है, 'जो आज्ञा'। चलकर देखा तो जाए।" वेइ ने कह दिया था, "जो आज्ञा।" इसका अर्थ था जो कुछ जैसा सदा से होता आया है, वही अब भी होगा, तो फिर उसमें कौतूहल की बात ही क्या रह गई थी फिर भी लोग देखना चाहते थे कि वेइ आखिर करता क्या है। शाम के समय चौपाल फिर देखने वालों से भर गया।

मैंने अपने यहां से अगरबत्तियां और मोमबत्तियां पहले ही भिजवा दी थीं। चौपाल में जाकर लोगों में शामिल हो गया। मैं पहुंचा, तो वेइ शव पर कफ़न डाल रहा था। वेइ शरीर से दुबला था। उसके उलझे हुए बाल, घनी भौंहें और मूंछें सूखे-से चेहरे को ढके हुए थीं। आंखों में ग़म था। उसने बुढ़िया के शरीर को बहुत सावधानी और इत्मीनान से उठाकर ताबूत के समीप रख दिया, जैसे ऐसा काम उसके लिए कोई नई बात न हो। लोग बहुत चकित थे। गांव का पुराना रिवाज था कि क्रिया-कर्म के समय सब

कुछ परम्परानुसार उचित और ठीक-ठीक किए जाने पर भी नाते-रिश्ते के लोग कोई-न-कोई गलती निकाल ही देते थे। वेइ मौन, भावशून्य, यन्त्रवत जो कुछ भी आदेश दिया गया, पूरा करता गया। मेरे आगे सफ़ेद बालों वाली एक बुढ़िया खड़ी थी। यह सब देखकर वह बड़ी श्रद्धा और स्पर्द्धा में आहें भर रही थी।

सभी ने मृतक को दण्डवत किया। फिर सभी ने रोने में साथ दिया। स्त्रियां रोते-रोते मंत्र भी पढ़ती जा रही थीं। शव ताबूत में रख दिया गया, तो सब लोगों ने पुनः दण्डवत किया। ताबूत पर तख्ता रखकर कीलें गाड़ी जाने लगीं। जब तक कीलें गाड़ी जाती रहीं, सब विलाप करते रहे, चौपाल में क्षण-भर के लिए सन्नाटा छा गया और फिर आश्चर्य और असंतोष की कानाफूसी आरम्भ हो गई। मुझे अचानक ख्याल आया, वेइ की आंखों से शुरू से अब तक एक भी आंसू नहीं गिरा था। वह ताबूत के समीप बिछी चटाई पर बिना हिले डुले ख़ामोश था। ग़म से पथराई उसकी आंखें बिल्कुल खुश्क थीं।

वेइ की दादी का अंतिम संस्कार पूर्ण हो गया। लोग चकित और असंतुष्ट रह गए। मृतक के संस्कार में आए लोग लौटने लगे। वेइ चटाई पर खोया-सा बैठा था। सहसा उसकी आंखों से आंसू बहने लगे। दूसरे ही पल वह चीख मारकर रो पड़ा। उसका आर्तनाद किसी जख्मी भेड़िए की दुख-भरी चिंघाड़ की भांति था, जो अंधेरी रात में घने बियाबान जंगल से सुनाई पड़ रहा हो। उसकी वेदना में क्रोध और दुख भी मिला हुआ था। ऐसी रीति तो नहीं थी। लोग चकित रह गए, वे कुछ समझ नहीं पा रहे थे। वे रुके और कुछ सोचा और फिर दो-चार वे उसे चुप कराते हुए सांत्वना देने लगे। फिर कुछ और लोग आ गए, भीड़ बढ़ती गई। वेइ भीड़ से घिर गया, पर रोता रहा, बिना हिले-डुले लोहे की मूर्ति के समान बैठा रोता ही रहा।

लोगों को घटना के ऐसे अन्त ही की आशा नहीं थी। भीड़ छंट गई। वेइ आधा घंटे तक रोता रहा और फिर सहसा चुप हो गया। शोक प्रकट करने आए लोगों से वह एक शब्द भी नहीं बोला और घर के अन्दर चला गया। गांव में खबर फैल गई कि वेइ घर के अन्दर दादी के कमरे में चला गया है और दादी की खाट पर जाकर गहरी नींद में सो गया है।···

दो दिन और गुज़र गए। मैं सुबह ही शहर लौटने वाला था। लगता था, गांव के लोग बदहवास हैं। बहुत ज़ोरों से चर्चा और बहस चल रही थी। वेइ ने फ़ैसला कर लिया था कि दादी के बुढ़ापे में सेवा करने वाली नौकरानी को बुलाकर, जो सामान वह चाहेगी, उसे दे देगा और बाक़ी सब खाट-पटिया व सामान जला डालेगा। मकान भी नौकरानी को दे देगा, जब तक चाहे उसमें रहे। वेइ के रिश्तेदार समझाकर थक गए, पर वह किसी की नहीं सुन रहा था।

सुना तो मुझे भी कम कौतूहल नहीं हुआ। इसलिए घर लौटते समय उसके मकान की तरफ़ से गया कि वेदना के दो-चार शब्द कहता चल। कुछ समाचार भी मिल जाएगा। देखा कि वेइ ग़मी की सफ़ेद पोशाक पहने था। चेहरा सदा की तरह भावशून्य था। उसे समझाया, "यह तो होना ही था, अब हिम्मत रखना चाहिए।" वह 'हूं-हूं' करता रहा, केवल इतना ही बोला, "सहानुभूति के लिए धन्यवाद।"

दो

उस साल जाड़ों के आरम्भ में वेइ ल्येन-शू से फिर मुलाकात हो गई। यह हमारी तीसरी भेंट थी। S—में हम पुस्तकों की एक दुकान में अचानक मिल गए। आंखें चार होते ही दोनों ने सिर झुकाकर अभिवादन किया। प्रकट था कि हम कम-से-कम परिचित अवश्य थे, लेकिन हमारी दोस्ती वास्तव में उसी वर्ष के अन्त में शुरू हुई। उन दिनों मेरी नौकरी छूट चुकी थी और मैं बेकार था। अक्सर वेइ से मिलने चला जाता। एक तरफ़ तो मेरे पास करने को कुछ नहीं था और दूसरी तरफ़ मैंने सुना था कि वेइ स्वभाव से भले ही मिलनसार न हो, पर अभागे लोगों से सहानुभूति अवश्य रखता है। जो भी हो, भाग्य तो किसी का एक सा नहीं रहता, अभागे सदा अभागे ही नहीं बने रहते हैं। इसलिए वेइ की मित्रता कम ही लोगों से रह पाती थी। जैसा उसके बारे में सुना था, कुछ वैसा ही अनुभव मुझे भी हुआ। उसे भीतर खबर भेजी, तो उसने मुझे अन्दर बुला लिया। दो कमरे मिलाकर उसने अपनी बैठक बना रखी थी। बैठक में सजावट कुछ भी नहीं थी, एक

मेज़ थी और तीन-चार कुर्सियां। हां, पुस्तकों की अलमारियां ज़रूर थीं। लोग वेइ को 'घोर आधुनिक' विचारों का बताते थे, परन्तु अलमारियों में आधुनिक पुस्तकें कम दिखाई दीं। उसे पता था कि मेरी नौकरी छूट गई है। हम लोगों ने शिष्टाचारवश आपस में कुशलक्षेम पूछा और फिर चुप रह गए। न वह कुछ बोला, न मैंने ही कुछ कहा। देखा, वह सिगरेट को जल्दी-जल्दी ख़त्म कर रहा है। सिगरेट की आंच उंगलियों तक पहुंच जाती, तो सिगरेट को फर्श पर रख देता।

"सिगरेट लो," वेइ ने नई सिगरेट निकालकर सहसा मेरी ओर देखकर कहा।

मैंने सिगरेट ले ली। सिगरेट पीते हुए दो-चार बातें स्कूल और पुस्तकों के बारे में हुईं। फिर कोई बात नहीं सूझी। मैं जाने के लिए उठा ही था कि दरवाज़े से कई लोगों के कदमों की आहट और बातचीत सुनाई दी। चार बच्चे दौड़कर बैठक में आ पहुंचे। सबसे बड़ा आठ-नौ साल का और सबसे छोटा चार-पांच साल का रहा होगा। बच्चों के हाथ-मुंह और कपड़े-लत्ते बहुत मैले थे, वे बिल्कुल भद्दे थे, पर वेइ का चेहरा खिल उठा। वह उठा, दूसरे कमरे की तरफ़ बढ़ते हुए उसने पुकारा :

"आओ, ता-ल्याङ, अड़-ल्याङ, सब इधर आ जाओ! तुम कल बाजा मांग रहे थे, मैं ले आया हूं।"

बच्चे उसके पीछे दौड़ पड़े। लौटे, तो चारों एक-एक बाजा लिए थे। बाहर निकलते ही बच्चों में लड़ाई शुरू हो गई। एक चीखकर रो पड़ा।

वेइ ने जाकर पुकारा, "लड़ाई मत करो! सबको एक-एक दे दिया है। सब एक से हैं, कोई अंतर नहीं है।"

"किसके बच्चे हैं?" मैंने पूछा।

"मकान मालिक के हैं। मां नहीं है बूढ़ी दादी है।"

"मकान मालिक की बीवी नहीं है?"

"नहीं, तीन-चार साल हुए मर गई। उसने फिर ब्याह नहीं किया, नहीं तो मुझ जैसे बिना बीवी के आदमी को मकान किराए पर क्यों देता?" उसके चेहरे पर फीकी मुस्कराहट दौड़ गई।

मन में आया वेइ से पूछूं उसने इतनी उम्र तक विवाह क्यों नहीं किया? पर तब तक उससे खास आत्मीयता नहीं हुई थी।

परिचय गहरा होने पर वेइ बातचीत भी खूब करता था। स्वभाव से वह विचारक था। उसके कई विचार नितान्त मौलिक होते थे। मुझे तो उससे मिलने आने वाले कई लोगों से बड़ी परेशानी होती थी। उसके यहां अजीब क़िस्म के लोग आते थे। लगता था कि वे नहीं व्वी ता-फ़ू[1] के रोमानी उपन्यास पढ़कर विचित्र कल्पनाओं में खोए रहने वाले लोग हैं। कोई अपने आपको 'अभागा युवक' समझता, तो कोई अपने को 'प्रताड़ित' बताता। आकर बड़ी-बड़ी कुर्सियों पर घमंडी केकड़ों की तरह जम जाते। सिगरेट फूंकते हुए अपनी उपेक्षा पर आहें भरते रहते। बात करते समय घमंड से भौंहें चढ़ाए रहते।

मकान-मालिक के बच्चे भी वेइ को घेरे रहते। उनकी लड़ाई कभी खत्म नहीं होती थी। कभी प्लेट-प्याले तोड़ते, कभी मिठाई मांगते रहते। इतना हो-हल्ला करते कि कान फटने लगते पर उन्हें देखकर वेइ की उदासी मिट जाती चेहरा खिल उठता जैसे वे उसके सबकुछ हों। एक बार तीसरे लड़के को खसरा निकल आया। वेइ की परेशानी की सीमा नहीं रही। चेहरा वेइ का यूं भी उदास दिखता था, अब उस पर और भी मुर्दनी छा गई। ख़ैर, बीमारी मामूली ही थी। बच्चों की दादी वेई की चिन्ता को लेकर उसका मज़ाक बनाती रहती।

वेइ शायद उन बच्चों के प्रति मेरी बेरुख़ी भांप गया था, "बच्चे बहुत प्यारे होते हैं, कितनी सरलता होती है इनमें···" मुझे सुनाकर बोला।

"सभी में तो नहीं होती," मैंने भी ऐसे ही कह दिया।

"निश्चय ही सभी में होती है। ऐब तो उम्र बढ़ने पर ही आते हैं। बच्चे ऐब सीखते भी हैं, तो परिस्थितियों के प्रभाव से ही। प्रकृति से वे सरल होते हैं, खुद बुरे नहीं होते। मैं तो कहता हूं कि चीन के लिए कहीं कुछ आशा है तो इन बच्चों से ही है।"

"मेरा ख्याल ऐसा नहीं है। बुराई के बीज अगर बचपन में नहीं रहते, तो उम्र बढ़ने पर ज़हरीले फल कहां से आ जाते हैं? फल बीज के अनुसार ही होता है। उदाहरण के लिए, जैसा बीज होता है, उसी के अनुसार वृक्ष

1. लू शुन के समकालीन लेखक, जिन्होंने दमन के शिकार नौजवानों के बारे में लिखा था।

के बढ़ने पर पत्ते, शाखाएं, फल-फूल हो सकते हैं।" उन दिनों मैं बेकार था, कोई नौकरी नहीं थी। जैसे बड़े-बड़े सरकारी अफ़सर अपने पद से इस्तीफा देने के बाद बौद्ध धर्म के ग्रन्थ पढ़कर समय बिताया करते हैं वैसे ही बेकारी के दौरान मैं भी बौद्ध सूत्र बढ़ता रहता। बौद्ध दर्शन को मैं ठीक से समझता तो नहीं था, ऐसे ही रट्टा बोलता रहता था।

वेइ मेरी बात से चिढ़ गया। मेरी ओर देखकर चुप ही रह गया। मैं अनुमान नहीं लगा सका कि वह निरुत्तर हो गया है या मुझे उत्तर देना व्यर्थ समझ रहा है। जो भी हो, वह उपेक्षा से चुप बैठ गया। एक लम्बे अरसे से मेरे प्रति उसने ऐसा व्यवहार नहीं किया था। उसने सिगरेट सुलगा ली। एक सिगरेट खत्म हुई तो दूसरी लगा ली। उसे चुपचाप तीसरी सिगरेट लगाता देखा, तो मैं उठकर चला आया।

तीन महीने तक हम दोनों में कोई बातचीत नहीं हुई। इसके बाद कुछ तो इसलिए कि बात पुरानी हो गई थी और कुछ इसलिए भी कि वह उन 'सरल' बच्चों से इतना परेशान हो गया था कि बच्चों के प्रति मेरी अपमानजनक बात को क्षमा कर देने के लिए राज़ी भी हो गया। कम-से-कम मेरा यही अनुमान था। वह बात मेरे ही घर में हुई। हम दोनों ने थोड़ी शराब पी ली थी। वेइ का मन उचाट लग रहा था। सहसा उसकी भौंहें तन गईं और वह बोल उठा, "सोचो तो सही, कैसी अजीब बात है। तुम्हारे यहां आ रहा था। रास्ते में एक इत्ता-सा, बालिश्त भर का लड़का देखा। वह हाथ में सरकंडा लिए था। सरकंडा मेरी ओर तलवार की तरह घुमाकर बोला, 'मार डालो!' बताओ, बालिश्त भर का बच्चा···!"

"यह उसकी परिस्थितियों का ही प्रभाव है।"

मैं कह तो गया, परन्तु कहते ही संकोच महसूस करने लगा। बात मुंह से निकल गई थी। वेइ ने मेरी इस दुविधा की तरफ़ ध्यान नहीं दिया। वह प्याले पर प्याले चढ़ाता रहा और सिगरेट पर सिगरेट फूंकता रहा।

"यह तो बताओ," प्रसंग बदलने के लिए मैंने पूछा, "तुम तो कभी किसी के यहां आते-जाते नहीं, आज इधर कैसे आ गए? साल-भर से हम लोगों का परिचय है, आज पहली बार ही आए हो।"

"यही बताने तो आया था। तुम मेरे यहां अभी कुछ दिन मत आना।

एक बाप-बेटा मेरे यहां आकर जमे हुए हैं। मुसीबत है, बिल्कुल जानवर हैं।"

"बाप-बेटा कौन हैं?" मुझे भी आश्चर्य हुआ।

"मेरा रिश्ते का भाई और उसका लड़का। क्या बात है, बेटा बाप से भी आगे बढ़ा हुआ है।"

"तुमसे मिलने और घूमने-फिरने के लिए शहर आए होंगे?"

"यह नहीं, भाई समझाने आया है कि उसके लड़के को गोद ले लूं।"

"क्या? तुम लोगे गोद?" मैं विस्मय से बोला, "अभी तो तुमने विवाह ही नहीं किया।"

"वह जानता है कि मैं विवाह नहीं करूंगा। उसे इस बात की चिन्ता नहीं है। असल में उसका सीधा मतलब यह है कि गांव में मेरा टूटा-फूटा सा जो मकान है, उसके लड़के के नाम हो जाए। पता है खास, मेरी और तो कोई ज़मीन-ज़ायदाद नहीं है, पैसा इस हाथ आता है, उस हाथ जाता है, ले-दे कर वही एक मकान है। उनके दिमाग में एक ही बात है। मकान उस बूढ़ी नौकरानी को रहने के लिए क्यों दे आया हूं। वे बुढ़िया को मकान से निकालना चाहते हैं।"

वेइ की सनकी बात सुन मैं चुप रह गया। फिर तसल्ली देने के लिए बोला, "मेरा ख्याल नहीं है कि वे इतने कमीने होंगे। ज़रा पुराने ख्याल के लोग हैं। तुम्हें याद होगा, उस साल जब तुम दुख में विलाप कर रहे थे, उन लोगों ने कितनी सहृदयता से तुम्हें तसल्ली दी थी।"

"जब मेरे पिता की मौत हुई, तो मैं बच्चा था। तब भी वे मकान ले लेना चाहते थे। मुझे काग़ज़ पर अंगूठा लगाने के लिए कहने लगे। तब भी मैं दुख से बहुत जोर से रो पड़ा था और उन लोगों ने मुझे बहुत प्यार से पुचकारा था।" वेइ शून्य की ओर देखता रहा, जैसे किसी पुरानी याद में खो गया हो।

"सारे झगड़े की जड़ यह है कि तुम्हारे कोई बाल-बच्चा नहीं है। तुम विवाह क्यों नहीं कर लेते?" मैंने बात बदलने के लिए पूछा। बहुत दिनों से मेरे मन में यह कौतूहल था। इस विषय में पूछना चाहता था। यह एक अच्छा मौक़ा था।

वेइ ने आश्चर्य से मेरी तरफ़ देखा, फिर आंखें अपने घुटनों की ओर झुका लीं। चुपचाप सिगरेट पीता रहा, उसने कोई जवाब नहीं दिया।

तीन

वेइ का निरीह और सूना जीवन भी लोगों को खटकता था। उसकी ज़िन्दगी शान्ति के साथ निर्विघ्न नहीं बीत सकी। उसके बारे में स्कूलों में अजीब अफवाहें फैलाई जाने लगीं। शहर के सस्ते अख़बारों में उसके विरुद्ध शिकायतों के बेनाम पत्र छपने लगे। यह सब झूठी छीछालेदार मज़ाक के लिए नहीं, बल्कि वेइ को बदनाम करके नुक़सान पहुंचाने के लिए की जा रही थी। मैं जानता था कि वेइ ने कुछ लेख पत्रिकाओं में लिखे हैं। सोचा, यह उसी की प्रतिक्रिया होगी। इसलिए ख़ास चिन्ता नहीं की S के लोग उसका सीधा निर्भय तर्क भला कैसे सह सकते थे। ऐसा अपराध करने वाला उनके गुप्त प्रहारों से भला कैसे बच सकता था। S में ऐसी ही प्रथा थी। वेइ भी ख़ूब जानता था। जो हो, वसन्त के दिनों में जब यह सुना कि स्कूल के अधिकारियों ने वेइ से उसका त्याग-पत्र मांग लिया है, तो सच कहता हूं, मुझे बहुत आश्चर्य हुआ। हालांकि मुझे आश्चर्य नहीं होना चाहिए था, ऐसी ही आशा करनी चाहिए थी। मुझे आश्यर्च इसीलिए हुआ कि मैं आशा लगा बैठा था कि वेइ किसी तरह बचा रहेगा। S के नागरिकों के आम व्यवहार को देखते हुए यह कोई बहुत बड़ा जुर्म नहीं था।

उन दिनों मैं स्वयं भी उलझनों में फंसा था। सर्दी के आरम्भ से शानयाङ के एक स्कूल में नौकरी के लिए दौड़-धूप में लगा था। इसलिए वेइ से मिलने का अवसर नहीं निकाल पाया। तीन मास तक तो मुझे दम लेने की भी फुर्सत नहीं मिली। उसके बाद भी वेइ ध्यान से उतरा रहा और उसके यहां जाना न हो सका। एक दिन बड़े बाज़ार से गुजर रहा था। पुरानी किताबों की एक दुकान पर रुक गया। देखकर आश्चर्य हुआ—"समा छ्येन के 'ऐतिहासिक अभिलेख' की टीका"[1] का एक पुराना संस्करण बिक्री के लिए रखा था। यह पुस्तक वेइ की अलमारी में देखी थी। इतिहास से उसे ख़ास लगाव नहीं था, परन्तु पुस्तकों का वह बहुत प्रेमी था। इस पुस्तक को वह बहुत सम्भालकर रखे था। पुस्तक बेचनी पड़ गई, तो बेचारा निश्चय ही बहुत कठिन स्थिति में होगा, पर ऐसी भी आशंका नहीं थी कि नौकरी

1. इसकी रचना थाङ राजवंश (618-907) के समा चन ने की थी।

छूट जाने पर दो-तीन मास में ही ऐसी हालत हो जाए। कहा क्या जा सकता था, पैसा उसके हाथ में टिकता ही नहीं था। उसने बचाकर रखना तो सीखा ही नहीं था। उसी समय उसके घर जाने का निश्चय कर लिया। बाज़ार से शराब की बोतल, दो पैकेट मूंगफली के दाने और दो तली हुई मछलियां लीं।

वेइ के घर के किवाड़ बन्द थे। दो बार पुकारा, पर उत्तर नहीं मिला। ख्याल आया, सो न रहा हो, इसलिए और ज़ोर से पुकारा। किवाड़ों को भी ज़ोर-ज़ोर से खटखटाया।

दूसरी ओर की खिड़की से छोटी आंखों वाली किसी मोटी-सी बुढ़िया ने, जो बच्चों की दादी लगती थी, झांका और झल्ला उठी, "वह घर पर नहीं है।"

"कहां गया है?" मैंने पूछा।

"कौन जाने। अरे, जाएगा कहां? बैठना हो तो बैठ जाओ, अभी लौट आएगा।"

मैं बैठक के किवाड़ धकेलकर भीतर चला गया। जगह बिल्कुल बदल गई थी। बैठक ख़ाली और सूनी लग रही थी। बस, मेज़ और दो-तीन कुर्सियां ही रह गई थीं। अलमारियों में विदेशी पुस्तकें ही रह गई थीं, उनके ग्राहक नहीं मिले होंगे। पुरानी मेज़ फर्श पर बीचोबीच मौजूद थी, जिसे चारों तरफ़ से अपनी प्रतिभा की अपेक्षा से खिन्न, महत्त्वाकांक्षी निराश युवक और मैले-कुचैले बच्चे कभी घेरे रहते थे। बैठक में सन्नाटा छाया था। मेज़ पर धूल की झीनी-सी परत जमी थी। साथ लाई बोतल और दूसरी चीजें मेज़ पर रख दीं। एक कुर्सी खींच ली और दरवाज़े की तरफ़ मुंह करके बैठ गया।

दरवाज़ा शीघ्र ही सचमुच खुल गया और कोई आदमी बिना आहट छाया की तरह अंदर सरक आया। वह वेइ ही था। शाम के अंधेरे के कारण मैं तुरन्त पहचान न सका। उसका चेहरा काला लग रहा था, पर उस पर वही पुराना पहचाना भाव मौजूद था।

"अरे, यह तुम हो? कितनी देर से बैठे हो?" उसके होठों पर मुस्कराहट आ गई।

"देर से नहीं, अभी ही आया हूं।" मैंने पूछा, "कहां गए थे?"

"खास कहीं नहीं, ऐसे ही ज़रा घूमने-फिरने चला गया था।"

वेइ ने एक कुर्सी खींच ली और मेज़ के पास बैठ गया। मैंने बोतल

खोली। दोनों ने थोड़ी-थोड़ी पी ली। मैंने उसकी नौकरी छूट जाने के विषय में पूछा। उसने कुछ अधिक नहीं बताया, जैसे उसके लिए कोई अप्रत्याशित बात न हो। वह ऐसे कई मामले देख चुका था। कोई असाधारण बात तो थी नहीं, जिसकी वह चर्चा करता। अपनी आदत के अनुसार उसने खूब पी और समाज की समस्याओं और इतिहास के बारे में बातें करने लगा। मेरी आंखें पुस्तकों की अलमारी की तरफ़ चली गईं और "समा [illegible] 'ऐतिहासिक अभिलेख' की टीका" की याद आ गई। मुझे चारों तरफ़ बड़ी निराशा फैली जान पड़ी।

"तुम्हारी बैठक सुनसान लगती है। क्या अब उतने लोग नहीं आते?"

"कोई नहीं आता। मेरा अपना मूड भी ठीक नहीं रहता। लोग आकर क्या करेंगे। उदास आदमी के यहां परेशानी ही मिलती है। पतझड़ में कोई बाग़ में जाकर क्या करेगा।"

वेइ ने एक के बाद एक घूंट लिए और चुप हो गया। उसने अचानक मेरी तरफ़ देखकर पूछा, "तुम्हें भी अभी तक नौकरी नहीं मिली होगी?"

मैं जानता था कि शराब वेइ के दिमाग में चढ़ी हुई है और वह सुरूर में आकर ही बातें कर रहा है। फिर भी लोग उसके प्रति ऐसा बर्ताव करते हैं, यह जानकर मुझे तकलीफ़ हुई। उसे कोई जवाब देने ही वाला था कि वह चौंक उठा और मूंगफली के दाने मुट्ठी में लेकर बाहर चला गया। बाहर से बच्चों के शोर की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं।

वेइ के कमरे से बाहर जाते ही बच्चों का शोर रुक गया। मुझे लगा कि बच्चे चले गए, फिर लगा कि वेइ बच्चों के पीछे जाकर उन्हें पुकार रहा है। उसकी पुकार का कोई जवाब नहीं मिला। वेइ लौट आया। वह छाया कि तरह ख़ामोश था। मूंगफली के दाने उसने मेज़ पर रख दिए।

"अब तो ये मेरी दी हुई चीज़ें खाने से भी कतराते हैं।" वेइ ने धीमी आवाज़ में उलाहना दिया।

"तुम भी कैसे आदमी हो?" मेरे मुंह से निकल गया। मन में एक टीस-सी महसूस हुई। उसे मुस्कराहट से छिपाकर बोला, "वेइ ब्रदर, तुम तो जलने के लिए कोई-न-कोई दुख ढूंढ़ लेते हो। ऐसी बातें मन में क्यों लाते हो? वे भी तो आदमी ही हैं!"

वेइ के चेहरे पर एक फीकी-सी मुस्कराहट दौड़ गई।

मैंने कहा, "मैं पूछता हूं, तुम्हारा क्या ख्याल है? मैं या और लोग तुम्हारे यहां कभी-कभी क्या इसीलिए आते हैं कि कुछ समय काट लें या तुम्हारा समय बर्बाद करके अपना दिल बहला लें?"

"यह बात नहीं है, पर कभी-कभी मैं ऐसा भी सोचता हूं। लोग इसलिए आ जाते हैं कि ज़रा गपशप का मसाला ढूंढ़ लें।"

"तुम्हारा ख्याल ग़लत है। लोगों के विषय में तुम्हारी धारणा ठीक नहीं है। तुम तो रेशम के कीड़े की तरह अपने चारों ओर अपनी धारणाएं लपेट कर दुनिया से अलग होते चले जा रहे हो। लोगों के बारे में ऐसी धारणा बना लेना ठीक नहीं।" एक गहरी सांस लेकर मैंने कहा।

"हो सकता है, पर एक बात बताओ। मैं क्यों, किस कारण दुनिया से अलग कर रहा हूं। मैं मानता हूं कि ऐसे भले लोग भी हैं। उदाहरण के लिए मेरी दादी ही थी। मेरे शरीर में चाहे उसका ख़ून न हो, पर भाग्य मेरा भी वैसा ही है। ख़ैर, यह चिन्ता बेकार है। मैं अपने और उसके भाग्य के लिए रो-पीट भी चुका हूं।"

मुझे वेइ की दादी की मृत्यु के दिन की बातें याद आने लगीं। उस दिन के दृश्य आंखों के सामने घूम गए।

"एक बात मैं समझ नहीं पाया, तुम उस दिन इस तरह फफक कर क्यों रोने लगे थे?" मैंने सीधे सवाल किया।

"तुम दादी की शवयात्रा की बात कह रहे हो। सचमुच तुम्हें आश्चर्य हुआ होगा।" वेइ ने उठकर लैम्प जलाया, "शायद उसी घटना के कारण हम दोनों की दोस्त हो गई।" उसने अनुमान प्रकट किया, "वह वास्तव में मेरी सौतेली दादी थी। मेरे पिता की मां तो जब वह तीन साल के थे, तभी मर गई थी।" वेइ फिर अपने ख्यालों में डूब गया। प्याला उठाकर चुपचाप पीता रहा। उसी ख्याल में डूबा एक मछली भी खा गया।

"यह बात पहले मुझे मालूम नहीं थी, पर बचपन में और भी कई बातें मैं समझ नहीं पाता था। तब मेरे पिता जिन्दा थे। उस समय घर की हालत भी अच्छी थी। चंद्र नववर्ष के अवसर पर हमारे यहां पुरखों के चित्र लटकाकर उनकी पूजा बड़ी धूमधाम से की जाती थी। ख़ूब भव्य पोशाकें

पहने पुरखों के चित्र मुझे बहुत अच्छे लगते थे। उस पूजा के समय हमारी नौकरानी मुझे एक चित्र के सामने ले जाकर कहती थी, 'तुम्हारी सगी दादी यह हैं, इन्हें प्रणाम करो। इनसे प्रार्थना करो, तुम्हारी रक्षा करें, तुम्हें स्वस्थ और सफल बनाएं।' मैं समझ नहीं पाता था। मेरी दादी तो मेरे समीप ही रहती थी। यह दूसरी दादी कौन थी? पर यह सोचकर कि वह मेरी 'सगी दादी' थी, अच्छा भी लगता। मेरी वह दादी घर में मौजूद जिन्दा दादी की अपेक्षा जवान थी और काफ़ी सुन्दर भी। ज़रीदार लाल कपड़े पहने, सिर पर मोतियों जड़ा मुकुट, मेरी मां जैसी लगती थी। उसका चित्र देखने से लगता कि मेरी तरफ़ टकटकी लगाए देख रही हैं, होठों पर मुस्कराहट जान पड़ती थी। विश्वास था कि मुझे बहुत प्यार करती होगी।

"परन्तु जिन्दा दादी से भी मुझे प्यार था। दादी अक्सर खिड़की के पास बैठी सुई-धागा लिए कुछ-न-कुछ सीती रहती थी। मैं उसके सामने चाहे जितना शोर मचाता खिलंदड़ापन करता या हंसता, चाहे उसे पुकार भी लेता उसके चेहरे पर कभी हंसी नहीं आती थी। मैं सोचने लगता कि और लोगों की दादियां तो ऐसी नहीं हैं। मेरी दादी उदास रहती थी, पर दादी से मुझे प्यार ज़रूर था। धीरे-धीरे मैं दादी को भूलने लगा। कारण यह नहीं था कि मैं बड़ा हो गया था या मुझे पता लग गया था कि वह मेरी सौतेली दादी है। असली कारण यह था कि उसे सदा चुप, दिन-रात सिलाई-बुनाई में लगे देखकर मुझे उलझन होने लगती थी, मैं ऊब उठता था। दादी में कभी कोई बदलाव नहीं आया। उसकी सिलाई-बुनाई वैसे ही जारी रही। वह वैसे ही मेरी देखभाल करती रही। कभी हंसती नहीं थी और कभी मुझ पर बिगड़ती भी नहीं थी। मेरे पिता की मृत्यु हो गई, तब भी उसके व्यवहार में कोई बदलाव नहीं आया। बुरा समय था, उसके सीने-बुनने की कमाई पर ही हमारा गुजारा होता था। मेरे स्कूल में प्रवेश तक ऐसे ही चलता रहा।"

लैम्प की रोशनी कम हो गई। बत्ती भभकने लगी, तेल ख़त्म हो गया था। वेइ लैम्प में पैराफीन डालने के लिए कुर्सी से उठा। उसने किताबों की अलमारी के नीचे से टीन की एक कुप्पी निकाली।

"इस महीने पैराफीन के दाम दो बार बढ़ चुके हैं।" वेइ ने बत्ती घुमाकर ठीक की और धीरे-धीरे बोलता गया, "बड़ी कठिनाई से गुज़ारा चल

रहा था, पर दादी वैसे ही चलाती रही। स्कूल की परीक्षा पास करके मुझे नौकरी मिल गई, तो हमारी हालत थोड़ी सुधरी। पर दादी के ढंग में कोई बदलाव नहीं आया। दादी जब तक बीमार होकर खाट पर नहीं पड़ गई, वैसे ही काम करती रही।

"दादी का बुढ़ापा आराम से कट रहा था, उम्र भी उसकी बहुत काफ़ी हो चुकी थी। ऐसे में उसके लिए रोने की क्या आवश्यकता थी। उसके लिए रोने, शोक मनाने वालों की भी कमी नहीं थी। जो लोग उसका सब कुछ छीन-खसोट लेने की ताक में लगे रहते थे, वे भी रोने, शोक प्रकट करने आए।" वेइ हंस पड़ा, "ख़ैर, उस समय दादी के पूरे जीवन का चित्र सहसा मेरी आंखों के सामने घूम गया। वह खुद ही सबसे अलग होकर अकेली रह गई थी और उस अकेलेपन से दबी रहती थी। मुझे लगा, दुनिया में ऐसे लोगों की कमी नहीं। इसी बात पर मुझे रोना आ गया था। शायद इसका कारण मेरी अपनी भावुकता थी।

"तुम मुझे जो मशवरा दे रहे हो, वही बात मैं तब दादी के लिए भी सोचता था, लेकिन मेरा वह ख्याल ठीक नहीं था। जहां तक मेरी बात है, जैसे-जैसे मेरी उम्र बढ़ती गई, दादी के लिए अपनापन घटता गया…"

वेइ चुप हो गया। उसका सिर झुक गया। वह यादों में डूब गया। उसकी उंगलियों में थमी सिगरेट धुआं छोड़ती रही। लैम्प की बत्ती हवा के कारण कांपने लगी।

"ख़ैर, यह बड़ा कठिन है कि आदमी के मरने पर कोई रोने-धोने वाला न हो।" वह अपने ख्यालों में खोया बोल उठा। फिर मेरी ओर देखकर उसने कहा, "मेरा तो ख्याल है, यह बहुत कठिन है, पर सोचूंगा। जल्दी ही कोई-न-कोई उपाय करूंगा।"

"इस विषय में अपने अन्य दोस्तों से सलाह क्यों नहीं लेते? तुम्हारे और भी तो दोस्त हैं।" मैं इस बारे में खुद भी कोई उपाय नहीं सोच सकता था, दूसरों को क्या सलाह देता।

"हां, एक-दो दोस्त हैं, पर वे लोग खुद इसी उलझन में हैं…"

मैं वेइ के यहां से लौटा, तो चांद पूरा चढ़ आया था। रात उजली और ठहरी हुई थी।

चार

शानयाङ में अध्यापक का काम करना और कांटों पर चलना एक जैसी बात थी। दो महीने तक स्कूल से वेतन के नाम पर एक भी पैसा नहीं मिला। दो टाइम भोजन पा लेना भी कठिन था, सिगरेट क्या ख़रीदता। स्कूल में बहुत से अध्यापक पन्द्रह-सोलह डालर मासिक ही पा रहे थे, परन्तु वे उसी से संतुष्ट थे। बड़े जीवट के आदमी थे वे। कड़ी मेहनत से उनकी सहनशक्ति और बढ़ गई थी। उनके दुबले शरीर भले ही चलते-फिरते कंकालों जैसे थे, फिर भी सुबह से शाम तक वे काम में जुटे रहते थे। अगर कभी बीच में अधिकारी आकर टोक देते, तो वे बड़े सम्मान से बिल्कुल सीधे खड़े रहते थे। इस तरह वे लोग 'सादा जीवन उच्च विचार' के सिद्धान्त पर अमल करते थे। उन्हें देखकर मुझे वेइ की वह बात याद आ जाती, जो उसने विदाई के समय कही थी। उन दिनों उसकी हालत बहुत ख़राब थी। चेहरे पर भी परेशानी झलकने लगी थी। पुरानी सनक छूट गई लगती थी। उसे ख़बर मिल गई थी कि मैं शानयाङ जा रहा हूं। वह काफ़ी रात गए मिलने आया था। पहले तो झिझका, फिर बोला, "ख्याल रखना, मेरे लिए भी कोई काम मिल सके तो ख़बर करना। कॉपियां बना देने का ही काम मिल जाए, तो भी कर लूंगा। महीने के बीस-तीस डालर ही हो जाएं। मैं…।"

मुझे धक्का लगा। कल्पना में भी सोचा नहीं सोचा था कि वह इसके लिए भी तैयार हो जाएगा। कुछ जवाब देते नहीं बना।

"मुझे अभी और जिन्दा रहना है।"

"वहां जाकर देखूंगा, अवश्य कोशिश करूंगा।"

उस समय उसे आश्वासन दे दिया था। कभी-कभी उसकी बात याद आ जाती है, तो जान पड़ता है कि वेइ सामने ही खड़ा है। उसके शब्द कानों में गूंज जाते, "मुझे अभी और जीवित रहना है।" उसके लिए कई लोगों से बात की, परन्तु कुछ नहीं हो सका। जहां कहीं नौकरी की जगहें रिक्त होतीं, ज़रूरत से ज़्यादा प्रत्याशी पहुंच जाते। लोग कुछ न कर पाने के लिए खेद प्रकट कर देते। मैं भी कुछ न कर पाने के कारण वेइ को पत्र लिखकर खेद प्रकट कर देता। कार्यकाल समाप्त होने पर हालत और बिगड़ गई। कुछ

स्थानीय भद्र पुरुष एक पत्रिका 'विवेक' प्रकाशित कर रहे थे। इस पत्रिका में मेरे ऊपर भी आरोप लगाए जाने लगे। पत्रिका में मेरे नाम का साफ़ उल्लेख नहीं किया जाता, पर व्यंजना और संकेतों में लिखा जाता कि मैं स्कूल में 'शरारत' कर रहा हूं। वेइ को स्कूल में जगह दी जाने के लिए मेरी सिफारिश का अर्थ भी यही लगाया गया कि मैं स्कूल में अपना गुट बनाना चाहता हूं।

मुझे चुप हो जाना पड़ा। लड़कों को पढ़ाने के अलावा मैं किसी से न मिलता, न बोलता। डर बना रहता कि मेरे किसी भी शब्द या काम पर आपत्ति हो सकती है। यदि मेरी खिड़की से सिगरेट का धुआं भी उड़ता दिखाई दे जाता तो वह भी किसी 'शरारत' का संकेत समझ लिया जाता। ऐसी में वेइ के लिए मैं क्या कर सकता था? जाड़ों के बीच तक ऐसी ही हालत बनी रही।

एक दिन प्रातः से ही बर्फ़ गिरने लगी थी। शाम तक लगातार गिरती रही। ऐसा सन्नाटा था कि कानों में उसकी गूंज स्पष्ट सुनाई देती थी। कमरे में लैम्प का हलका-सा उजाला था। करने को कुछ था नहीं। मैं आंखें बंद किए बैठा कल्पना कर रहा था कि बर्फ़ की यह निरन्तर वर्षा सम्पूर्ण पृथ्वी को ढक लेगी। मेरे जन्म-स्थान में लोगों ने नए साल की पूजा की तैयारी आरम्भ कर दी होगी। सब लोग बहुत व्यस्त होंगे। कल्पना में अपना बचपन दिखाई देने लगा—पिछवाड़े के आंगन में दूसरे बच्चों के साथ खेल रहा हूं। हमने बर्फ़ का आदमी बनाया। कोयले के दो टुकड़े लेकर बर्फ़ के आदमी की आंखें बना दीं। अचानक मुझे वेइ की आंखें दिखाई देने लगीं।

"मुझे अभी जिन्दा रहना है।" वेइ का स्वर कानों में गूंजा।

"किसलिए?" मैंने प्रश्न किया। तुरन्त अपने अनुचित सवाल के लिए संकोच अनुभव हुआ।

अपनी कड़वाहट की सिहरन से मेरी आंखें खुल गईं। उठकर एक सिगरेट जला ली। खिड़की खोलकर देखा, बर्फ़ और अधिक जोर से गिर रही थी। किवाड़ों पर दस्तक सुनाई दी। किवाड़ खुले। होटल के नौकर के कदमों की जानी-पहचानी आहट थी। उसने छह इंच से भी लम्बा लिफ़ाफ़ा मेरे हाथ में दे दिया। लिफ़ाफ़े पर पता घसीट में लिखा हुआ था, पर कोने में वेइ का नाम दिखाई दे गया।

S—से चले आने के बाद वेइ का यह पहला पत्र था। मैं जानता था कि पत्र-व्यवहार में वह भद्र पुरुष ही है, इसलिए उसकी चुप्पी से मुझे कोई आश्चर्य नहीं था। अलबत्ता यह इच्छा ज़रूर रहती थी कि किसी तरह उसका कोई समाचार मिलता रहे। खैर, पत्र आने से मुझे कुछ आश्चर्य हुआ। लिफ़ाफ़ा खोलकर देखा। जल्दी में लिखा हुआ पत्र था। लिखा था :

"शन-फ़ेइ!"

"तुम्हें कैसे संबोधित करूं? स्थान छोड़ रहा हूं। जो अच्छा लगे, स्वयं लिख लेना। जो भी पसन्द करोगे, मुझे मंजूर होगा। अब तक तुम्हारे तीन पत्र मिल चुके हैं। उत्तर नहीं दे सका। कारण यह कि टिकट के लिए पैसे नहीं थे। शायद सोचते होगे कि मुझे क्या हो गया है? संक्षेप में कह दूं—मैं हार गया हूं। इससे पहले भी कई बार मुझे अपनी हार लगी थी, पर तब ऐसी बात नहीं थी। ख़ैर, अब मैं सचमुच हार गया हूं। अब तक केवल एक व्यक्ति था, जो चाहता था कि मैं जीवित रहूं। मैं भी चाहता था कि जिन्दा रहूं। अब ज़िन्दा रहने की कोई ज़रूरत नहीं है, पर अभी जिन्दा रहना पड़ेगा। सोचता हूं, जीवित क्या रहूं? जो चाहता था कि जीवित रहूं, वह स्वयं ही नहीं रह सका। शत्रुओं ने उसे घेर कर समाप्त कर डाला। उसे किसने मार डाला? कहा नहीं जा सकता।

"दुनिया कितनी जल्दी बदल जाती है! पिछले छः मास में मेरी हालत बिल्कुल भिखारी जैसी हो गई। सच मानो, कोई भी मुझे भिखारी समझ लेता, पर उसके लिए मैं कुण्ठित नहीं था—एक उद्देश्य था, तो मांग लेने में मुझे संकोच नहीं था, न भूखे-नंगे रहने में शर्म थी। उसके लिए मैं सभी कष्ट और उपेक्षा सह सकता था। किसी व्यक्ति को मेरे जीवित रहने की आवश्यकता थी, यह मेरे लिए कितनी शक्ति का कारण था, तुम खुद समझ सकते हो, पर अब ऐसी आवश्यकता किसी को नहीं है। मेरे विचार से मुझे और मेरे जैसे लोगों को भी जिन्दा रहने का कोई अधिकार नहीं है। फिर भी मैं महसूस करता हूं कि मुझे जीवित देखना न चाहने वालों के लिए ही मेरे मन में जीवित रहने की साध पैदा हुई है। कम-से-कम अब ऐसा तो कोई नहीं है, जिसे मेरे उचित रूप से जिन्दा रहने की चिन्ता हो, जिसे मेरी असफलता पर दुख हो। मैं ऐसे लोगों को दुख नहीं देना चाहता, पर अब

ऐसा कोई रहा ही नहीं। यह कितने संतोष की बात है···! और क्या चाहिए? अब मैं वही काम कर रहा हूं, जिससे पहले घृणा थी, जिसका विरोध करता था। अब मैं अपने सब विश्वासों और धारणाओं को छोड़ रहा हूं। सच, मैंने हार मान ली है, लेकिन वास्तव में मैं जीत गया हूं।

"तुम डरोगे कि मैं पागल हो गया हूं, या तुम्हारा ख्याल होगा कि मैं कोई महान् आदमी बन गया हूं? पर ऐसी बात नहीं है। बहुत सीधी-सादी बात है। मैंने जनरल तू के परामर्शदाता की नौकरी कर ली है। अस्सी डालर मासिक मिल रहा है।

"···शन-फ़ेइ, मेरे विषय में अब तुम्हारी क्या राय है? खुद ही तय कर लो, मुझे आपत्ति नहीं होगी।

"तुम्हें मेरी उस बैठक की तो याद होगी, जहां हम लोग पहली बार मिले थे और अन्तिम बार हमारी बातचीत हुई थी। वह बैठक अब भी मेरे पास है, पर अब दूसरी तरह के मेहमान आते हैं—तरक्की चाहने वाले लोग घूस लेकर आते हैं, चापलूसियां करते हैं, सलाम करते हैं। माच्याङ का खेल चलता रहता है। बोतलें खुलती रहती हैं। अजीब तरह का मूड विवशता और आजिजी दिखाई देती है। अब नींद न आने के कारण दूसरे हैं। मुंह से ख़ून भी आने लगा है।

"पिछले पत्र में तुमने लिखा था कि तुम्हारे स्कूल के काम में परेशानियां आ रही हैं। बताओ, 'परामर्शदाता' की नौकरी करोगे? तुम सिर्फ़ 'हां' कह दो, बाक़ी सब मैं देख लूंगा। दरअसल, स्वागत-कक्ष का चपरासी बनने में भी कोई हर्ज नहीं है। ऐसे ही लोग मिलने आएंगे, चापलूसियां और घूस···।

"यहां ख़ूब बर्फ़ गिर रही है, वहां मौसम कैसा है? यह पत्र आधी रात में लिख रहा हूं। अभी मुंह से कुछ ख़ून गिरा था। उसके बाद से तबीयत ठीक है। याद आया कि जाड़े के शुरू से तुम्हारे तीन पत्र आ चुके हैं, आश्चर्य की बात है। ख़ैर, तुम्हें अपना समाचार दे रहा हूं। आशा है, इससे तुम्हें आघात नहीं पहुंचेगा।

"सम्भवतः तुम्हें और पत्र न लिख सकूं। मेरी पुरानी आदत तुम जानते हो। यहां कब लौट रहे हो? अगर जल्दी आ सको, तो शायद भेंट हो जाए। अब हम दोनों के रास्ते अलग हैं। तुम मुझे भूल जाओ, यही अच्छा है। तुमने

मेरे लिए काम तलाश करने की बहुत कोशिश की, इसके लिए आभारी हूं। अब मुझे भूल ही जाओ तो अच्छा। मैं ठीक-ठाक हूं।

वेइ ल्येन-शू
14 दिसम्बर

पत्र को एक ही सांस में पढ़ गया, फिर उसे दोबारा ध्यान से पढ़ा। 'आघात' तो मुझे लगा नहीं। हां, दुख ज़रूर हुआ, पर एक चिन्ता भी मिट गई। आखिर उसे नौकरी तो मिली, कम-से-कम यह चिंता तो मिटी। उस समय कुछ और तो कर नहीं सकता था। सोचा, पत्र ही लिख डालूं, पर लिखने के लिए कुछ सूझा ही नहीं।

वेइ को मैं धीरे-धीरे भूलता जा रहा था। अब उसका चेहरा पहले की तरह कल्पना में अक्सर नहीं उभरता था। वेइ का पत्र आए दस दिन भी नहीं हुए होंगे कि स्थानीय अखबार 'S—साप्ताहिक' मेरे पते पर आने लगा। आमतौर पर ऐसे अख़बारों की ओर मैं ध्यान नहीं देता था, पर अख़बार मेरे पते पर भेजा जा रहा था, इसलिए उस पर सरसरी निगाह डाल लेता था। अख़बार के कारण वेइ की याद आ जाती थी। उसमें अक्सर वेइ के संबंध में लेख या कविताएं दिखाई दे जातीं। उदाहरण के लिए 'बर्फ़ानी रात में स्कालर वेइ से भेंट', 'परामर्शदाता वेइ के निवास पर काव्य-चर्चा', आदि-आदि। एक बार तो 'गोष्ठी' शीर्षक एक लेख में वेइ के संबंध में विचित्र प्रशंसात्मक चर्चा थी। उसकी अद्भुत प्रतिभा के वर्णन में ऐसी बातें भी निस्संकोच कह दी गई थीं, जो कुछ दिन पहले निन्दा और आरोप का कारण समझी जाती थीं, पर अब ध्वनि यह थी कि एक असाधारण प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति के अतिरिक्त इस प्रकार का व्यवहार कौन कर सकता है।

इस प्रकार के प्रसंग वेइ की याद तो ज़रूर दिला देते थे, पर उसके व्यक्तित्व की याद धुंधली होती जा रही थी। याद धुंधली हो जाने पर भी पुराना संबंध तो था ही। उसके लिए मन में बेचैनी और शंका बनी रहती। जाड़ों के आरम्भ में अख़बार मेरे पते पर आना बन्द हो गया और शानयाङ की पत्रिका में एक लम्बा लेख, 'अफवाहों में तथ्य का अंश' धारावाहिक छपना आरम्भ हो गया। लेख का भाव था कि कुछ लोगों के सम्बन्ध में विचित्र अफवाहें उच्चाधिकारियों के पास पहुंच रही हैं। लेख में दूसरों के

साथ मुझे भी निशाना बनाया गया था। मैं बहुत सावधान रहने लगा, जिससे मेरी सिगरेट का धुआं भी किसी के लिए असुविधा या खिन्नता का कारण न बने। इन चिन्ताओं में ऐसा उलझ गया कि और कुछ कर ही नहीं पाया। वेई की याद के लिए फुर्सत किसे थी? सो उसे भी भूल गया। गर्मी आते-आते नौकरी बचाए रखना असम्भव हो गया। मई के अन्त में मुझे शानयाङ से जाना पड़ा।

पांच

शानयाङ से लीछङ और थाएकू गया। छह-सात माह इधर-उधर भटकता रहा, पर नौकरी नहीं मिली। निश्चय किया कि S—ही लौट जाऊं। एक दिन दोपहर बाद वहां पहुंच गया। वसंत आरम्भ हो गया था। बादल छाए हुए थे। सब तरफ़ कोहरा फैला था। पुराने होस्टल में ही जगह मिल गई, वहीं ठहर गया। वहां आते समय वेइ की याद आई थी। होस्टल में जगह पा लेने के बाद सोचा कि शाम का खाना खाकर उसके यहां जाऊंगा। दो पैकेट वनशी-केक ले लिए। एक के बाद दूसरी अंधेरी, सीलन-भरी गलियों से चला जा रहा था। गलियों में जगह-जगह कुत्ते सोए हुए थे। उनसे बचता आखिर वेइ के दरवाज़े पहुंच ही गया। घर के अंदर बहुत तेज रोशनी दिखाई दी। सोचा, अब जनरल का परामर्शदाता बन गया है, ऐसा प्रकाश क्यों नहीं होगा! मन ही मन हंसा। खैर, ध्यान से देखा तो दरवाजे पर श्वेत कागज की पट्टी[1] चिपकी दिखाई दी। अनुमान किया, शायद बच्चों की दादी चल बसी होगी। मैं भीतर चला गया।

आंगन में प्रकाश कम था। एक तावूत रखा हुआ था। ताबूत के समीप खड़ा वर्दीधारी सिपाही या अर्दली बच्चों की दादी से कुछ बातें कर रहा था। आंगन में दो-तीन मजदूर भी दिखाई दिए। मेरा हृदय आशंका से धड़कने लगा। बुढ़िया की नज़र मुझ पर पड़ी।

"तुम आ गए? इतनी देर क्यों लगा दी?" बुढ़िया ने पूछा।

1. सफ़ेद रंग चीन में शोक का प्रतीक है। दरवाज़े पर सफ़ेद कागज़ की पट्टी लगाना होना इस बात का संकेत है कि घर में किसी की मृत्यु हो गई है।

"कौन?…क्या हुआ?" समझ तो गया, पर फिर भी पूछ लिया।

"परामर्शदाता वेइ की परसों मौत हो गई।"

मेरी नज़र बैठक की तरफ़ गई। वहां भी एक छोटे लैम्प का धुंधला-सा प्रकाश था। सामने वाले कमरे में जनाज़े की तैयारी के लिए सफ़ेद पर्दे लगे थे। बुढ़िया के पोते-पोती कमरे के दरवाज़े के पास बाहर बैठे थे।

बुढ़िया मेरी तरफ़ आ गई। सामने के कमरे की तरफ़ संकेत कर बोली, "शव वहां रखा है। वेइ साहब की तरक्की हो गई थी तो वह कमरा भी मैंने उन्हें दे दिया था। वहीं शव रखा गया है।"

शोक के लिए लटकाए गए सफ़ेद पर्दे कोरे थे, उन पर अभी कुछ भी नहीं लिखा गया था। सामने पर्दे के साथ एक लम्बी मेज़ थी, उसके साथ एक चौकोर मेज़ लगी थी। चौकोर मेज़ पर दस-बारह तश्तरियों में पकवान परोसे हुए थे। कदम अंदर रखा ही था कि लम्बे सफ़ेद चोगे पहने हुए दो आदमियों ने बढ़कर मेरा रास्ता रोक लिया। दोनों की आंखें किसी मरी हुई मछली के समान बुझी हुई थीं। वे शक और आश्चर्य से मेरी ओर देख रहे थे। मैंने वेइ से अपना संबंध बताया। बुढ़िया ने आकर मेरा समर्थन किया। मुझे रास्ता दे दिया गया कि मृतक के सम्मान में समीप जाकर प्रणाम कर लूं।

मृतक को प्रणाम करने के लिए गर्दन झुकाई ही थी कि कमरे में रोने की आवाज़ सुनाई दी। दस साल का लड़का चटाई पर घुटने टिकाए बैठा था। लड़का भी सफ़ेद चोगा पहने हुए था। उसके सिर के बाल बारीक कटे हुए थे। बालों पर सूखी सनई के रेशे लिपटे थे।

कमरे में खड़े आदमियों में से एक वेइका रिश्ते का भाई था और दूसरा कोई दूर का संबंधी। उन लोगों से मैंने अनुरोध किया कि एक बार वेइ को देख लेने दो। दोनों ने टाल देना चाहा—तकलीफ क्यों करते हैं, आपकी बहुत कृपा है, व्यर्थ में कष्ट न कीजिए—मैंने आग्रह किया, तो शव पर से पर्दा हटा दिया गया।

बेजान वेइ मेरे सामने पड़ा था। उसके शरीर पर मैली कुचैली कमीज़ थी। कमीज़ पर ख़ून के दाग़ थे। चेहरा बहुत दुबला हो गया था, परन्तु चेहरे पर वही पुराना भाव झलक रहा था। पलकें और होंठ बन्द थे, गहरी नींद

में सोया लगता था। मौत का कोई निशान न था। मन में आया कि उसकी नाक पर हाथ रखकर देखूं कि सांस बन्द है या नहीं।

कमरे में मौत का सन्नाटा भर गया। मृतक और जीवित सभी स्थिर और निश्चल थे। मैं कमरे से निकलने लगा, तो वेइ का रिश्ते का भाई मेरे पास आ गया और मुझे संबोधित करते हुए बोला, "अभी आयु ही क्या थी। भरी जवानी में ही चले गए। अब तो सफलता और उन्नति का अवसर आया था। हम ग़रीबों पर बिजली गिर गई। दोस्तों को भी कितना दुख हुआ है।" वह ऐसे बात कर रहा था, वेइ की मृत्यु पर उसकी ओर से क्षमा मांग रहा हो। देखने में देहाती लगता था, पर चकित करने वाली वाक्चतुराई दिखा रहा था। एक गहरी सांस लेकर वह ख़ामोश हो गया। कमरे में मृत्यु की सुनसानी छा गई, जीवित भी मृतक की तरह सन्नाटे में थे।

मैं बुढ़िया से बात करने के लिए आंगन में लौट आया। मन पर ग़म का बहुत बोझ न होने पर भी उदासी छाई थी। बुढ़िया ने बताया कि मिट्टी जल्दी ही उठाई जाएगी। कफन के लिए आदमी कपड़ा लेने गया है। शव ताबूत में बन्द किया जाएगा। उस समय अनिष्ट राशि के लोगों का यहां ठहरना ठीक नहीं। बुढ़िया एक सांस में बोलती चली जा रही थी—वेइ की बीमारी, उसके जीवन की कई घटनाएं, वेइ की आलोचना और स्तुति—बुढ़िया बताती ही चली जा रही थी।

"तुम देखो, उसके दिन फिरे तो बिल्कुल बदल गया था। बहुत घमंड हो गया था। इतनी हेकड़ी कि पूछो मत। किसी से सीधे मुंह बात भी नहीं करता था। दिमाग में कुछ झक्कीपन भी आ गया था। तुम जानते हो, पहले मेरी बहुत इज़्ज़त करता था, लेकिन अब तो गाली तक दे देता था," बुढ़िया ने मुस्कराकर कहा, "कुतिया भी कह देता। जो मुंह में आता बक देता। लोग कैसे-कैसे तोहफे भेजते थे, सब गली में बांट देता। लोग डाली में केसर के फूल तक दे जाते, तो खाता ही नहीं था। आंगन में फेंक देता और कहता, 'ए कुतिया, तू ले जा!' बड़ा आदमी बन गया था। बीसियों आदमी मिलने आते। इसलिए मैंने साथ वाला कमरा भी उसके लिए खाली कर दिया। स्वयं पीछे की कोठरी में चली गई। लोग कहते हैं, वक्त बदलता है, तो आदमी भी बदल जाता है। तुम महीना-भर पहले आते, तो रंग देखते। रोज बोतलें खाली होती थीं, गाना-बजाना, हंसी-ठट्ठा शे'र-शायरी, माच्याङ-ताश,

क्या-क्या रंग थे भला···"पहले बच्चों से बहुत घबराता था। बच्चे उससे क्या डरते, वही डर जाता था, जैसे बाप सामने आ गया हो, पर अब यह बात नहीं थी। अब तो बच्चों से ख़ूब हंसने-बोलने लगा था। मेरे पोते-पोती तो उसे घेरे ही रहते थे। जब चाहते, उसके कमरे में घुस जाते। बहुत मज़ाक करता, बच्चे कोई चीज़ मांगते, तो उनसे बहुत खेल कराता। कभी कहता कुत्ते-बिल्ली की बोलीं बोलो, कभी धरती पर नाक से लकीरें खिंचवाता। बहुत हंसोड़ा था। दो महीने पहले मेरे छोटे पोते ने उससे कहा, बाज़ार से जूता दिलवा दो। बच्चे से तीन बार धरती पर नाक रगड़वाई, पर जूता बढ़िया दिलवा दिया। अब भी पांव में है।"

सफ़ेद चोगा पहने एक आदमी कमरे से आंगन में आ गया। बुढ़िया चुप रह गई। मैंने वेइ की बीमारी के बारे में पूछा। बुढ़िया को कुछ ज्यादा मालूम नहीं था, बोली, "ऐसे ही बहुत दिनों से दुबला होता जा रहा था, पर किसी ने कुछ ध्यान नहीं दिया। बहुत हंसता-खेलता रहता था। एक महीना पहले सुना कि खांसी में ख़ून आने लगा है। पर डॉक्टर के पास नहीं गया। फिर एकदम खाट पर पड़ गया। मरने से तीन दिन पहले मुंह से बोल भी नहीं पाता था। उसका रिश्ते का भाई लम्बा फासला तय करके यहां आ पहुंचा। उसने पूछा कि कहीं पैसा जमा है कि नहीं, पर वह एक शब्द भी नहीं बोला। तभी रिश्ते का भाई कहने लगा कि बहाना कर रहा है, जानबूझकर नहीं बोलता, पर लोग बताते हैं कि टी.बी. की बीमारी से मौत होती है, तो बोली बंद जाती है।"

"पर वेइ भी एक ही सनकी आदमी था," बुढ़िया फिर फुसफुसा उठी, "रुपया पानी की तरह बहाता था, कभी कुछ नहीं बचाया। उसके भाई को विश्वास ही नहीं होता, समझता है कि उसका पैसा मैंने दबा लिया है। हमने एक पैसा भी लिया हो, तो भगवान जानता है। उसकी आदत ही पैसा फेंकने की थी। आज कुछ ख़रीद लिया, कल बेच दिया, नहीं तो तोड़कर फेंक दिया। भगवान जाने क्या करता था। मरा तो पास में कुछ भी नहीं था, नहीं तो ख़ूब सज-धज से जनाज़ा उठता।

"दिमाग ठिकाने नहीं रहा था। किसी बात में कोई तरीक़ा नहीं था। हमें तो यह अच्छा नहीं लगता था। कई बार समझाया भी। जवान था, ब्याह किया होता, तो ऐसी हालत क्यों होती, अच्छे घर की लड़की नहीं मिल रही

थी, तो पैसा देकर एक-दो रखैलें ही ले आता। भले आदमियों को कायदे से रहना चाहिए। हमने तो कई बार समझाया, पर बात हंसी में उड़ा देता था। बकने लगता था, 'अरी कुतिया, तुझे क्या? तुझे पड़ोसियों से क्या मतलब? तू अपनी चिंता कर।' बड़ा झक्की था। किसी की सुनता ही नहीं था। हमारे कहने पर चलता, तो यह हालत क्यों होती। कोई पानी देने वाला भी नहीं था। घर, बसाया होता, तो आज दस-पांच रोने वाले तो होते।"

आदमी शव के कपड़े लेकर आ गया। वेइ के तीनों संबंधी कपड़े लेकर पर्दे के पीछे चले गए। एक मिनट बाद पर्दा हटा दिया गया। वेइ को कपड़े पहना दिए गए थे। अब संबंधी उसके शरीर पर ऊपरी कपड़े पहना रहे थे। मुझे बहुत अचरज हुआ। वेइ को खाकी फौज़ी पतलून पहनाई गई। पतलून पर चौड़ा लाल फीता लगा था। खाकी कोट पर चमचमाते हुए बिल्ले थे। मगर यह नहीं जान पाया कि उसे कौन-सा ओहदा मिल गया था और कैसे मिल गया था। शव को फौज़ी वर्दी पहनाकर ताबूत में लिटा दिया गया। बड़ा अजीब-सा लग रहा था। उसके पैर के पास चमड़े का बादामी जूता भी रखा था। कमर में काग़ज़ की तलवार बांध दी गई थी। मुर्झाए पीले चेहरे के पास सुनहरी गोट लगी फौजी टोपी भी रख दी थी।

तीनों संबंधी ताबूत के पास खड़े होकर रोए, फिर चुप होकर आंखें पोंछ लीं। मुंडाए हुए सिर पर सनई लपेटे लड़के को और बुढ़िया के छोटे पोते को वहां से हटा दिया गया। अनिष्ट करने वाली राशि के रहे होंगे।

मजदूरों ने ताबूत का ढक्कन उठाया। मैं वेइ को अंतिम बार देखने के लिए लेने आगे बढ़ा। वेइ उस विचित्र पोशाक में निश्चल लेटा था। पलकें बंद थीं। मुझे उसके चेहरे पर अब भी एक व्यंग्यपूर्ण मुस्कराहट दिखाई पड़ी, जैसे खुद अपनी बेढंगी लाश पर मुस्करा रहा हो।

ताबूत पर ढक्कन रखकर कीलें जड़ी जाने लगीं, तो विलाप फिर आरम्भ हो गया। मुझसे यह सब देखा न गया और आंगन में चला आया। आंगन से मेरे क़दम दरवाज़े की ओर बढ़ गए। सड़क पर आ गया। वर्षा से भीगी हुई सड़क चमक रही थी। आंखें उठाकर आसमान की तरफ़ देखा, बादल फटकर बिखर गए थे। बादलों से घिरे नीले आसमान में पूनम का चांद ठहरा हुआ था। ठंडी चांदनी बरस रही थी।

मैं तेजी से कदम बढ़ाते हुए चल दिया, जैसे सामने खड़ी किसी भारी रुकावट को चीरता हुआ निकल जाऊंगा, पर संभव न हो पाया। कानों में एक गूंज-सी भर गई। बहुत देर तक बेचैन रहा। फिर एक विस्फोट-सा सुनाई पड़ा, एक चिंघाड़-सी सुनाई पड़ी, जैसे अंधेरी रात में दूर घने जंगल में कोई घायल भेड़िया चिंघाड़ रहा हो, पीड़ा और क्रोध से भरी चिंघाड़।

दिल से एक बोझ-सा उतर गया। मैं चांदनी में चमकती सड़क के भीगे पत्थरों पर एक-एक क़दम चुपचाप चलता चला जा रहा था।

अतीत का अवसाद

च्वान-शङ की नोटबुक से

चाहता हूं कि जैसे भी बन पड़े अपने अवसाद और दुख की कहानी च-चुन की याद में और अपना मन हलका करने के लिए भी लिख डालूं। होस्टल के उपेक्षित करने में यह गंदी कोठरी कितनी सूनी और वीरान है! समय कैसे उड़ता चला जाता है! पूरे एक साल पहले हमारा प्रेम शुरू हुआ था। उसका प्रेम इस वीरानी और सूनेपन में मेरा एकमात्र सम्बल था। मेरा दुर्भाग्य है कि लौटकर आया, तो फिर सिर्फ़ यही कोठरी खाली मिली। फिर वही टूटी खिड़की और खिड़की के बाहर लोकस्ट का सूखा पेड़ और वही पुरानी विस्तारिया की बेल। कोठरी में की चौकोर मेज तथा सब कुछ वही था। फिर वही सीलन से गिरे हुए पलस्तर की दीवारें, वही ढीला और चरमराता तख्त। इस कोठरी में उसी तख्त पर अकेला पड़ा रात की सूनी घड़ियां बिता देता हूं। च-चुन का प्रेम पाने से पहले यही हालत थी। बीच में बीते एक साल का कहीं कोई निशान या इशारा नहीं है, जैसे मैं इस गंदी कोठरी को छोड़कर कहीं गया ही नहीं, जैसे मैंने अनंत आशाएं और उत्साह लेकर चीचाओ वाली गली में कभी भी अपना छोटा-सा घरौंदा ही नहीं बसाया हो।

इतना ही नहीं। यह सूनापन और वीरानी इस कोठरी में साल-भर पहले भी ज़रूर थी, परन्तु तब कुछ फ़र्क़ था। तब आशा और प्रतीक्षा का सहारा था। च-चुन के आने की प्रतीक्षा में अधीरता से घंटों कान लगाए बैठा रहता था। ईंट के फ़र्श पर ऊंची एड़ी की ठक-ठक सुनकर मेरे ख़ून में बिजली-सी दौड़ जाती थी। च-चुन का प्यारा पीला गोल चेहरा सामने आ

जाता। उसके गालों पर मुस्कराहट के गढ़े बने रहते, गोरी-गोरी दुबली बाँहें, धारीदार सूती कपड़े का ब्लाउज़ और काली छोटी स्कर्ट। च-चुन लोकस्ट के सूखे पेड़ से कोई नया पत्ता या विस्तारिया की बेल से जामुनी फूलों का गुच्छा लिए होती। विस्तारिया की बेल बहुत बूढ़ी हो गई थी। उसका तना सूखकर लोहे जैसा काला और भूरा हो गया था। पर अब तो वही पुराना सन्नाटा और वीरानी है। च-चुन अब कभी भी नहीं आएगी।

जब च-चुन न होती, तो उस गन्दी कोठरी में मेरे लिए अंधेरा हो जाता। खिन्नता से मुक्ति पाने के लिए मैं कोई पुस्तक उठा लेता। वह साहित्य की हो या विज्ञान की। मैं पढ़ने लगता। दस-बारह पृष्ठ पढ़ लेने पर सोचना पड़ता, क्या पढ़ा? एक भी शब्द समझ में नहीं आता था। मेरी सारी सुध-बुध कानों में ही समाई रहती। सड़क पर आते-जाते लोगों के पैरों की आहट कानों में गूंजती रहती। च-चुन के पैरों की आहट पहचान लेने की प्रतीक्षा में रहता। प्रायः च-चुन के पैरों की आहट पहचान लेता। लगता, उसके पैरों की आहट पास आ रही है। वह पहले तो अधिक साफ़ सुनाई देती, फिर क्षीण होते-होते अनेक पैरों की आहटों में डूब जाती। होस्टल के नौकर के लड़के के पैरों की आहट से मुझे बहुत परेशानी होती। लड़का कपड़े के तले वाला जूता पहनता था। उसके पैरों की आहट बिल्कुल भिन्न थी। साथ ही चेहरे पर क्रीम-पाउडर थोपपे रखने वाले इस नखरीले लड़के से मुझे सख़्त नफ़रत थी। वह च-चुन जैसे ही चमड़े के जूते पहनता था। उसके पैरों की आहट से च-चुन के पैरों का धोखा हो जाता।

मैं प्रतीक्षा में बेचैन हो जाता। क्यों नहीं आई? उसकी रिक्शा को तो कुछ नहीं हो गया? या रास्ते में किसी मोटर से टकरा तो नहीं गई?

अधीर होकर उसे ढूंढने के लिए चल देने को तैयार हो जाता। टोपी खूंटी से उतार लेता, पर उसके चाचा का ख्याल आ जाता, तो ठिठक जाता। उसके चाचा ने गाली देकर मेरा अपमान किया था।

सहसा च-चुन के पैरों की आहट सुनाई पड़ जाती। आहट पास आती जाती। प्रत्येक क़दम अधिक पास आता लगता। उसके स्वागत के लिए कोठरी से बाहर निकल रहा होता कि च-चुन विस्तारिया की बेल के नीचे पहुंच जाती। उसके गालों पर मुस्कराहट से गढ़े बन जाते। चाचा के घर में शायद उसे इतना ज़्यादा कष्ट नहीं था। मेरा उतावलापन शान्त हो जाता।

कई क्षण हम दोनों ख़ामोश एक दूसरे को अपलक देखते रहते। गन्दी कोठरी मेरे शब्दों से गूंजने लगती, पारिवारिक बन्धनों के अत्याचार, रूढ़ियों और परम्पराओं को तोड़ डालने की ज़रूरत, औरत-मर्द की समानता, इब्सन, टैगोर और शैले···। च-चुन गर्दन झुकाकर हां कह देती। उसके चेहरे पर मुस्कराहट आ जाती, आंखों में शैशव का आश्चर्य चमकने लगता। कोठरी की दीवार पर मैंने एक पत्रिका से काटकर शैले का चित्र टांग दिया था। चित्र बहुत अच्छा था। एक बार चित्र की ओर उसका ध्यान दिलाया। उड़ती नज़र चित्र पर डालकर उसने गर्दन झुका ली। उसे कुछ असुविधा अनुभव हुई। कुछ पुराने संस्कार अभी तक च-चुन के दिल पर जमे हुए थे। ख़्याल आया कि उस चित्र के बजाय शैले का दूसरा कोई चित्र, पानी में डूबे शैले की मृत्यु का चित्र, या इब्सन का चित्र वहां टांग दूं, पर चित्र को बदल ही नहीं पाया। अब तो वह चित्र भी नहीं रहा।

"मैं जो चाहूंगी, वही करूंगी। उन्हें मेरे मामले में बोलने का कोई उस हक़ नहीं।" च-चुन ने कुछ देर विचार में डूबे हुए और मौन रहकर कह दिया।

उसने अपना निर्णय गम्भीरता, दृढ़ता और स्पष्ट रूप से प्रकट कर दिया था। हम उसके चाचा और पिता के बारे में बात कर रहे थे। पिता दूर गांव में रहता था, चाचा शहर में था। छह महीने में हम दोनों एक-दूसरे को बड़ी अच्छी तरह समझ गए थे। च-चुन से मैंने कोई बात छिपाई नहीं थीः अपने विचार, अपनी बीती हालत, अपने दोष, कुछ भी उससे छिपाया नहीं था—च-चुन सब जानती थी। उसका यह निर्णय सुनकर मेरा मन सिहर उठा। उसके शब्द कई दिनों मेरे कानों में गूंजते रहे। अपने उस उत्साह और सुख का वर्णन करने के लिए मेरे पास सही अक्सर शब्द नहीं हैं। मैं अपनी आंखों से देख रहा था कि चीन की औरत अब असहाय और अबला नहीं रही। यह निराशावादियों का भ्रम था। विश्वास था कि चीन की औरत भविष्य में समाज को अपनी शक्ति का पूरा चमत्कार दिखा देगी।

च-चुन को विदा करने जाता, तो हमेशा उससे कुछ कदम पीछे चलता। जब भी हम बाहर जाते, पड़ोस की खिड़की में एक बूढ़े का चेहरा कांच के पीछे दिखाई देता। बूढ़े की नाक कांच पर दबकर चपटी हो जाती और दोनों ओर दबी मूंछें फैलकर चिपक जातीं, जैसे कोई मछली कांच पर

चिपका दी हो। दूसरे आंगन में खिड़की के पीछे उस लड़के का क्रीम-पाउडर थुपा चेहरा दिखाई दे जाता। च-चुन को इनकी ज़रा भी परवाह नहीं थी। वह निडर गर्दन उठाए चली जाती। मैं भी गर्व के साथ लौट आता।

"मैं जो चाहूंगी वही करूंगी। उन्हें मेरे मामले में बोलने का कोई हक़ नहीं।" च-चुन का निश्चय साफ़ और दृढ़ था। इस बारे में वह मेरे से अधिक मज़बूत थी। उसे न चेहरे पर क्रीम-पाउडर वाले लड़के का और न कांच पर नाक चिपकाए छिपकर ताक-झांक करने वाले का डर था।

मैंने किन शब्दों में अपने दिल का पवित्र प्रेम च-चुन को अर्पित किया था, याद नहीं कर पाता हूं। अब क्या, उस समय भी, कुछ समय पश्चात भी, यह बता सकना मुश्किल था कि मैंने किन शब्दों में अपने भावों को उसके सामने प्रकट किया था। उसी रात जब मैं दिन की घटना याद कर रहा था, तो अपने शब्दों को पूरा याद नहीं कर पा रहा था। कोई-कोई और आधी अधूरी बातें ही याद आ रही थीं। हम एक साथ रहने लगे। महीना-भर या दो मास बीते होंगे कि हमारी बातें पुराने मधुर सपने की तरह बिल्कुल धुंधली हो गईं। हां, यह मुझे अब भी याद है कि च-चुन से मंज़ूरी पाने के लगभग दो सप्ताह पहले मैं निरन्तर यही सोचता रहा कि क्या करना होगा, क्या कहना होगा; और यदि मेरा प्रणय-निवेदन अस्वीकार कर दिया गया, तो कैसा व्यवहार उचित होगा, पर समय आने पर वह विचार व्यर्थ ही रहा। उस समय उत्तेजना में, बिना सोचे वही कर बैठा, जो अक्सर सिनेमा के पर्दे पर दिखाई देता है। बाद में उस व्यवहार की याद से शर्म भी आती, पर उसकी याद अब भी स्पष्ट है। आज भी वह स्मृति मेरे अंधेरे जीवन की कोठरी में इकलौता प्रकाश है। च-चुन का हाथ मेरे हाथ में था, मेरी आंखों में आंसू थे। मैंने एक घुटना टिका दिया था।

च-चुन ने क्या कहा, या किया था, वह याद में बहुत दूर पीछे चला गया है और धुंधला गया है। बस, इतना याद है कि उसने मेरा प्रणय-निवेदन स्वीकार कर लिया था। च-चुन का चेहरा सहसा बिल्कुल पीला पड़ गया था, फिर धीरे-धीरे उस पर गुलाबीपन आने लगा और थोड़ी देर में उसका चेहरा लाली से दमक उठा। च-चुन के चेहरे पर उस तरह की लाली फिर कभी नहीं दिखाई दी। उस क्षण से पहले भी वैसी आभा कभी नहीं दिखाई दी थी। उसके शिशु के समान सरल नयनों में दुख, खुशी और डर एक साथ प्रकट

हो जाने के लिए उतावले थे। वह मीठे संकोच में आंखें चुराए हुए थी। जगता था, मीठी बेचैनी की गहराई में वह खिड़की से उड़ जाना चाहती है। तब अनुभव किया कि उसने स्वीकार कर लिया है। मगर किन शब्दों में, इसे समझ नहीं सका। कुछ बोली भी थी, या नहीं, कहा नहीं जा सकता।

परन्तु च-चुन को उस दिन की बात का सब कुछ, एक-एक शब्द याद था। वह मेरे मुंह से निकला एक-एक शब्द सुना देती। मेरी प्रत्येक भंगिमा या संकेत की सिलसिलेवार याद दिला देती, जैसे उसने यह सब बहुत एकाग्रता से याद कर लिया हो। उसके मुंह से सुनकर लगता, जैसे अपना व्यवहार सिनेमा के पर्दे पर दिखाई दे रहा हो। उसमें भी वही सब कुछ था जो किसी फ़िल्म में होता है। उसे देखकर अपने आप पर शर्मिंदगी लगती। मैं उसे भूल जाना चाहता था। रात के एकान्त में हम वे बातें याद करने लगते। च-चुन पूछ बैठती, 'बताओ, तब तुमने क्या कहा था? याद है, तुमने क्या किया था?' मैं बताने लगता। च-चुन याद दिलाती जाती। मैं एक अयोग्य छात्र की तरह कितनी ही बातें भूल जाता।

धीरे-धीरे उन स्मृतियों की चर्चा कम होने लगी। कभी बहुत दिन बाद ही ये बातें करते, पर जब भी च-चुन कल्पना में डूबी, शून्य में नज़रें गड़ाए रहती, उसके गालों पर दबी मुस्कराहट से गढ़े बन जाते। मैं समझ लेता, वह मन-ही-मन वही पुराना पाठ दोहरा रही है। मुझे शर्म अनुभव आने लगती कि वह यादों की फ़िल्म पर मेरे उसी हास्यास्पद व्यवहार को देख रही है, निश्चय ही वही देख रही है, बार-बार उसे ही देखना चाहती है।

मुझे उस व्यवहार की याद से शर्म लगती थी, पर च-चुन को उसमें ऐसी कोई बात नहीं लगती थी। मुझे वह व्यवहार हास्यास्पद जान पड़ता, उसकी याद से संकोच होता, पर च-चुन को उसमें वैसी कोई बात नहीं लगती थी। मैं इसका कारण भी समझ सकता था, च-चुन का मेरे लिए अनुराग साफ़ और बिना रुकावट के था।

पिछले साल वसंत के आखरी दिनों में हमारा सुख चरम पर पहुंच गया था। तब हम बहुत व्यस्त थे। मेरा मन भी उतना बेचैन नहीं था। अलबत्ता कभी-कभी कुछ शंकाएं सिर उठाने लगतीं। हम साथ-साथ घूमने भी जाने लगे। कई बार घूमने के लिए पार्क की तरफ़ चले जाते, पर अक्सर अपने लिए घर की खोज में ही जाना पड़ता। सड़क पर कौतूहल भरी निगाहों,

व्यंग्य भरी मुस्कराहटों और भद्दी छींटाकशी की आशंका मन में बनी रहती। मेरे व्यवहार में किसी प्रकार का संकोच या डर प्रकट न हो, इसके लिए मैं सावधानी बरतता। कदम-कदम पर स्वाभिमान और साहस को जगाता रहता। च-चुन बिल्कुल निडर थी। उसे इन तमाम बातों की कोई आशंका या परवाह न थी। वह बिल्कुल निर्द्वन्द्व व शांत होकर चलती रहती, जैसे सड़क पर और किसी का अस्तित्व ही न हो।

घर मिल जाना मामूली बात नहीं थी। लोग अक्सर किसी-न-किसी बहाने टाल देते। कहीं सीधे कह देते, 'ऐसे लोगों को कौन घर दे?' शुरू में तो कई घर हमें ही पसन्द नहीं आए। यह नहीं कि हम किसी बहुत ही अच्छी जगह की तलाश में थे। दरअसल अधिकांश घर रहने योग्य ही नहीं थे। आखिर थक कर तैयार हो गए कि जैसी भी, जो भी जगह मिल जाए ले लेंगे। बीस-बाईस घर देख लेने के बाद गुजारे योग्य जगह मिल सकी। चीचाओ वाली गली में एक छोटे से मकान में दो कमरे मिल गए। दरवाजा उत्तर की तरफ़ था। घर का मालिक छोटा सरकारी नौकर था, पर आदमी समझदार था। बीच के और दूसरी तरफ़ के कमरे में उसका अपना परिवार रहता था। परिवार में पत्नी और कुछ महीने की एक बच्ची थी। एक गांव की नौकरानी भी थी। यदि बच्ची न रोए तो शान्ति रहती थी।

घर में खाट, मेज़-कुर्सी, स्टूल कुछ तो चाहिए ही था। जेब में जो कुछ बचा था, उससे पूरा नहीं पड़ा। च-चुन ने अपनी सोने की अंगूठी और कान के बुंदे बेच दिए। मैंने उसे बहुत रोका, पर वह जिद करने लगी, तो मुझे मान जाना पड़ा। मैं उसकी भावना को समझता था। वह हमारे नए घर में अपना हिस्सा भी डालना चाहती थी, नहीं तो उसे तसल्ली न होती।

अपने चाचा से च-चुन का झगड़ा हो गया। चाचा इतना नाराज हो गया था कि उसने कह दिया, 'जाओ, हमारा तुमसे कोई वास्ता नहीं।' मेरे कई दोस्त इस बात से नाराज हो गए थे कि मैंने उनकी राय नहीं मानी। उनका ख्याल था कि मैं पछताऊंगा, या उनके मन में जलन थी। लोगों की इस उपेक्षा के कारण घर में और अधिक शान्ति फैल गई। दफ्तर से काफ़ी देर में सूर्य डूबने के बाद ही छुट्टी मिलती थी। रिक्शावाला भी मेरी मर्ज़ी से रिक्शा नहीं दौड़ा पाता था। फिर भी मिलन की घड़ी आ ही जाती थी। दोनों कई पल तक मौन आंखें मिलाए एक-दूसरे को देखते रहते। कुछ देर

आत्मीयता से बातचीत होती और फिर गर्दन झुकाए पास-पास एक-दूसरे में खोए, ख़ामोश बैठे रहते। उसकी कोई भी बात या भंगिमा मेरे लिए अपरिचित नहीं थी। तीन सप्ताह के साथ के जीवन में हमारे बीच बचे-खुचे अदृश्य अंतर और व्यवधान भी मिट गए। पहले इन अन्तरों व व्यवधानों का कोई आभास ही नहीं था, पर तजुर्बे से जान गया कि ये अन्तर और व्यवधान मामूली नहीं हैं।

कुछ ही दिनों में च-चुन और भी अधिक खुश दिखाई देने लगी। उसे फूलों का शौक़ नहीं था। मैं मेले से फूलों के दो गमले ले आया था। चार दिन बाद देखा, गमले कोने में वैसे ही पड़े थे। उनमें पानी नहीं दिया गया गया था। अतः पौधे मुर्झा गए। सारे कामों की तरफ़ ध्यान दे सकने का समय मेरे पास नहीं था। अलबत्ता च-चुन को पशु-पक्षी पालने का बड़ा शौक था। हो सकता है, यह शौक घर मालकिन के उदाहरण से जागा हो। अभी एक मास भी नहीं बीता था कि च-चुन चार चूजे ले आई। हमारे चूजे घर मालकिन के एक दर्जन चूजों में मिलकर आंगन में दाना चुगते। दोनों औरतों को अपने-अपने चूजे पहचान लेने में कोई परेशानी या उलझन नहीं होती थी। फिर एक छोटा-सा चितकबरा पिल्ला भी आ गया। च-चुन मेले से लाई थी। पिल्ले का नाम तो पहले भी रहा होगा। च-चुन ने नया नाम रख दिया—आ स्वेइ। मुझे नाम खास जंचा नहीं, पर मैं भी उसे इसी नाम से पुकारने लगा।

यह आवश्यक है कि प्रेम का सोता बहता रहे, प्रेम का विकास होता रहे, वह प्रतिफलित भी होता रहे, यह बात मैंने च-चुन से कही, तो उसने सोचकर हामी में गर्दन झुका ली।

हमारी शामें कितनी सुखदायक व संतोषभरी थीं! सुख-शान्ति को चिरस्थायी बना सकने के लिए उनका बढ़ना और पोसना होता रहना चाहिए। जिन दिनों हम होस्टल में थे, तो कभी-न-कभी आपस में मतभेद का या एक दूसरे की स्थिति या बात को ठीक से न समझ सकने का अवसर आ ही जाता था, लेकिन चीचाओ वाली गली में जगह मिल गई, तो हमारे बीच ऐसे मामूली मतभेद भी समाप्त हो गए। शाम के वक़्त हम लैम्प के प्रकाश में पास बैठे पुरानी बातों की चर्चा कर लेते और आपस के मामूली

झगड़ों के समाप्त हो जाने के बाद अटूट एकता के सुख का रसास्वादन करते।

च-चुन का शरीर भरने लगा। गालों पर लाली आ गई, पर वह सदा की गृहस्थी के काम में उलझी रहती। उसे कुछ देर बैठकर बात करने की भी फुर्सत नहीं रहती, बैठकर कुछ पढ़ने या सैर के लिए बाहर जाने की तो बात ही छोड़ो। हम सोचने लगे कि नौकरानी रख ली जाए, तो ही ठीक होगा।

एक और बात से मेरा मन खिन्न हो जाता। शाम के समय दफ्तर से घर लौटकर देखता, च-चुन अपनी थकावट और उदासी छिपाने का प्रयत्न कर रही है। मेरा दिल रखने के लिए वह मुस्कराने का प्रयत्न करती, तो मेरे लिए और भी असह्य हो जाता। यह तो ठीक था कि मैं उसकी उदासी का कारण जान गया। घर मालकिन से उसकी कुछ कहा-सुनी हो जाया करती थी। झगड़े का कारण चूजे थे। पर मुझसे यह बात छिपाने की क्या तुक थी? सोचा, अपना अलग घर हो, तभी चैन मिल सकता है। ऐसे में गुजारा संभव नहीं।

मेरी दिनचर्या निश्चित थी। सप्ताह में छह दिन नियमित रूप से दफ्तर जाता और शाम के समय लौटता। दफ्तर में अपनी मेज़ पर बैठकर सरकारी कागजात और पत्रों की कॉपियां बनाना पड़ती थीं। घर लौटकर गृहस्थी के कामों में भी कुछ सहायता कर देता। चूल्हा जलाने, चावल पकाने, या रोटी सेंक लेने में हाथ बटाता। खाना बनाने का काम मैं सीख ही गया था।

च-चुन में रसोई बनाने की खास योग्यता नहीं थी, पर अपनी ओर से वह अच्छा खाना बनाने में कुछ भी उठा नहीं रखती थी। भोजन होस्टल की अपेक्षा कहीं अच्छा मिल रहा था, पर इसके लिए च-चुन को भारी चिन्ता और कड़ी मेहनत का बोझ उठाना पड़ता था। उसके प्रयत्नों का कुछ अंश मेरे हिस्से में भी आता था, सुख-दुख के साथियों के लिए यह स्वाभाविक और उचित भी था। गृहस्थी का बोझ च-चुन के लिए साधारण नहीं था। बेचारी पसीना से तर हो जाती। माथे पर बिखर आए बाल पसीने से चिपके रहते। दिन-भर काम में लगे रहने से हाथ सख्त होने लगे थे।

च-चुन को चूजों और पिल्ले को चुगाने-खिलाने की भी चिन्ता रहती थी।···इस बारे में उसे किसी दूसरे का भरोसा नहीं था।

एक दिन मैंने कह ही दिया—'गृहस्थी और रसोई के बोझ में तुम अपने आपको पीसे डाल रही हो। इससे तो बिना खाए रहना अच्छा। वह मेरी ओर मौन देखती रह गई। उसके नयनों में डर था। मुझे हार मान लेनी पड़ी। च-चुन गृहस्थी के बोझ में उसी तरह पिसती रही।

आखिर एक दिन गाज गिर ही पड़ी। बहुत समय से इसकी शंका थी। दसवें मास की दसवीं तारीख़ के उत्सव से पूर्व की शाम थी। च-चुन शाम के नाश्ते के बाद बर्तन मांज रही थी। मैं बेकार बैठा था। किवाड़ों की कुंडी खटकी। बाहर जाकर देखा, हमारे दफ्तर का चपरासी मेरे लिए एक टाइप किया हुआ काग़ज़ लेकर आया है। आशंका से दिल धड़कने लगा। रोशनी के पास जाकर पढ़ा—

कमिश्नर साहब के आदेशानुसार श च्वान-शङ को नौकरी से बर्खास्त किया जाता है।

9 अक्तूबर **सचिवालय**

जब हम लोग अभी होस्टल में थे, तभी से इस बात की शंका थी। क्रीम-पाउडर वाले लड़के का कमिश्नर के लड़के की ताश की पार्टी में बहुत आना-जाना था। निश्चित था कि वह चुगली किए बिना नहीं मानेगा और कोई-न-कोई मुसीबत खड़ी कर देगा। ताज्जुब यही था कि बात इतने दिनों तक टली रही। मैं तो पहले से ही तैयार था। उपाय भी सोच लिया था, कहीं और नौकरी कर लूंगा। क्लर्क का काम तो मिल ही जाएगा। ट्यूशन भी पढ़ा सकता था। कठिन तो होगा, पर अनुवाद का काम भी कर लूंगा। 'स्वतन्त्रता प्रेमी' के सम्पादक से परिचय था। दो मास पहले उससे पत्र-व्यवहार भी किया था। फिर भी घबराहट ज़रूर हुई। च-चुन बहुत साहसी थी, पर इस समाचार से उसे भी आघात पहुंचा। उसकी घबराहट से मुझे बहुत दुख हुआ। वह कुछ दिनों से कमज़ोर भी होती जा रही थी, "क्या चिन्ता है," च-चुन ने ही कहा, "कोई दूसरा काम देख लो। ऐसी भी कौन-सी बात है? है न?…"

च-चुन की बात अधूरी ही रह गई। उसका गला भर आया। लगा, कोठरी में प्रकाश बहुत कम हो गया था। आदमी भी क्या अजीब चीज़ है? ज़रा-ज़रा सी बात से डर जाता है। कुछ देर हम ख़ामोश बैठे रहे, फिर बात

करने लगे। क्या करना होगा? निश्चय कर लिया कि जेब के पैसों को बहुत सम्भाल कर ख़र्च करेंगे। अख़बार में क्लर्क या अध्यापक की नौकरी के लिए विज्ञापन दे देंगे, 'स्वतंत्रता प्रेमी' के सम्पादक को भी एक पत्र लिख दिया जाए। उसे अपनी कठिनाई बताकर सहायता के लिए कोई अनुवाद का काम देने का अनुरोध करना ठीक होगा।

"यह अभी ही क्यों न शुरू कर दिया जाए।" मैं मेज़ पर जा बैठा। अचार, सिरके और तेल की बोतलें सरकाकर एक तरफ़ रख दीं। च-चुन ने टिमटिमाता लैम्प लाकर मेरे सामने धर दिया। मैंने अख़बार में देने के लिए एक विज्ञापन लिख डाला। फिर सोचने लगा, अनुवाद के लिए कौन-सी पुस्तक ठीक रहेगी। जब से घर बदला था, पुस्तकों की तरफ़ ध्यान ही नहीं गया। उन पर ख़ूब मिट्टी जमी थी। पत्र लिखने बैठ गया।

बहुत देर सोचना पड़ा, पत्र को किस प्रकार शुरू करूं। कुछ पंक्तियां लिखकर हाथ रुक गया। नज़र च-चुन की तरफ़ चली गई। लैम्प के हलके प्रकाश में उसका चेहरा बहुत डरा हुआ लगा। कभी कल्पना भी नहीं की थी कि इतनी निर्भय और साहसी लड़की मामूली-सी घटना से डर जाएगी। सच च-चुन कई दिनों से कमज़ोर होती जा रही थी। एक ही क्षण में इतना बदलाव नहीं आ सकता था। मन में बहुत बेचैनी हुई। कल्पना अपने निश्चिन्तता से भरे अतीत की तरफ़ दौड़ गई। आंखों के सामने पुराने होस्टल की गन्दी कोठरी आ गई। उस कोठरी को ठीक से देख भी नहीं पाया था कि ध्यान लैम्प के हलके प्रकाश में सामने आधे अधूरे की तरफ़ चला गया।

पत्र लिखने में काफ़ी समय लग गया। वह लम्बा भी काफ़ी हो गया। पत्र पूरा कर चुका, तो लगा कि बहुत थक गया हूं। पिछले दिनों में भी काफ़ी कमजोर हो गया था। पत्र और विज्ञापन को प्रातः डाक में डालने के लिए एक तरफ़ रख दिया। हम दोनों की आंखें मिलीं, तो सहसा शक्ति और साहस का अनुभव हुआ। दोनों को एक-दूसरे की शक्ति और धैर्य का पूरा भरोसा था। मन में आशा और धैर्य लिए दोनों नए भविष्य के लिए तैयार हो गए।

वास्तव में उस दुर्भाग्य की चोट की प्रतिक्रिया के रूप में हमारे अन्दर एक नई उमंग पैदा हो गई। दफ्तर की नौकरी को मैं जंगल से पकड़कर

पिंजरे में बन्द कर दिए गए पक्षी की तरह निभा रहा था। इस प्रकार बन्द किए गए पक्षी को मरने नहीं देने के लिए थोड़ा दाना डाल दिया जाता है, उसे पुष्ट रखने की चिंता तो नहीं ही जाती। पिंजरे की लगातार कैद में रहते उसके पंख उड़ सकने योग्य भी नहीं रह जाते। पिंजरे का द्वार कभी खुला रह जाए, तो भी वह उड़ नहीं पाता। अब मुझे पिंजरे के बाहर आने का अवसर मिला था। सोचा कि एक बार फिर मुक्त आकाश में अपने पंखों की शक्ति से उड़ूं, पर अभी मेरे पर बेकार नहीं हुए।

अख़बार में दिए गए विज्ञापन से तुरन्त नौकरी पा जाने की आशा नहीं थी। अनुवाद कर सकना भी इतना आसान नहीं था। आप एक चीज़ पढ़ते हैं, तो विश्वास होता है कि उसे समझ लिया, पर वही बात दूसरी भाषा में लिखते समय एक-एक शब्द पर कठिनाई होने लगती है। घंटों लगे रहिए, तो दो-एक पैरा कर पाएंगे, पर निश्चय कर लिया कि इस कार्य को जितनी सामर्थ्य होगी करूंगा। दो सप्ताह में ही मेरी उंगलियों के स्पर्श से शब्दकोश के पन्नों के किनारे काले पड़ गए, समझ लीजिए कितनी तत्परता से काम में लगा हुआ था। 'स्वतन्त्रता प्रेमी' के सम्पादक ने आश्वासन दिया कि उनकी पत्रिका अच्छे लेखों को आभार सहित स्वीकार करेगी।

मुश्किल यह थी कि बिना बाधा के काम कर सकने के लिए घर में कोई स्थान नहीं था। च-चुन में विचित्र बदलाव आ गया था। उसका सदा शान्त और सहनशील स्वभाव न जाने कहां चला गया था! कमरे में सब तरफ़ बर्तन और कपड़े फैले रहते, धुआं भरा रहता। वहां जमकर काम कर सकना सम्भव नहीं था, पर बुराई किसे देता? किराया नहीं दे सकता था, तो अच्छी जगह कहां मिल पाती? उस पर घर में पिल्ला और मुर्गियां (चूज़े अब मुर्गियां बन गए थे)! जिनकी वजह से दोनों परिवारों में रोज़ ही झगड़ा हो जाता।

खाने-पकाने का भी कोई अन्त नहीं था। च-चुन को उससे कभी फ़ुर्सत नहीं होती। मनुष्य खाने के लिए कमाता है और कमाने के लिए खाता है, पर पिल्ले और मुर्गियों के पेट भरने का भी सवाल था। च-चुन को पढ़ने-लिखने से कोई मतलब नहीं। लगता था, पिछला पढ़ा-लिखा सब भूल चुकी है। हर कभी खाने के लिए पुकार बैठती। उसे इतना भी ख्याल नहीं कि मेरी एकाग्रता में बाधा पड़ जाएगी, विचारों का क्रम टूट जाएगा। मैं कभी खीझ भी उठता या पुकार को अनसुना कर काम में लगा रहता। इस पर भी उसे ख्याल नहीं आता, खबर-खबर खाए चली जाती।

यह बात समझने में उसे सवा माह लग गया कि काम के समय खाने का आग्रह करके मेरे काम में बाधा डालना उचित नहीं। किसी तरह उसे यह समझा पाया। उसे बुरा भी लगा, पर चुप रह गई। जो भी हो, काम लगातार करते रहने से मेरी गति बढ़ गई। शीघ्र ही पचास हज़ार शब्दों के अनुवाद की पाण्डुलिपि पूरी कर दी। अनुवाद को मांजना शेष था। दो और छोटे लेख भी तैयार कर लिए। 'स्वतन्त्रता प्रेमी' को यह सब एक साथ भेज देने का विचार था। किसी तरह खाना मिलता रहे, यही चिन्ता थी। ठंडे और बासी की तो उतनी परवाह नहीं थी, कम-से-कम पेट भर सकने योग्य तो होना ही चाहिए। वैसे दिन भर बैठे-बैठे दिमागी काम में लगे रहने से भूख भी कम हो जाती है, फिर भी जो चावल मिलता, उससे पेट नहीं भर पाता था। चावल में से पिल्ले का हिस्सा भी निकालना जरूरी था। मांस तो कभी ही मिलता था, पर होने पर पिल्ले के लिए भी चाहिए, "देखो, बेचारा कितना कमज़ोर है," च-चुन करुणा से द्रवित स्वर में कह देती। "घर मालकिन देख लेती, तो हंसे बिना न रहती।" अपने ऊपर किसी का हंसना च-चुन नहीं सह सकती थी।

मैं जो कुछ जूठन छोड़ देता, वह सिर्फ़ मुर्गियों के ही काम आती। मुझे हक्सले की बात याद आ गई। ख़ूब समझ गया कि "संसार में मेरा स्थान" पिल्ले और मुर्गियों के बीच में है।

मेरे बहुत आग्रह और तर्क का फल यह हुआ कि मुर्गियों का उपयोग रसोई में होने लगा। दस-बारह दिन हम और हमारा पिल्ला भी उनका मज़ा पाते रहे। मुर्गियों में अधिक मांस क्या निकलता, कई दिनों से बेचारियों को बाजरे का दाना भी नाम को ही डाला जाता था। उसके बाद घर में शान्ति हो गई, पर मुर्गियों के बिछोह में च-चुन बड़ी उदास रहने लगी। उसे अब किसी बात में रुचि और उत्साह नहीं रहा। आदमी को बदलते कौन-सी देर लगती है!

पिल्ले को पालना भी कठिन हो गया था। नौकरी मिल जाने की सभी आशाएं ख़त्म होती जा रही थीं। पिल्ले के लिए एक निवाला चावल या रोटी बचा लेना कठिन हो रहा था। च-चुन बेचारी क्या दिखाकर पिल्ले को हाथ

उठाकर मांगने या दो टांगों पर खड़े हो जाने को कहती? जाड़ा आ गया था। कोठरी में आग के बिना रह सकना सम्भव नहीं था, पर अंगीठी के लिए क्या करते? पिल्ले की भूख को ना जाने क्या हो गया। उसे संतुष्ट कर हमारी क्षमता के बाहर था। उसे पाल सकना अब हमारे लिए संभव नहीं था। पिल्ले को मेले में ले जाकर बिक्री के लिए खड़ा कर देते, तो कुछ मिल ही जाता, पर हम में से किसी का भी ऐसा दिल नहीं था।

आखिर एक दिन पिल्ले की आंखों पर पट्टी बांधकर पश्चिमी दरवाज़े से शहर के परकोटे के बाहर ले गया और वहां छोड़ आया। लौट रहा था, तो पिल्ला मेरे पीछे दौड़कर आने लगा। अन्त में उसे एक गड्ढे में ढकेलकर पीछा छुड़ाया। गड्ढा गहरा नहीं था।

घर लौटकर अनुभव किया कि पहले की अपेक्षा शान्ति थी, पर च-चुन को देखकर हैरान रह गया। उसके चेहरे पर पीड़ा की ऐसी गहरी छाप कभी नहीं देखी थी। कारण पिल्ले का वियोग ही था, परन्तु इसमें इतनी गहरी पीड़ा की कौनसी बात थी? पिल्ले को गड्ढे में ढकेलकर पीछा छुड़ाने की बात उसे नहीं बताई थी। शाम तक च-चुन के भाव और व्यवहार में अजीब विरक्ति-सी समा गई थी।

"च-चुन, सच बताओ, तुम्हें क्या हो गया है?" पूछना ही पड़ा।

"क्या?" च-चुन ने मेरी तरफ़ आंख भी नहीं उठाई।

"ऐसा लगता है कि तुम्हें···।"

"कोई बात ही नहीं, कुछ भी नहीं है।"

सोचा कि च-चुन समझती है, मैं निर्दय हूं। जब मैं अकेला था, मुझे लोगों की खास परवाह नहीं रहती थी। मेरा काम अच्छी तरह चलता था। जबकि मुझे अपने परिवार के परिचितों से मिलने-जुलने में थोड़ी भी रुचि नहीं थी। घर बदलने के बाद बहुत से पुराने दोस्तों से भी सम्बन्ध टूट चुका था, फिर भी यदि मैं इस झंझट से छुटकारा पा जाता, तो मेरे लिए बीसियों रास्ते खुले हैं। यह सब परेशानियां उसी-के कारण हैं। पिल्ले को भी उसीकी वजह से हटाना पड़ा, पर च-चुन की भी कैसी अकल थी कि कुछ समझ नहीं पा रही थी।

च-चुन को स्थिति समझाने का प्रयत्न किया। उसने हां में ऐसे सिर हिलाया जैसे समझ रही हो, पर समझ लेने का कोई भाव उस पर नज़र नहीं

आया। या तो मेरी बात ही उसे समझ नहीं आई, या उस पर भरोसा नहीं हुआ।

सर्दी जोर पकड़ने लगी, उस पर च-चुन का ठंडा व्यवहार। उस दशा में निभाना असम्भव हो गया, परन्तु जाता भी कहां? च-चुन की उस शोक में डूबी विरक्ति से भागकर गली या पार्क में ही जा सकता था। वहां ठंडी हवा सनसनाते तीरों से शरीर को बेध देती। ठंडी हवा के कारण लौट आना पड़ता। आखिर शरण के लिए एक स्वर्ग मिल गया। मैं नगर के पुस्तकालय में जा बैठता।

पुस्तकालय में प्रवेश का शुल्क नहीं था। वाचनालय में दो अंगीठियां भी थीं। अंगीठियों में आग कम ही रहती, पर अंगीठियां सामने रहने से ही सहारा मिल जाता था। पुस्तकालय में पढ़ने लायक कुछ भी नहीं था। पुस्तकें थीं, बहुत पुरानी। नई पुस्तकें बिल्कुल नहीं थीं।

मैं पुस्तकालय पढ़ने के लिए नहीं जाता था। वहां बहुत कम लोग रहते थे। कभी-कभी दस-बारह तक हो जाते। सबकी अवस्था मेरे जैसी ही थी। पर्याप्त गर्म कपड़े किसी के पास नहीं थे। सर्दी से बचने के लिए पढ़ने का बहाना किए बैठे रहते। मुझे और क्या चाहिए था? सड़क और बाज़ार में परिचितों से सामना होने की आशंका रहती। मुझे जाड़े में ठिठुरता देखकर उनकी नज़रों में कैसी नफ़रतभरी उपेक्षा आ जाती? पुस्तकालय में छिपे बैठे रहकर ऐसे अवसर से बचा जा सकता था। मेरे परिचित लोग अपने घरों में, या मित्रों के यहां अंगीठियों के चारों ओर आग सुलगाए बैठे होंगे।

पुस्तकालय में पढ़ने लायक पुस्तकें नहीं थीं, तो क्या हुआ, चुपचाप बैठे सोचों में डूबे रहने की सुविधा तो थी। वहां मौन बैठे अतीत की याद आती रहती, सोचता कि इन छह मास में प्रेम के मोह में, अंधे प्रेम के मोह में फंसकर जीवन के सभी महत्त्वपूर्ण कामों से भटक गया हूं। सबसे पहले तो रोज़गार की तरफ़ ही ध्यान देना चाहिए। रोज़गार के आधार के बिना प्रेम करने का मतलब ही क्या है? आदमी पूरी तरह प्रयत्न करे, तो असफलता का कोई कारण नहीं। अभी तो मैं इतना कमज़ोर और असमर्थ नहीं हूं। हां, इस झमेले ने मुझे कुछ कमज़ोर अवश्य बना दिया है···

पुस्तकालय में बैठे हुए कल्पना में खो जाता। आंखों के सामने से पुस्तकों की अलमारियां और समीप बैठे पाठक विलीन हो जाते और क्षुब्ध

समुद्र की लहरों पर नावों में मछुआरे, खाइयों में शस्त्र उठाए सैनिक, मोटरों में जाते अधिकारी, सट्टा बाज़ार में व्यस्त सटोरिये, पर्वत पर बीहड़ जंगलों में छिपे वीर, विद्यार्थियों को पढ़ाते अध्यापक, रात्रि के अंधेरे में अवसर ढूंढ़ते लोग, अंधेरे में छिपे चोर आंखों के सामने घूमने लगते।···च-चुन कहीं बहुत दूर रह जाती। वह साहसी नहीं रही थी, उसे एक ही काम था, सिर झुकाए रसोई में जुटे रहना। पिल्ले के वियोग के आघात ने उसे जड़ बना दिया था। पर उसके शरीर में कोई कमी या बदलाव दिखाई नहीं देता था···

सर्दी बढ़ने लगी। अंगीठी में बाकी रह गए पत्थर के कोयले के दो-चार टुकड़े भी राख बन गए। पुस्तकालय बन्द होने का समय हो गया। अपने घर लौट जाने के अलावा और कोई रास्ता नहीं था। वहां च-चुन की गहरी विरक्ति का सामना करना पड़ता। पिछले कुछ दिनों में दो बार उसकी पुरानी स्फूर्ति का आभास थोड़ा दिखाई दिया था। उस बदलाव से मैं और भी खीज गया। एक दिन शाम के वक्त च-चुन के होंठों पर मुस्कराहट आ गई। उसने होस्टल की एक घटना याद दिला दी। उसकी आंखों में फिर वही शैशव की सरलता भर गई, पर उस सरलता के नीचे निरन्तर दहशत की छाया उसकी आंखों में तब भी मौजूद थी। मैं समझ गया कि च-चुन की विरक्ति की प्रतिक्रिया में मेरी उपेक्षा और उससे भी गहरी विरक्ति ने उसे आतंकित कर दिया है। कई बार च-चुन को कुछ तसल्ली दे सकने के लिए, बिना इच्छा के भी हंसने-बोलने का प्रयत्न किया, पर अपनी हंसी और अपने स्वर का बनावटीपन मेरे कानों को ही असह्य लगा। स्वयं पर बहुत ग्लानि अनुभव हुई। उसे सह सकना संभव नहीं था।

अनुमान है कि च-चुन यह परिस्थिति समझ गई थी। वह अपनी जड़ता दूर करने का प्रयत्न करने लगी। अपनी पीड़ा को वह दिल की गहराइयों में छिपाए रखना चाहती थी। फिर भी उसके चेहरे पर दहशत का भाव समय-समय पर झलक जाता था। मेरी आवश्यकताओं और भावनाओं के लिए वह बहुत अनुराग व्यक्त करने लगी।

कई बार सोचा कि च-चुन से स्पष्ट बात कर लेना उचित है, पर इतना साहस नहीं जुटा पाया। जब भी साहस बटोरकर तैयार होता, उसकी शैशव की सी सरल दृष्टि से परास्त हो जाता और मुस्करा देता। होठों पर

मुस्कराहट प्रकट करने की मजबूरी मन के भीतर अपने ही प्रति रोष में बदल जाती और मैं खुद पर बौखला उठता।

च-चुन फिर अपने पुराने तरीकों पर आ गई। वह प्रेम के जोश के शुरू के दिनों की शरारत दोहराने लगी। फिर वही प्रेम की परख, नाप-तौल के प्रश्न, हृदय की अनुभूतियों को पकड़ लेने के प्रयत्न। मुझे उसके प्रति अपने प्रेम का विश्वास दिलाने के लिए कितनी ही झूठी और बनावटी बातों का उपयोग करना पड़ता था। हृदय पर झूठ, छल और पाखंड का इतना बोझ आ जाता कि दम घुटने लगता। मन निराशा और ग्लानि से डूबने लगता। सोचता कि सच कह देने के लिए कितने साहस की जरूरत है। बुज़दिली से छल को स्वीकार करने वाला, छल के सामने सिर झुकाने वाला डरपोक कभी नया रास्ता खोजने की उम्मीद नहीं कर सकता। यही नहीं, ऐसे डरपोक का अस्तित्व ही मिट जाएगा।

च-चुन में फिर बदलाव आया। वह खिन्न हो गई। एक दिन सवेरे ही यह बदलाव शुरू हुआ। कम-से-कम मैंने उसी दिन महसूस किया। उस दिन भयंकर जाड़ा था। उसके नये व्यवहार पर मन-ही-मन खीजकर मुस्करा दिया। उसका निडर, उदार और समझदार बनना एक आडम्बर था। वास्तव में वह कुछ भी नहीं समझती थी, कुछ भी नहीं सीख सकी थी। पढ़ना उसने बिल्कुल छोड़ दिया था। उसे यह भी नहीं मालूम था कि जीवन के संघर्ष में सबसे पहला कर्तव्य रोज़गार की चिन्ता और उसके लिए प्रयत्न होना चाहिए। इस संघर्ष में पति पत्नी को कंधे से कंधा मिलाकर या अकेले ही कदम उठाना चाहिए। वह तो गुज़ारे के लिए किसी से चिपट कर रह जाना जानती थी, ताकि तैराक के गले का बोझ बन जाए और उसे डुबो दे और खुद भी डूब जाए।

अपने और च-चुन दोनों के कल्याण के लिए मुझे एक ही रास्ता दिखाई देता था। वह था कि दोनों अपना रास्ता अलग चुन लें। च-चुन को यह सम्बन्ध तोड़ देना चाहिए था। अचानक विचार आया, च-चुन की मौत हो जाए तो! अपने को बहुत लज्जा और ग्लानि अनुभव हुई। मैं कितना नीच हूं! अभी सुबह ही थी। च-चुन को ढंग से समझा सकने के लिए शाम तक बहुत समय था। हम दोनों अपनी नई राह बना सकेंगे, या नहीं, यह इसी फैसले पर निर्भर करता था।

विचार कर मैंने बात शुरू की। प्रसंग वहीं से उठाया कि हम दोनों का परिचय किस प्रकार हुआ था। कुछ साहित्य की चर्चा की, विदेशी लेखकों और उनकी पुस्तकों की बातें कहीं। इब्सन के नाटक 'गुड़िया का घर' और 'समुद्र की नारी' की चर्चा की। नोरा के साहस और दृढ़ निश्चय की सराहना की। पिछले साल होस्टल की गंदी कोठरी में बैठकर भी मैं यह सब चर्चा कर चुका था, पर अब मुझे अपनी बात का खोखलापन खुद खटक रहा था। मुझे लग रहा था कि कोई शरीर लड़का मुझे चिढ़ाने के लिए मेरी बातों को प्रतिध्वनित किए जा रहा है।

च-चुन गर्दन के संकेत से हां करती जा रही थी। वह चुप थी। मैंने अपनी बात संक्षेप में कह डाली। कह चुका, तो चारों तरफ़ गहरा सन्नाटा छा गया। उस शून्यता में मेरा स्वर भी डूब गया।

"ठीक है," च-चुन कुछ पल ख़ामोश रहकर बोली, "परन्तु च्वान शङ तुम आजकल बिल्कुल बदल गए हो। क्या बात है? सच-सच बताओ।"

च-चुन की बात से मुझे बड़ा धक्का लगा, पर किसी प्रकार अपने आपको संभाला। उसे अपने विचार और सुझाव बताए—जीवन को नए सिरे से शुरू करना आवश्यक है। बिल्कुल नए सिरे से नई परिस्थितियों में प्रयत्न करना चाहिए, वरना दोनों का जीवन एक साथ बर्बाद हो जाएगा।

अपना निश्चय स्पष्ट कर देने के लिए मैंने मजबूरी में कह दिया, "पुराने संस्कारों और व्यर्थ की भावुकता में कुछ नहीं रखा। तुम्हें साहस से आगे बढ़ना चाहिए। तुम स्वयं चाहती हो कि मैं सच-सच कह दूं। सच्चाई यही है कि हम लोगों को पाखंड और धोखे में नहीं पड़ना चाहिए। सच्चाई यही है कि अब मेरे मन में प्यार नहीं है। यह वास्तव में तुम्हारे लिए भी अच्छा है, तुम पर भी कोई बंधन नहीं। तुम बिना किसी अफ़सोस और संकोच के अपना रास्ता चुन सकोगी।"

आशंका थी कि च-चुन यह सुनकर न जाने क्या तूफ़ान मचा दे, पर वह ख़ामोश रही। उसका चेहरा बिल्कुल पीला पड़ गया, जैसे शरीर का सम्पूर्ण रक्त खिंच गया हो। पल-भर में वह सम्भल गई। चेहरे पर सुर्ख़ी लौट आई। आंखों में वही शैशव की सी सरलता थी। उसकी भोली दृष्टि उधर-उधर भटकने लगी, जैसे बच्चा भूख से बेचैन होकर मां को खोज रहा हो। देर तक शून्य में ही देखती रही, मुझसे नज़र नहीं मिलाई। लगता था,

डर गई है। उस समय च-चुन के पास, उसके सामने रहना मेरे लिए संभव नहीं था। अभी सुबह ही थी। शरीर को बेधती सनसनाती हवा की परवाह न कर मैं घर से निकल पड़ा और पुस्तकालय की ओर चला गया।

पुस्तकालय में 'स्वतन्त्रता प्रेमी' का अंक दिखाई दे गया। मेरे भेजे छोटे-छोटे निबन्ध प्रकाशित हो गए थे। मुझे एक साथ आश्चर्य और हर्ष का अहसास हुआ। जीवन में नई ताज़गी अनुभव हुई, "मेरे लिए बीसियों रास्ते खुले हैं," मन में आया, "अपनी हालत को बदलने का उपाय करना ही होगा।" पिछले कई महीनों में मित्रों से सम्पर्क तोड़ चुका था। उनसे मिलने गया, परन्तु एक-दो बार से अधिक किसी के यहां नहीं गया। उन लोगों के यहां कमरे गर्म रखने के लिए आग का इन्तजाम था, पर उनके यहां भी सर्दी से मेरी हड्डियां सिहर उठती थीं। रातें घर में गुजारना पड़ती थीं। वहां बर्फ़ की गुफा से भी अधिक सर्दी थी।

लगा कि बर्फ़ की बर्छियां दिल में बिंधी जा रही हैं। अवसाद की बर्फ़ सुन्न किए दे रही थी, "मेरे लिए बीसियों रास्ते खुले हैं," मन को विश्वास दिलाता, "मेरे पंखों में अभी शक्ति है, मैं उड़ सकने में समर्थ हूं।" अचानक मुझे ख्याल आया, च-चुन मर गई है। इस विचार से ग्लानि और शर्म में डूब गया। मैंने अपनी ही प्रताड़ना की—मैं कितना कमीना हूं!

पुस्तकालय में बैठा जीवन के नए रास्तों की कल्पना करने लगता—च-चुन साहस से वास्तविकता का सामना करने के लिए तैयार है। वह हमारी ठंडी कोठरी को छोड़कर चली गई है। वह चली गई है और उसे मेरे ऊपर कोई गुस्सा या उलाहना भी नहीं है। मेरे दिल और दिमाग़ का बोझ उतर गया। लगा कि मैं निर्बाध और निर्द्वन्द्व होकर असीम नीले आकाश में हलके बादल की तरह उड़ा जा रहा हूं, ऊंचे पहाड़ों, महासागरों, गगनचुम्बी महलों, युद्ध-क्षेत्रों, कारों की पंक्तियों, सट्टे के बाज़ारों, रईसों की हवेलियों, जगमगाते शहरों के ऊपर से उड़ा जा रहा हूं और घटाटोप अंधेरी रात है। मुझे लगा कि मैं जीवन के नए मोड़ पर आ गया हूं। यहां से नया जीवन शुरू होने वाला है।

बीजिंग के हड्डियां कंपा देने वाले जाड़े के मौसम में हम उसी घर में रहे। हमारा साथ भी विचित्र था, जैसे दो लखौरियां निर्दय शरीर बच्चों के हाथ पड़ गई हों, बच्चे दोनों लखौरियों को धागे से एक साथ बांधकर, उड़ा

कर, उन्हें सता कर अपना खेल खेल रहे हों। जाड़े के अन्त में प्राण तो बचे थे, पर दोनों के शरीर टूटकर निढाल हो गए थे। लगता था कि प्राण कुछ ही समय के मेहमान हैं।

'स्वतंत्रता प्रेमी' के सम्पादक को तीन पत्र लिख देने के बाद उत्तर आया। लिफ़ाफ़े में तीस और बीस सेंट के दो कूपन निकले। इन कूपनों से उनके यहां से प्रकाशित कोई पुस्तक या बदले में कोई दूसरी पुस्तक ही खरीदी जा सकती थी। पारिश्रमिक के लिए भेजे पत्रों पर नौ सेंट ख़र्च कर। इसके लिए एक दिन भूखे रहना पड़ा था। उसका यह नतीजा निकला! क्या कर सकता था? मन को ही समझाया, जिस चीज़ की शंका थी, वही सामने आ गई।

जाड़ा खत्म हो रहा था। वसंत के दिन आ रहे थे। ठंडी हवा अब उतनी तीखी नहीं थी। दिन में अक्सर बाहर ही घूमता रहता। शाम के वक़्त लौटता। एक दिन शाम का अंधेरा गहरा हो चुका था। रोज की तरह ढीले कदमों से घर लौट रहा था। दरवाज़ा दिखाई दिया, तो रोज़ की तरह कदम और भी ढीले पड़ गए। फिर भी घर में पहुंच ही गया। भीतर अंधेरा था, लैम्प जला लेना ज़रूरी था। माचिस उठाकर तीली जलाई। उजाला होने पर कमरा और अधिक सूना और वीरान होकर काटने लगा। पहले मैं कुछ भी नहीं समझ सका और खड़ा ही रहा। खिड़की से घर मालकिन की आवाज़ सुनाई दी, "आज च-चुन का बाप आया था," वह आगे बोली, "उसे साथ ले गया।"

मेरा दिमाग़ जैसे भारी पत्थर की चोट से सुन्न हो गया। कई क्षण निश्चल, अवाक् खड़ा रहा, यह क्या हो गया? "चली गई?" किसी तरह पूछा।

"हां।"

"कुछ···कुछ कहा था?"

"नहीं, बस यही, तुम आओ तो कह दूं कि चली गई।"

कानों पर विश्वास नहीं हो रहा था, पर आंखों के सामने कमरा ख़ाली और सुनसान था। आंखें फाड़कर कमरे में चारों ओर ढूंढने लगा। च-चुन कहां है, कहां छिपी है? बेरंग, टूटी-फूटी मेज़, कुर्सी और खाट थी। उनके पीछे किसी को छिपा देने या छिपे रहने के लिए स्थान नहीं था। सोचा शायद

कुछ लिखकर छोड़ गई हो। चारों ओर नज़रें दौड़ाई, कुछ नहीं था। मेज़ पर नमक का डिब्बा, सूखी मिर्चे, थोड़ा आटा और आधी पत्तागोभी एक साथ रखे हुए थे। वहीं चालीस-पचास तांबे के सिक्के भी रखे थे। संसार में यही हमारी संपत्ति थी। इसे वह सावधानी से मेरे लिए छोड़ गई थी। बिना बोले इशारे से कह गई थी—जब तक सम्भव हो, अपना गुज़ारा कर लूं, अपने प्राण बचा लूं।

कमरे में मेरा दम घुट रहा था। सांस लेने के लिए बाहर आंगन में जा खड़ा हुआ। चारों ओर अंधेरा था। बीच के कमरे की खिड़की में रोशनी थी। घर मालिक और मालकिन अपने बच्चे को हंसाने के लिए गुदगुदा रहे थे। मन कुछ हलका हुआ, तो सोचा कि क्या करूं, कल्पना उड़ान भरने लगी—ऊंचे पर्वत, दलदली मैदान, सट्टे का बाज़ार, चकाचौंध प्रकाश में दावतें, खंदकें, घटाटोप अंधेरा, पैनी कटार का वार, दबे पैरों की आहट।

मस्तिष्क थोड़ा साफ़ हुआ और सोचने लगा—यहां से चलूं, पर सफ़र के लिए ख़र्च कहां···फिर एक गहरी सांस ली।

कोठरी में अकेला आंखें बंद किए खाट पर पड़ा था। अर्धचेतन दशा में आगे के जीवन की रूपरेखा की कल्पना कर ली, पर आधी रात होते ही वह ठहर नहीं सकी। कोठरी में फैले घटाटोप अंधेरे में पकवानों का एक बड़ा-सा ढेर दिखाई देने लगा। च-चुन का रक्तहीन चेहरा, शैशव की-सी भोली-भाली आंखों में सहमी हुई याचना का भाव लिए मेरी आंखों के सामने आ गया। अपने को सम्भालकर उठने का प्रयत्न किया—सब कुछ मिट गया।

ग्लानि का वह बोझ असह्य था। वह 'सच' कहकर च-चुन को चोट पहुंचाने की क्या जल्दबाज़ी थी? कुछ दिन और धैर्य नहीं रख सकता था? अब उस बेचारी के लिए जीवन में क्या सहारा है? केवल पिता का निर्दय व्यवहार। वह निर्दयी अपने बच्चों के साथ कसाई का जैसा व्यवहार करता है। दूसरे लोगों से च-चुन सख्त उपेक्षा के अतिरिक्त और क्या पाएगी? उसके मायूस जीवन का बोझ, जिसमें कोई भी अपना नहीं, कितना असह्य होगा! संसार की निर्मम उपेक्षा के बियाबान में अकेले भटकते रहना! इतना भी भरोसा नहीं कि मर जाने पर कोई लाश पर कफ़न भी डालेगा।

बेचारी च-चुन से वह 'सच' मैंने क्यों कह डाला? एक समय हम दोनों

में कितना प्रेम था! उस बेचारी का दिल न तोड़ने के लिए क्या मैं इतना-सा झूठ भी नहीं बनाए रख सकता था? यदि सच की इतनी महिमा है, तो उस 'सच' ने निरीह च-चुन के जीवन को इतना कंगाल क्यों बना दिया? मानता हूं, झूठ निस्सार होता है। वह खोखली छलना होता है, पर वह झूठ च-चुन के सिर पर निराशा की छत को गिर जाने से तो बचाए था।

मेरा ख्याल था कि च-चुन से वह 'सच' कह दूंगा, तो वह झूठे बंधन से मुक्त होकर साहस से अपना मार्ग बना सकने के लिए स्वतंत्र हो जाएगी, ठीक उसी तरह, जैसे उसने मुझसे प्रेम कर एक नए जीवन की शुरुआत की थी, पर वह कितनी बड़ी भूल थी! वास्तव में च-चुन की उस निर्भयता और साहस का स्रोत तो प्रेम ही था।

मैं झूठ और छलना का बोझ उठा सकने में असमर्थ था, इसलिए मैंने उसके सिर पर 'सच' का बोझ लाद दिया। मुझसे प्रेम करने के दंड स्वरूप उस 'सच' का बोझ च-चुन पर आ पड़ा था। अब वह जीवन के अंत तक उस बोझ के नीचे पिसती रहेगी, उस उपेक्षा भरे निर्मम संसार के बियाबान में अकेली भटकती रहेगी।

मैंने च-चुन के मर जाने तक की कल्पना कर ली थी, मैं कितना कमीना हूं! मुझे इसका दंड मिलना चाहिए, समाज से मेरा बहिष्कार हो जाना चाहिए। जिनके हाथ में सामर्थ्य है, वे मुझे दंड दें, चाहे स्वयं ईमानदार हों या न हों। च-चुन ने तो मेरी मृत्यु की कल्पना कभी नहीं की थी। वह सदा मेरे कल्याण की ही कामना करती रही।

चीचाओ गली के घर का सूनापन मुझे काटने को दौड़ता। उस घर में रह सकना मेरे लिए सम्भव नहीं था। ख्याल था कि यदि इस स्थिति से भाग सकूं, तो च-चुन के अभाव के कांटे की पीड़ा से बच सकूंगा। कल्पना में उसे अपने समीप अनुभव कर सकूंगा। कम-से-कम यही कल्पना कर सकूंगा कि वह इसी शहर में है। फिर किसी दिन हम दोनों का उसी प्रकार मिलन हो सकता है, जैसे होस्टल में रहते समय हो गया था।

नौकरी के लिए दी हुई मेरी दरखास्तों और पत्रों का कोई भी उत्तर नहीं आया। अब एक ही सहारा था। मेरे चाचा के एक पुराने सहपाठी थे, बहुत बड़े विद्वान। उनका बहुत नाम और प्रभाव था। कई बरस से उनके यहां नहीं गया था। सोचा कि जाकर उनसे ही प्रार्थना करूं।

चौकीदार ने सीधे मुंह बात नहीं की, मेरे कपड़ों की अवस्था ही ऐसी थी। बहुत कठिनाई से घर के भीतर जा पाया। उन्होंने मुझे पहचान लिया, पर बोले बहुत रूखेपन से। हम लोगों के बारे में उन्हें सब कुछ मालूम था।

"यहां तो जगह मिल सकना मुश्किल है।" उन्होंने कह दिया। मैंने अनुरोध किया, "आपकी बहुत कृपा होगी, कोई भी काम दिला दीजिए।" उत्तर मिला, "बहुत मुश्किल है। फिर तुम रहोगे कहां?" उन्होंने पूछ लिया। "तुम्हें तो मालूम ही होगा, तुम्हारी वह च-चुन मर चुकी है।"

मैं अवाक् रह गया, "सच? आपने कैसे सुना?" अपने आपको संभालकर मैंने पूछा।

बुजुर्ग को हंसी आ गई, "शक की बात क्या है, वह लड़की हमारे नौकर वाङ शङ के गांव की ही तो थी!"

"कैसे मर गई?"

"कौन जाने। इतना मालूम है कि मर गई।"

मालूम नहीं उनके यहां से घर तक कैसे पहुंचा। च-चुन के बारे में वह आखिर झूठी बात क्यों कहते। च-चुन सदा के लिए चली गई थी। अब गत साल की तरह वह फिर कभी नहीं आएगी। जबकि वह अपने सूने-निराश जीवन का बोझ उठाए संसार की उपेक्षा के वीराने में भटकने के लिए भी तैयार थी, पर क्या यह उसके लिए सम्भव होता? भाग्य ने उसे कठोर सच का बोझ उठा मर जाने का अभिशाप दिया था, प्यार खोकर मरने का!

घर पर रह सकना सम्भव नहीं था, पर कहां जाता? सभी ओर अभाव और शून्य था, केवल मृत्यु का सन्नाटा। कल्पना में एक ही बात समा रही थी, प्रेम में ठुकराया व्यक्ति मृत्यु के समय कैसी निराशा का अंधकार देखता होगा। ऐसी अवस्था में मरने वालों की दर्द भरी चीखों से मेरा दिल दहलने लगता।

एक दबी हुई आशा अब भी बनी हुई थी कि जीवन में कोई नया प्रकाश या मार्ग दिखाई दे जाएगा। क्या सम्भव होगा, इसकी कोई स्पष्ट कल्पना नहीं थी। मृत्यु के सन्नाटे में दिन पर दिन बीतते चले जा रहे थे।

घर के बाहर बहुत कम जा पाता था। कोठरी के उस शून्य में ही बैठा या पड़ा रहता। प्रतीक्षा थी कि मुझे घेरे मृत्यु के सन्नाटे में मेरी चेतना भी डूब जाएगी। कभी तो ऐसा जान पड़ता कि यह सन्नाटा स्वयं सहम रहा है,

और थककर, डरकर भाग जाएगा। फिर लगता कि दूर, बहुत दूर अदृश्य में अनजानी-अपरिचित आशा का कुछ आभास मिल रहा है।

एक दिन प्रातः बहुत ही घने बादल छाए हुए थे। सूरज निकलने पर भी अंधेरा बना हुआ था। हवा भी थकी सी लगती थी। मैं आंखें बंद किए पड़ा था। कमरे में छोटे-छोटे पैरों की आहट और सांस लेने की आवाज़ सुनाई दी। आंखें खोलनी पड़ीं। कमरे में चारों ओर नज़र दौड़ाई। कुछ दिखाई नहीं दिया। अधिक ध्यान से फर्श पर देखा, एक छोटा-सा जीव, दुबला-पतला, कंकालजैसा, धूल से भरा, कमरे में चक्कर लगा रहा था।

आंखें फैलाकर ध्यान से देखा, तो सांस रुक गई। खाट से कूद पड़ा। पिल्ला लौट आया था। चीचाओ गली का घर छोड़ देना पड़ा। घर मालिक और उसकी नौकरानी की नाराजगी के कारण ही नहीं, बल्कि पिल्ले के कारण भी जगह बदल लेनी पड़ी। बड़ी भारी समस्या थी, जाऊं, तो कहां? यूं तो जाने के लिए बीसियों जगहें हो सकती थीं। कभी ऐसा लगता कि आंखों के सामने कई रास्ते खुले हैं पर यह पता नहीं था कि पहला कदम कैसे उठाया जाए।

बहुत सोच कर और सभी बातों का ख्याल करके मैं इस परिणाम पर पहुंचा कि मेरे लिए होस्टल ही सही स्थान है। अब फिर होस्टल की उसी बेरौनक कोठरी में आ गया हूं, वही काठ का तख्त, खिड़की के बाहर वही लोकस्ट का आधा सूखा पेड़ और विस्तारिया की वही पुरानी बेल मौजूद है, पर अब स्नेह और जीवन, सन्तोष और आशा की किरण लुप्त हो गई है। अब केवल अभाव और बेमतलब जिन्दगी है। यह मैंने 'सच' के मूल्य के रूप में पाया है।

निर्वाह के लिए कई उपाय सम्भव हैं। जिन्दा हूं, तो कोई उपाय तो करना ही होगा। यही निश्चय नहीं कर पा रहा हूं कि क्या, कैसे, कहां से आरम्भ करूं। कभी तो आगे जीवन का मार्ग बहुत बड़े अजगर की भांति बल खाता हुआ पनी की ओर झपटता दिखाई देने लगता है। उस ओर देखता हूं, तो सोचने लगता हूं कि मार्ग स्वयं ही सामने आ रहा है। पर सहसा सब कुछ अन्धकार में विलीन हो जाता है।

जाड़े का मौसम तो खत्म हो रहा है, परन्तु वसंत के आरम्भ की ये रातें अब भी उतनी ही लम्बी हैं। बेकार बैठे-बैठे बहुत देर से सोच रहा हूं। याद आया सुबह सड़क पर से किसी आदमी का जनाजा गुजरा था। जनाजे के आगे-आगे कई लोग आदमियों और घोड़ों की कागज से बनी मूर्तियां लेकर चल रहे थे। जनाजे के पीछे विलाप करते लोगों का झुंड था। समझ पाना कठिन था कि लोग आलाप कर रहे हैं या विलाप। कैसे चतुर लोग हैं, सहज में सब कुछ निपटा दिया!

ख्याल आ गया च-चुन मर गई है, जैसे उसका जनाजा मेरे सामने से गुजर रहा हो। बेचारी सूने जीवन का भारी बोझ उठाए अनन्त अंधेरे, डरावने मार्ग पर अकेली चली जा रही थी। लोगों के कठोर तिरस्कार ने उसे निगल लिया।

मृत्यु के पश्चात् यदि भूत-प्रेतों या नरक का अस्तित्व होता, तो भी अच्छा था। नरक के रौरव चीत्कारों के थपेड़ों में भी मैं च-चुन को ढूंढ लेता। अपना खेद और अवसाद उसके सामने स्वीकार कर उससे माफी मांग लेता। यदि च-चुन को न खोज पाता तो नरक की विषैली ज्वालाओं में मेरा खेद और अवसाद भस्म हो जाता।

नर्क की ज्वालाओं में और भंवरों में च-चुन को अपनी बांहों में भरकर मैं उससे क्षमा-याचना करता, उसका दुख मिटा देने का यत्न करता। मेरे हृदय का अभाव और शून्य मृत्यु के अभाव और शून्य से भी अधिक गहन है। शुरू वसन्त की इस रात का अन्त कब होगा। शरीर में प्राण हैं, तो जीवन का आरम्भ फिर करना ही होगा, कदम उठाना ही होगा। पहला कदम यह है कि च-चुन की स्मृति में और अपने आत्मसंतोष के लिए मैं उसके प्रति अपने मन के खेद और अवसाद को लिख डालूं। चीखने के सिवाय मैं कर ही क्या सकता हूं? उसके शोक में मेरे चीख़ने का विलाप एक आलाप के समान मेरे कानों में गूंज रहा है। मैं उसे भूल जाना चाहता हूं। यातना से बचने को च-चुन के लिए बनाई विस्मृति की समाधि को अपने स्मृति पटल से मिटा देना चाहता हूं। जीवन के लिए नया कदम उठाना अनिवार्य है। उस 'सच' को अपने घायल हृदय की गहराई में छिपाकर चुपचाप कदम बढ़ाना होगा। विस्मृति और आत्मप्रवंचना ही मेरा मार्गदर्शन करेंगी।

•••

लाओ श

रिक्शावाला

चीन के महान् उपन्यासकार लाओ श का सर्वाधिक प्रसिद्ध और लोकप्रिय उपन्यास है 'रिक्शावाला'।

इसमें 'रिक्शावाला' छोटी आयु में ही हाथ रिक्शा खींचने और सवारियों को ढोने पर विवश है। वह चाहता भी है कि पैसे एकत्र करे और खुद अपना एक रिक्शा ख़रीद ले; पर बार-बार उस पर विपत्तियां आती हैं और वह अपने रिक्शे से वंचित रह जाता है। एक बार रिक्शा पा भी लेता है; पर फ़ौजी पलटन की तानाशाही के कारण सब कुछ छिन जाता है, फिर भी न वह हारता है, न निराश होता है।

ऑस्कर वाइल्ड

अपनी छाया

पवित्र सौन्दर्य का अनोखा प्रतीक था डोरियन ग्रे। ऐसी दिव्य सुन्दरता, जिसकी व्याख्या भी संभव नहीं। उसके रूप-लावण्य से प्रभावित चित्रकार बासिल उसका एक चित्र बनाता है और शुरू होता है डोरियन ग्रे का द्वन्द्व, जो मनुष्य के अन्दर-बाहर के संबंधों को उजागर करता है।

अंग्रेज़ी साहित्य में शेक्सपियर के बाद सबसे बड़े रचनाकार के उपन्यास 'अपनी छाया' में बहुत रोचक और मार्मिक ढंग से बताया गया है कि मनुष्य अपने स्वार्थों के कारण यह नहीं देख पाता कि वह कहां ग़लत है।

एडगर एलन पो

कूप और काल

'कूप और काल' में अमेरिका के महान् कहानीकार एडगर एलन पो की श्रेष्ठ कहानियां संकलित की गई हैं।

एडगर एलन पो अपनी कहानियों में रहस्य का अद्भुत ताना-बाना बुनते हैं। कल्पना के तो वह ऐसे कुशल चितेरे हैं कि उनकी तुलना किसी दूसरे से की ही नहीं जा सकती। लगभग डेढ़ सौ वर्ष पूर्व लिखी गई उनकी कहानियां आज भी वैसी ही ताज़ादम हैं।

लू शुन पागल की डायरी



□ चीन की आधुनिक सांस्कृतिक क्रान्ति के प्रमुख नायक, महान् विचारक और नए चीनी साहित्य के जनक लू शुन की कथा-कृति 'पागल की डायरी' मई, 1918 में छपी और विश्व कथा-साहित्य की अमर रचना बन गई। वह दुनिया के कथा गुरु गोर्की और प्रेमचंद के समकक्ष माने जाते हैं।

□ 'पागल की डायरी' में लू शुन का एक अद्भुत लघु उपन्यास 'आ Q की सच्ची कहानी' भी दिया गया है, जो अमीर और ग़रीब, क्रान्तिकारी और प्रतिगामी चरित्र के लोगों का बेबाकी से पर्दाफ़ाश करता है और कथा-भूमि इतनी मर्मस्पर्शी है कि पाठक भीतर तक उद्वेलित हुए बिना नहीं रह सकता। इसके साथ ही 'गांव का आपेरा', 'नए साल की बलि', 'जनद्वेषी' तथा 'अतीत का अवसाद' कहानियों का चयन इस संकलन की गरिमा और श्रेष्ठता को बढ़ाता है। इसकी सभी रचनाएं मानवीय करुणा और चेतना की संवाहक हैं।

सन् 1881 में चीन में जन्मे लू शुन बहुत ग़रीब घर से थे। अपने बल-बूते पर पढ़े। क़स्बे के स्कूल से उठकर यूनीवर्सिटी के प्रोफ़ेसर और फिर डीन बने। वह चीनी भाषा पढ़ाते थे और साहित्य के अलम्बरदार थे। 'ऑल चाइना लीग ऑफ लेफ़्टविंग राईटर्स' जैसी संस्था के सर्वेसर्वा रहे। दुनिया में सर्वाधिक प्रसिद्ध चीनी साहित्यकार लू शुन का निधन सन् 1936 में चेकियांग प्रांत में हो गया।

हिन्द पॉकेट बुक्स

ISBN 81-216-0783-3
AHW HPB HINDI SERIES
Rs. 75/-